पहला शूद्र

(प्रथम खण्ड)

सुधीर मौर्य

रीड पब्लिकेशन

सुधीर मौर्य : 2

सर्वाधिकार सुरक्षित है - इस पुस्तक के किसी भी अंश अथवा सामग्री को बिना अनुमति के पुनर्प्रकाशित या प्रसारित नहीं किया जा सकता। प्रकाशक से बगैर किसी लिखित अनुमति प्राप्त किये, इसकी नकल बनाना, फोटोकॉपी या अन्य सूचना संबंधी माध्यमों से प्रकाशित करना कानूनन अपराध है।

ISBN : 978-81-908664-3-9
कॉपीराइट : लेखकाधीन
संस्करण : प्रथम 2017
मूल्य : 130 रूपये

प्रकाशक : रीड पब्लिकेशन
मुद्रक : आज़ाद ऑफसेट, इलाहाबाद

Published by : Read Publication
Head Office : 202 Mahaveer vihar, behind GCC club, Hot Case, Meera Road, East Thane, Mumbai - 401107 (Maharashtra)
Reginal Office : 1L/3J Tilak nagar, Allahpur, Allahabad - 211006
Email : readpublication@gmail.com , readpublication@hotmail.com
Mobile : 09455400973, 09580399729, 09452313306, 09453730608

Title : Pahla Shudra
Author : Sudheer Maurya
Cover & Text Design : Dinesh Kushwaha & Creative Team

लेखक सुधीर मौर्य का संक्षिप्त परिचय

जन्म : 01/11/1979 स्थान : कानपुर (उ०प्र०)
माता : श्रीमती शकुंतला मौर्य
पिता : स्व० श्री राम सेवक मौर्य
पत्नी : श्रीमती शीलू मौर्य
शिक्षा : अभियांत्रिकी में डिप्लोमा, इतिहास और दर्शन से स्नातक,
प्रबंधन में पोस्ट डिप्लोमा
सम्प्रति : इंजीनियर एवम् स्वतंत्र लेखन
कृतियां : उपन्यास - 'गली एक कानपुर की', 'अमलताश के फूल',
'माई लास्ट अफेअर', 'वर्जित', 'मन्नत का तारा'.
कहानी संग्रह - 'अधूरे पंख', 'कर्ज़ और अन्य कहानियां', 'एंजल ज़िया'.
अन्य - 'हो न हो' (नज़्म संग्रह), 'किस्से संकट प्रसाद के' (व्यंग उपन्यास),
'देवलदेवी : एक संघर्ष गाथा' (ऐतिहासिक उपन्यास),
पहला शूद्र (वेदकालीन उपन्यास).

पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशन :

खूबसूरत अंदाज़, अभिनव प्रयास, सोच विचार, युगवंशिका, कादम्बनी, बुद्धभूमि, अविराम, लोकसत्य, गांडीव, उत्कर्ष मेल, जनहित इंडिया, शिवम, अखिल विश्व पत्रिका, रूबरू दुनिया, विश्वगाथा, सत्य दर्शन, डिफेंडर, झेलम एक्सप्रेस, जय विजय, परिंदे, मृग मारीचिका, प्राची, मुक्ता इत्यादि

वेब प्रकाशन :

गद्यकोश, स्वर्गविभा, काव्यांचल, इंस्टेंट खबर, बोलो जी, भड़ास, हिमधारा, जनहित इंडिया, परफेक्ट खबर, वटवृक्ष, देशबंधु, अखिल विश्व पत्रिका, प्रवक्ता, नाव्या, प्रवासी दुनिया, रचनाकार, अपनी माटी।

आभार

आभार उन सारे क्षणों को, जो मेरे अंतर्मन में विचरते रहे, ये प्रश्न लिए कि ये आर्यवर्त **आर्यवर्त** कैसे बना? और उन सप्त-सैंधव के कछारों को, जिनमें न जाने कितनी और गाथाएं विलुप्त है. जिनका अन्वेषण होना अभी बाकी है।

आभार सिंधु घाटी की सभ्यता को, जिसने हमें आदिम युग में ही सभ्य होना सिखाया।

आभार मेरे उन मित्रों का जिन्होंने मुझसे ये आशा रखी कि मैं उस महान दिवोदास पुत्र सुदास का जीवन चरित्र लिखूं जो आर्यवर्त का सबसे बड़ा महानायक था।

आभार मेरे गांव के उन शूद्र बस्तियों का, जिन्हें देखकर मैंने हर क्षण यही सोचा कि उनका जन्म भी बाकी सब की तरह अपनी माँ के पवित्र गर्भ से हुआ न कि ब्रह्मा के पैरों से।

आभार मेरी माता का जिन्होंने मेरे स्वर्गीय पिता की वो कथा सुनाई जिसमें वे गांव के एक दबंग के अत्याचार का सफलतापूर्वक विरोध किया था।

आभार उस सर्वशक्तिमान ईश्वर का जिसने सुदास का जीवन चरित्र मेरे द्वारा लिखवाया।

समर्पण

उस महान सुदास के चरणों में
जो आर्यवर्त में राम से अधिक यश के अधिकारी थे।

सुधीर मौर्य : 6

पहला शूद्र

(प्रथम खण्ड)

एक भीषण विस्फोट हुआ और तीव्र ध्वनि के साथ पाषाण खण्ड हवा में कपड़े की गेंद की तरह उछल पड़े। गहरे भूरे धुएं से वातावरण कसैला और अन्धकारमय हो गया। इस धुन्ध से निर्मित अन्धकार में हर-हर की तीव्र ध्वनि एवं वेग के साथ जल नगर की सीमा में प्रवेश करने लगा।

कुछ ही समय में समस्त ग्रामवासियों में चीख पुकार मच उठी ... इस चीख-पुकार के मध्य में कोई प्रौढ़ कंठ फाड़कर चिल्लाया, ''वो देखो! इन्द्रजनों ने तटबन्ध ध्वस्त कर दिया।''

उस प्रौढ़ के कंठ से कोई अन्य स्वर निकलता, उससे पूर्व ही जल का भीषण प्रवाह उसे अपने साथ बहा ले गया।

अभी ये पाषाण के खण्ड के बगूले उठ ही रहे थे कि एक दूसरा विस्फोट हुआ और उसके पश्चात तीसरा, चौथा और पांचवा भी। और इस प्रकार आर्यों के सहायक इन्द्र ने मेघवृत्र के बनाये पांचों बांधों का विध्वंस कर दिया।

***

ये बांध सप्त-सैंधव के महाराज मेघवृत्र ने अपनी प्रजा की उन्नति और उनके सुखमय जीवन के लिये बनवाये थे। इन बांधों से एकत्र हुए जल का उपयोग कृषि एवं अन्य कार्यों हेतु किया जाता था। सप्त-सैंधव के निवासी इनकी सहायता से वर्षा ऋतु के बिना ही सरलता से कृषि कार्य सम्पादित कर लेते थे। इस प्रकार उनके पास प्रचुर मात्रा में अनाज और पशुधन था। और वे हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो से अति विकसित पुरों में निवास करते थे।

सप्त-सैंधव में आर्यों के प्रवेश करते ही उनका यहां के मूल निवासी पणियों एवम् किरातों के साथ टकराव आरम्भ हुआ। किरातों के पुर पर्वतों पर स्थिति थे अतः आर्यों का पहला टकराव पणियों के साथ हुआ। आर्यजन इन्हें 'असुर' कहकर सम्बोधित करते थे क्योंकि आर्यों की सहायक जाति जिनका नायक इन्द्र था। वे सुर कहलाते थे।

आमने-सामने के युद्ध में इन्द्र जब अपने तमाम प्रयासों के पश्चात भी सफल न हो सका तो उसने असुरों की आपसी फूट का लाभ उठाने का प्रयास किया। इस कड़ी में उसने मेघवृत्र के मातृजन त्वष्टा को प्रलोभन देकर अपनी ओर मिला लिया और उसके पुत्र त्रिसिरा विश्वरूप को अपना पुरोहित घोषित कर दिया।

इन्द्र त्रिसिरा विश्वरूप से व्रज नामक उस अस्त्र का निर्माण करवाना चाहता था, जिसके विस्फोट से पंच नदियों में बने उन तटबंधों को ध्वस्त किया जा सके, जो मेघवृत्र की आर्थिक उन्नति के कारण थे। इन्द्र भी जल सम्बन्धी विज्ञान का ज्ञाता था और वो जानता था कि बांधों को यूँ अचानक तोड़ दिये जाने से हुए जलप्लावन से हड़प्पा पुर की सैनिक क्षमता समाप्त हो जायेगी और जब इस जल प्लावन की विनाश लीला से वहां भगदड़ मचेगी तो वो और उसके जन सरलता से दासों या असुरों का विनाश कर देंगे।

पहले तो त्रिसिरा विश्वरूप ऐसा अस्त्र बनाने को सहमत हो गया जिसके विस्फोट से तटबन्धों को विध्वंस किया जा सके, परन्तु कुछ समय पश्चात उसे अपने इस निर्णय पर ये सोचकर ग्लानि हुई कि उसके इस कृत्य से उसके अपने ही बंधु-बांधवों का विनाश होगा और मानव सभ्यता से हड़प्पा पुरों का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा।

जब त्रिसिरा विश्वरूप ने इन्द्र से ऐसे किसी अस्त्र का निर्माण करने से मना किया जिसके प्रभाव से फलती-फूलती सभ्यता का विनाश हो जाये तो क्रोधित होकर इन्द्र से उसे बन्दी बना लिया। इन्द्र तो पहले से ही त्वष्टा और त्रिसिरा विश्वरूप को पसंद नहीं करता था। उसने तो बस अपने कार्य सिद्धि के लिए इनसे मित्रता की थी। किंतु जब उसका कार्य उसकी कपट पूर्ण मित्रता से पूर्ण नहीं हुआ तो उसने दूसरे मार्ग का अनुसरण किया।

त्रिसिरा विश्वरूप को बन्दी बना लेने के पश्चात उसने त्वष्टा से कहा कि वो उस विनाशक शस्त्र का निर्माण करे जिससे पंच नदियों पर मेघवृत्र द्वारा निर्मित तटबन्धों को तोड़ा जा सके और यदि उसने ऐसे अस्त्र के निर्माण से मना किया तो उसके पुत्र त्रिसिरा विश्वरूप का सिर फोड़कर हत्या कर दी जायेगी।

पुत्र मोह में विवश होकर त्वष्टा ने वज्र नामक शस्त्र का निर्माण किया। जिसके प्रहार से इन्द्र ने रात्रि के अन्धकार में मेघवृत्र द्वारा निर्मित तटबन्धों को तोड़ डाला।

***

एक असुर ने मेघवृत्र के हर्म्य में जाकर विलाप करते हुए रूँधे स्वर में उसे आर्यों एवं देवों के द्वारा की गई इस दुष्टता की सूचना दी।

अपना कुलिश संभाल कर मेघवृत्र तत्काल ही हर्म्य से बाहर आया और चिल्ला-चिल्लाकर प्रजाजनों को पास की एक ऊंची पहाड़ी पर पहुंचने का निर्देश देने लगा। वो स्वयं भी उस पहाड़ी की ओर बढ़ा। इस जल प्लावन की घड़ी में किसी ऊंचे स्थान पर पहुंचकर ही सुरक्षित रहा जा सकता था।

निश्चय ही देवों एवं आर्यों को हड़प्पा पुर की विस्तृत सूचना थी। तभी मेघवृत्र ज्यों ही पहाड़ी की ओर बढ़ा, उसे देवों और आर्यों ने कोलाहल करते हुऐ घेर लिया। मेघवृत्र एक वीर योद्धा था और अदम्य साहसी भी। आमने-सामने के युद्ध में उसे देवों और आर्यों का सर्वश्रेष्ठ योद्धा इन्द्र भी कभी परास्त नहीं कर सका था।

स्वयं को घिरा देखकर मेघवृत्र ने कंधे पर रखा कुलिश आपने दायें में लहरा कर मुख से भीषण ध्वनि निकालता हुआ आर्यों पर झपटा। वे आर्य, जो मेघवृत्र को घेर कर अब तक मारो-मारो की ध्वनि मुखों से उत्पन्न कर रहे थे। उन्हीं आर्यों के मुख अब बचाओ-बचाओ की ध्वनि उच्चारित करने लगे। मेघवृत्र के कुलिश का प्रहार इतना प्रचण्ड था कि जिस किसी की भी देह उस लहराते कुलिश की चपेट में आती उसका तत्काल उसी स्थान पर रक्तवमन करते हुए प्राणान्त हो जाता।

आर्यजनों पर प्रहार करते हुए मेघवृत्र ने अपना सिर तनिक ऊंचा करके पहाड़ी की ओर देखा। वहां का दृश्य अत्यन्त वीभत्स था। आर्य योद्धा निर्दयता से असुरों का विनाश कर रहे थे और साथ ही स्त्रियों एवं बालकों को बन्दी बना रहे थे। समस्त पहाड़ी पर क्रन्दन के स्वर गूंज रहे थे। असुरों पर हो रहे इस अत्याचार का दृश्य देखकर मेघवृत्र का कठोर हृदय भी कांप उठा।

स्त्रियां और बालक बड़े कातर स्वर में विलाप कर रहे थे किन्तु आर्य योद्धा निर्ममता से स्त्रियों के केश और बालकों के पांव पकड़ कर उन्हें घसीट-घसीट कर बन्दी बना रहे थे।

"अरे चोरों तुम्हारा स्त्रियों और बालकों से क्या प्रयोजन? तनिक ठहरों अभी वहां आकर मैं तुम्हें इस धृष्टता का दण्ड अपने इस कुलिश से देता हूँ।"

क्रोधित स्वर में चिल्लाकर मेघवृत्र उस पहाड़ी की ओर लपका, जहां आर्य योद्धा अब शुक्रवासा और सुवासा स्त्रियों के शरीर से शुक्ल वस्त्र खींच कर

उन्हें नग्न कर रहे थे। कुछ आर्य योद्धा स्त्रियों के कर्ण से कर्ण शोभन और गले से निष्क खींच रहे थे।

मेघवृत्र, वृक्षों के मध्य बनी पगडंडी से पहाड़ों की ओर द्रुतगति से बढ़ा जा रहा था। साथ ही वो आर्यों को उनके निष्ठुर कार्य के लिए धिक्कारता जाता था। अभी वो पहाड़ी के समीप पहुंचने ही वाला था कि उसे पीछे से वृक्षों के झुरमुट के बीच सर.सराहट की ध्वनि सुनाई दी। जैसे किसी पदचाप की तरह। अपने पांव रोककर वो ध्वनि की दिशा में मुड़ पाता, उससे पूर्व ही उसके कंधे पर वायु की गति से आघात हुआ - वज्रघात।

इस आघात से असंतुलित हुए अपने शरीर को मेघवृत्र ने संभालने का प्रयास किया, किन्तु भरपूर शक्ति से उसकी जंघा पर एक और प्रहार हुआ। उसके कंठ से एक मार्मिक चीख निकली और वो वहीं एक पाषाण खण्ड से टकराकर भूमि पर गिर पड़ा।

कंधें और जांघ की पीड़ा से कराहते हुऐ उसने आक्रमण करने वाले की ओर देखा तो उसके होंठों से घृणा के शब्द निकले, ''ओह, दुष्ट इन्द्र तूऽ''

''हाँ मैं इन्द्र हूँ किन्तु दुष्ट नहीं। दुष्ट तो तू है असुर वृत्रासुर।''

''यूँ छिपकर आघात करने वाला दुष्ट ही होता है। अरे नराधम इन्द्र! क्या तुझे मेरे सम्मुख युद्ध में बार-बार पराजित होने के पश्चात, इस प्रकार रात्रि के अन्धकार में मुझे सावधान किये बिना पीछे से वार करने में कतई लज्जा नहीं आई?''

''एक असुर के मुख ये सिखावन अच्छी नही लगती।'' कहकर इन्द्र ने मेघवृत्र की टूटी जंघा को अपने पांव से मसलकर पीड़ा पहुँचाते हुए कहा, ''तुझे तब लज्जा नहीं आई जब बांध बनाकर नदियों का प्रवाह रोका किसी अजदहे की तरह..''

''तुम दुष्ट घुमन्तु आर्य इन बांधों के निर्माण का लाभ क्या जानों? तुम मूर्ख जन ये कैसे समझ सकते हो कि नदियों पर बने इन बांधों का कृषि, पशु-पालन एवं सभ्यता के विकास में कितना योगदान है।'' टूटी जंघा का इन्द्र के पांव से किए जा रहे मर्दन से उत्पन्न असहनीय पीड़ा से कराहने के बावजूद मेघवृत्र ने उसे धिक्कारते हुए कहा।

''अरे दुष्ट दस्यु! मृत्यु के सम्मुख भी तुझमें शील नहीं आया।''

ये मुनि भारद्वाज के स्वर थे जो हाथ में एक दण्ड लिये वहां आकर खड़े हो गये थे।

''ओह पीतकेशी, दुष्ट भारद्वाज। हमारी सभ्यता का विनाश करने वाले मूषक, अब तुम हमें शील-अश्लील का पाठ पढ़ाओगे।'' मुनि भारद्वाज को देखकर अपनी कोहनी के सहारे उठने का प्रयास करते हुए वीर मेघवृत्र बोला।

''हे देवराज! हे आर्यों के मार्गदर्शक! हे इन्द्र! क्यों व्यर्थ में अपना समय व्यर्थ कर रहे हो? इस दुष्ट का सिर अपने व्रज से चूर-चूर करके इसके गोधन पर अधिकार स्थापित करो। हे इन्द्र! इस दुष्ट का वध करके आर्यों का मार्ग निष्कंटक करो।'' मुनि भारद्वाज ने इन्द्र की स्तुति करते हुए कहा। और मुनि श्रेष्ठ की बात सुनकर इन्द्र ने अपने दायें हाथ में पकड़ा वज्र अपने सिर से ऊपर उठाकर और पूर्ण शक्ति एवं वायु वेग से उसका प्रहार मेघवृत्र की छाती पर किया।

इस वज्र का प्रहार इतना कठोर था कि मेघवृत्र तत्काल ही रक्तवमन करते हुए मृत्यु को प्राप्त हो गया। इन्द्र ने तुरन्त ही अपने साथ आये आर्य योद्धाओं को मेघवृत्र का सिर काटने की आज्ञा दी और एक इषु की नोंक पर मेघवृत्र के कटे सिर को छेदकर विजय घोष करते हुए उस पहाड़ी पर पहुँचा जहां आर्य एवं देवगण दस्युओं का विनाश कर रहे थे।

कुछ दस्यु जो अब भी देवगणों का विरोध करते हुए युद्ध कर रहे थे, उनका हौसला अपने नायक वीर मेघवृत्र के कटे सिर को देखकर समाप्त हो गया और उनकी इस शिथिलता का लाभ उठाकर आर्यों ने उनमें से अधिकतर को मृत्यु के मुख में पहुँचा दिया और जो बचे उन्हें पकड़कर दास बना लिया। और फिर बांधों के टूटने से भी भयंकर ध्वनि गूंज उठी। 'जयघोष' की ध्वनि। देवेन्द्र की विजय घोष का। महामुनि भारद्वाज की विजय घोष का।

मेघवृत्र की हत्या से समाप्त हो चुके युद्ध से प्रसन्न चित्त आर्यजन एवं देवगण प्रसन्नता से झूम रहे थे। मेघवृत्र एक वीर योद्धा था जिसने इन्द्र को द्वन्द में अनेक बार पराजित किया था। उसकी मृत्यु से आर्यों एवं देवों का प्रसन्न होना स्वाभाविक था। किन्तु युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ था।

वीर पणि अपनी स्वतंत्रता खोने को इतनी सरलता से सज्ज नहीं थे।

दस्यु नमुचि ने पवन वेग से शिश्नदेव का घोष करते आर्यों एवं देवों पर आक्रमण किया था। वो मेघवृत्र का सेना नायक था। देवगण एवं आर्यजन ये देखकर घोर आश्चर्य में थे कि नमुचि के साथ उन पर आक्रमण करने वाले पुरूष ही नहीं अपितु स्त्रियां भी थीं। युद्ध करने वाले पुरूष संभवतः पहले ही मार दिये

गये थे। बाकियों को पकड़कर दास बना लिया गया था और कुछ को तो तटबन्धों के टूटने से जल की वेगवती धारा उन्हें अपने साथ बहा ले गई थी।

नमुचि के नेतृत्व में दस्यु स्त्रियों ने घोर युद्ध किया। जिससे कुछ देर पहले प्रसन्नता से झूम रहे आर्यों एवं देवों के मुखों पर चिन्ता की लकीरें झलकने लगी। और जब दस्यु नमुचि की स्त्री सेना आर्यों एवं देवों पर भारी पड़ रही थी तभी ..

उन पर पवन के वेग से अश्वों पर सवार आर्यों ने आक्रमण कर दिया। इन अश्वों पर सवार योद्धाओं का नेतृत्व तृत्सुवों और भरतों का नायक दिवोदास कर रहा था। इस द्रुतगामी आक्रमण से दस्यु स्त्रियां नेत्रहीन और शिथिल हो गई। आर्य योद्धा उन्हें पकड़कर अंग मर्दन करने लगे और उनका शील भंग कर उनकी हत्या करने लगे।

स्त्रियों के क्रन्दन और उनकी हीन दशा देखकर दस्यु नमुचि अपने हाथ का परशु संभालते हुए इन्द्र को सम्बोधित करते हुए बोला, ''रे इन्द्र! अकारण हम पर आक्रमण करने वाले, हमारी भूमि और गांवों पर बलात अधिकार का प्रयास करने वाले पापी दुष्ट.. आ अब हमारा द्वन्द होना चाहिये। इन निरीह प्राणियों पर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने से अच्छा है कि तू आकर मेरे परशु के प्रहारों का स्वाद चख। मैं वीर मेघवृत्र का सेना नायक नमुचि तुझे युद्ध की चुनौती देता हूँ।

''दस्यु नमुचि! भले मिले। तुम्हारा नाम मैंने सुना है। किन्तु संभवतः तुम मुझे नहीं जानते, मैं इन्द्र हूँ जिसने अभी-अभी तुम्हारे नायक मेघवृत्र का वध किया है।'' इन्द्र एक हाथ से वज्र को संभाल कर एक आर्य योद्धा की इषु पर टंगे मेघवृत्र के सिर की ओर इशारा करके बोला।

''हाँ मैं तुझे जानता हूँ कि तू वही चोर इन्द्र है जो हमारी गौओं और हमारी कृषि का हरण करना चाहता है.. और मैं ये भी जानता हूँ कि तुझे हमारे नायक महान मेघवृत्र ने कई बार पराजित किया था। और तूने उन्हें पीछे से छल करके मारा है। आज मेरा ये परशु तुझे तेरे इस कुकृत्य का उचित दण्ड देगा।'' कहकर नमुचि हाथ से परशु को हवा में लहराकर इन्द्र की ओर बढ़ा।

नमुचि को अपनी ओर बढ़ता देखकर इन्द्र ने आगे बढ़कर उस पर अपने वज्र का तीव्र प्रहार किया इससे नमुचि रक्त से नहा उठा। उसे तनिक संभलने का अवसर दिये बिना इन्द्र ने अपने वज्र का प्रहार नमुचि के वक्ष पर किया। इससे नमुचि रक्त वमन करने लगा।

तत्पश्चात इन्द्र ने कहा, ''आर्य वीरों इस दुष्ट को बन्दी बना लो। परन्तु इसी समय नमुचि चैतन्य हुआ। क्रोध से थरथराता नमुचि हुकांर करके खड़ा हुआ और उसने प्रचण्ड वेग से इन्द्र पर परशु चलाया। परशु के वक्ष पर लगते ही इन्द्र लहराकर पृथ्वी पर गिर गया।

यह दृश्य देखकर देवगणों व आर्यजनों के बीच हाहाकार मच गया और नमुचि ने अपने परशु से उनकी सेना का वध करना प्रारम्भ कर दिया। वह जिधर भी निकलता उधर की भूमि आर्यों से खाली होने लगी। क्रोध से हुंकारते हुए नमुचि ने धक्का मारकर दिवोदास के घोड़े को गिरा दिया और फिर नमुचि और दिवोदास दोनों एक-दूसरे पर पिल पड़े।

नमुचि के प्रचण्ड प्रहारों से दिवोदास शिथिल होने लगा और इसी समय इन्द्र चैतन्य होकर वहां पहुँचा। एक बार फिर से वो नमुचि को सम्बोधित करके बोला, ''रे दस्यु! तनिक ठहर मैं आता हूँ अभी।''

अपने मुख का रक्त पोंछते हुए नमुचि बोला, ''ऐसा ही सही। तब मैं दिवोदास से पहले तुझे ही मृत्यु को सौंपता हूँ।''

ये सुनकर इन्द्र ने कहा, ''ये अभी पता चल जायेगा, कौन किसे मृत्यु को सौंपता है!'' फिर दोनों आपस में गुथ गये। उनके वज्र और परशु की टक्कर से अग्नि स्फुल्लिंग निकलने लगी। दोनों एक दूसरे के वक्ष को लक्ष्य करके प्रहार करने लगे। परन्तु दोनों ही एक-दूसरे को अवसर नहीं दे रहे थे। बहुत देर तक प्रचण्ड युद्ध होता रहा। अन्त में इन्द्र ने अवसर पाकर नमुचि के सिर पर वज्र से प्रहार किया, जिससे उसके सिर के दो टुकड़े हो गये। नमुचि को भूमि पर गिरते देखकर पणि जोर-जोर से विलाप करने लगे और आर्य गर्गर बजाकर अपनी सम्पूर्ण विजय की घोषणा करने लगे।

***

आकाश में उदय होते सूर्य की लालिमा से प्रकाशित भूमि को आँख भर देखने के पश्चात महामुनि भारद्वाज आर्यों को सम्बोधित करके बोले, ''हे आर्य जनों! महान इन्द्र के पराक्रम से इन बलिष्ठ दस्युओं पर हमारी विजय पूर्ण हुई। अब दूर-दूर तक फैली ये भूमि जिन पर ये पणि कृषि करते आये थे। वो अब हमारे अश्व, गाय, अजा, मेष और वृषभ के लिए चारागाह के रूप में प्रयोग आयेंगे। तो हे आर्यों के नायक दिवोदास! आप पर इन्द्र ने जो कृपा की है, उसके बदले आप उनका पुरोडाश और सोम से स्वागत करें और हे इन्द्र! जो आपने

अपनी बुद्धि और पराक्रम से वृत्तासुर के इन पुत्रों का विध्वंस किया है। तो आज से आप 'पुरन्दर' कहायेंगे।''

महामुनि भारद्वाज की बात सुनकर दिवोदास इन्द्र के सम्मुख बैठकर उनकी विविध प्रकार से स्तुति करते हुए बोला, ''हे पुरन्दर! आप यूँ ही हम पर अपनी कृपा बनाये रखे और आर्यों के विस्तार में सदा सहायक रहे।''

फिर दिवोदास ने आर्यजनों को आज्ञा दी कि वे पुरन्दर इन्द्र के लिए खाद्य की व्यवस्था करें।

जो खाद्य आर्यों ने पणियों पर विजय के फलस्वरूप आयोजित उत्सव में परोसे उसके गौ, अश्व, अज, अषि का मांस था। जौ और दूध से बना मीठा पुरोडाश था। ऊन के कपड़े से छनी सोम थी। कुछ आर्य दूध दही से बने अशिर का भी सेवन कर रहे थे।

हाथ में सोम का पात्र लिये इन्द्र महामुनि भारद्वाज और दिवोदास के समीप आकर बोला, ''हे महामुनि भारद्वाज! हे वृहदृश्व पुत्र दिवोदास! अभी इस कृषि योग्य समस्त भूमि को पूर्णतयः चारागाह बनाना उचित नहीं रहेगा।''

पुरन्दर इन्द्र की बात सुनकर मुनि भारद्वाज और आर्य दिवोदास चुपचाप प्रश्नवाचक आँखों से उन्हें देखते रहे। उनकी दुविधा जानकर इन्द्र हंसता हुआ बोला, ''चूंकि अब जबकि हम सप्त-सिन्धु में अपने पांव जमाने में लगभग सफल हो चुके हैं तो फिर अब हमें अपना घुमन्तु जीवन त्याग कर यहाँ स्थाई निवास करना चाहिए।''

''स्थायी निवास?'' इन्द्र की बात सुनकर आर्य दिवोदास बोला, ''हे इन्द्र! किन्तु यहाँ सप्त-सिन्धु के वर्षाकाल में आपकी कृपा से इतनी अधिक वर्षा होती है कि वह हमारे स्थाई निवास में बड़ा व्यवधान उत्पन्न करेगी।''

''मेरे प्रिय आर्यजनों एवं महामुनि भारद्वाज अब प्रजाजनों के ग्राम और पशुओं के लिए गोष्ठ स्थापित करने होंगे और अब हमें ग्रामणी और सम्राट आदि की व्यवस्था बनानी होगी।'' पुरन्दर की बात सुनकर त्रत्सू, दिवोदास और उसके पास आकर अभी खड़े हुए पुरूकृत्सु ने पुनः इन्द्र की ओर प्रश्नवाचक मुद्रा में देखा तो इन्द्र ने अपनी बात पूरी करते हुए कहा, ''इस बारे में विस्तृत चर्चा बाद में होगी। अभी इस विषय को स्थाई बनाने के लिए कुछ अन्य आवश्यक कार्य अभी तुरन्त करने हैं।'' कहकर इन्द्र वहां से जाने लगा और दिवोदास एवं पुरूकृत्सु महामुनि भारद्वाज का इशारा पाकर प्रसन्न मुद्रा में सोमपान करने लगा।

वहां से लौटकर इन्द्र अपने एक सेवक तक्ष के पास जाकर बोला, ''तक्ष तुम अपने कुलिश से बन्दी विश्वरूप त्रिषिरा का सिर काट दो।''

'जो आज्ञा पुरून्दर'' कहकर तक्ष ने बन्दीगृह में जाकर कुलिश के प्रहारों से सोते हुए त्रिषिरा विश्वरूप का सिर काट दिया और फिर आकर उसने अपने इस कृत्य की सूचना इन्द्र को दी, तो प्रसन्न होकर इन्द्र ने पान के लिए उसे सोमरस लाने को कहा।

***

दिवोदास एक प्रतापी पुरूष था। वो राजकीय आवश्यकताओं एवं युद्धों में घिरा रहता था। दिवोदास अभी नवयुवक था और अपने पिता वृहदृश्य की मृत्यु के उपरान्त उसने भरतों एवं तृत्सुओं का नायक पद ग्रहण किया था।

सप्त-सिन्धु में पणियों के राजा मेघवृत्र की हत्या करने के बाद आर्य वहां अपना राज्य स्थापित कर चुके थे। दिवोदास कुछ दिन वहां रूककर वहां की ऋतुओं का आनन्द लेना चाहता था, किन्तु देव पुरून्दर की प्रेरणा से वो आर्यों के सबसे प्रबल शत्रु कुलीतर वशी शंबर से युद्ध के लिए अपने पुरोहित महामुनि भारद्वाज और अपने सहायक एवं सम्बन्धी पुरूकुत्स के साथ उदव्रज की ओर बढ़ा, जिसे पराक्रमी शंबर अपनी राजधानी बनाकर वहां से अपने सौ पुरों में अबाध शासन चलाता था।

दिवोदास तो कुलीतर वंशी शंबर को नतसिर करने के प्रयोजन से पणियों से जीते व्यास और परूष्णी नदियों के बीच की भूमि छोड़कर पहाड़ों पर चला गया किन्तु इन्द्र वहीं तृत्सुओं और भरतों के नवनिर्मित ग्राम के एक भव्य हर्म्य में कुछ दिन विश्राम के लिये रूक गया।

***

अहिल्या एक नवयुवती थी। वो तृत्सुओं के पूर्व राजा वृहदश्व की पुत्री और वर्तमान राजा दिवोदास की भगिनी थी। उसका अभी विवाह नहीं हुआ था। इन्द्र एक कपटी कामुक किन्तु सुन्दर देव था। स्त्रियों के लिए उसके हृदय में अपार आकांक्षा और उल्लास रहता था। अहिल्या को देखकर इन्द्र की आँखों में मद छा गया। अहिल्या आर्य की पुत्री थी, जिन्हें इन्द्र देवों से निकृष्ट समझता था इसलिए वह आर्य कन्याओं पर अपना जन्मजात अधिकार भी मानता था। असुर कन्या को तो हर समय दासी बनाकर इसकी सेवा में स्वयं आर्यजन ही प्रस्तुत करते रहते थे।

उस दिन अहिल्या कुछ अनमनी बैठी थी। अहिल्या अतीव सुन्दर आर्य ललना थी। जब वो उन्मुक्त चाल से विचरती थी। वो हंसिनी एवं मोरनी को भी पराजित करने का सामर्थ्य रखती थी। उसके मन में भी संभवतः इन्द्र के लिए कुछ कोमल विचार थे और ये विचार क्यों न होते, उस समय समस्त सप्त-सैंधव में इन्द्र के पराक्रम के ही चर्चे थे। इन्द्र भी मन ही मन अहिल्या के सौन्दर्य पर आसक्त था।

इस समय जिस उपवन में अहिल्या अनमनी सी बैठी थी, वहां उसकी सेवा में दो पणि कन्याएं थी। इन पणि कन्याओं को मेघवृत्र विजय के उपरान्त बलात दासी बनाया गया था और अब ये कृष्णयोनि कन्याएं, पीतेकेशी आर्य कुमारी अहिल्या की सेवा करने को बाध्य थी। उन पणि कन्याओं में से एक अहिल्या का अंग मर्दन करके उसकी सेवा कर रही थी। और दूसरी उपवन के कुंजमय द्वार पर किसी प्रहरी की तरह खड़ी थी।

जिस समय अहिल्या दासी के हाथों से अपनी जंघाओं के मर्दन का आनन्द ले रही थी, उसी समय देवराज इन्द्र भी विचरते हुए उसी उपवन में आ गये। द्वार पर खड़ी दासी को देखकर इन्द्र ने कहा, ''यदि उपवन में आपकी स्वामिनी हो तो उन्हें मेरा प्रणाम निवेदन कर दे।''

दासी जो इन्द्र के सम्मुख स्वयं को पाकर मन ही मन अत्यंत भयभीत हो गई थी, वह तुरन्त ही भागकर अहिल्या के समीप पहुँची। उस दासी के पैरों की आहट से अपनी अधमुदी आँखें खोल कर अहिल्या उस पर क्रोधित होते हुए बोली, ''क्यों री, कृष्णयोनि! क्या तुझे मेरी आज्ञा का स्मरण नहीं रहा, जो उपवन का द्वार रिक्त छोड़कर यहां चली आई.''

इन्द्र के भय से भयभीत दासी अहिल्या के क्रोधित स्वर से और अधिक भयभीत हो गई और इन्द्र का निवेदन उसके कंठ में अटक कर रह गया। दासी को मूक खड़ा देख अहिल्या जंघा मर्दन कर रही दासी के वक्ष पर एक जोरदार लात मारी। इस आघात से दासी चीखकर पास के पाषाण खण्ड पर जा गिरी। उसका सिर पाषाण से टकराया और उससे रक्त की एक रेखा बह चली। वो दासी अपना सिर पकड़ कर पीड़ा से कराहने लगी।

अहिल्या क्रोधित होकर मृग चर्म से उठी और उसने क्रोधित होकर दूसरी दासी की केशराशि अपने हाथ से उखाड़ने लगी। दासी पीड़ा चीत्कार करने लगी।

''मुझे लगता है इन कृष्णयोनि दासियों के लिए इतना दण्ड पर्याप्त है। देवी अहिल्या।''

अहिल्या ने स्वर की दिशा में देखा तो वहां इन्द्र खड़ा था। दासी की केशराशि छोड़कर वह हाथ जोड़कर इन्द्र को प्रणाम करके बोली, ''क्षमा करें देव, आपके आने का आभास ही नहीं हुआ।''

इन्द्र को वहां देख कर दोनों पणि कन्यायें धीरे-धीरे वहां से खिसक गई। अहिल्या ने उन्हें जाते हुए तिर्यक आँखों से देखा, पर रोका नहीं। वो स्वयं ही चाहती थी कि इस समय वो दासियां वहां से चली जाये। अपने और इन्द्र के मध्य वो इस समय किसी का भी अवरोध नहीं चाहती थी।

इन्द्र हंसते हुए अहिल्या के समीप आकर बोला, ''देवी मैं इससे पूर्व भी सम्राट दिवोदास के इस उपवन में आया हूँ किन्तु तब मुझे इतना मनोरम प्रतीत नहीं हुआ।''

''संभवतः देव ने इससे पूर्व इस ऋतु में इस उपवन का विहार नहीं किया होगा।'' अहिल्या समीप की एक लता से पुष्प तोड़ने के बहाने इन्द्र से तनिक दूर होते हुए बोली।

''देवी को कदाचित मेरा सामीप्य नहीं भाया।'' इन्द्र के इस अप्रत्याशित प्रश्न ने पुष्प तोड़ती अहिल्या की अंगुलियां पुष्प लता के एक कंटक से जा उलझी और दायें हाथ की तर्जनी अंगुली के अग्रभाग पर रक्त की एक बूंद छलक उठी।

इन्द्र ने आगे बढ़कर अहिल्या की वो अंगुली अपने हाथों में ले ली। इन्द्र के इस औचक स्पर्श से अहिल्या की अंगुली की पीड़ा जाती रही और उसकी आँखों में मद छा गया। किन्तु इन्द्र ने तुरन्त ही अहिल्या का हाथ छोड़ दिया और आगे बढ़कर उस लता को भूमि से उखाड़ कर एक ओर फेंक दिया, जिसके कंटक से अहिल्या की अंगुली आहत हुई थी।

''ये क्या देव! एक निर्जीव लता को इतना भयंकर दण्ड?'' अहिल्या अब स्वयं इन्द्र के तनिक समीप आ गई थी।

''क्षमा करें देवी, किन्तु इस लता ने आपके साथ जो दुष्टता की वो अक्षम्य है। फिर इन्द्र अहिल्या की बांह पकड़कर बोला, ''देवी! आपके दिव्य सौन्दर्य ने मुझे अपना दास बना लिया है।''

''ये व्यंग्य न करें देव!'' अहिल्या अपने सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर तरंगित हृदय से बोली।

''ये व्यंग्य नहीं सत्य है देवी!'' कहकर इन्द्र कुछ देर अहिल्या के अनिंद्य सौन्दर्य को अपलक देखता रहा और फिर उत्तेजित होकर बोला, ''अहिल्या मैं तुम पर अनुरक्त हूँ। तुम्हारे इन कमल सी सुगन्ध वाले अधरों का चुम्बन करना चाहता हूँ, स्वर्ण घट के समान यह तुम्हारे उन्नत कुचों का मर्दन करना चाहता हूँ.. हे देवी! मैं तुम्हारे इस स्वर्णिम देह से संभोग की अभिलाषा रखता हूँ।''

इतना कहकर इन्द्र ने अपनी बाहें फैलाकर अहिल्या को आलिंगन करने को उद्दत हुआ। इन्द्र का अभिप्राय और उसकी अभिलाषा जानकर अहिल्या बचती हुई उससे दूर खिसक कर अपने में ही सिकुड़ने लगी। उसने कहा,

''देवेन्द्र! कदाचित आपको ज्ञात नहीं महामुनि भारद्वाज ने मेरा विवाह गौतम मुनि से सुनिश्चित किया है और इसकी सहमति भ्राता दिवोदास भी प्रदान कर चुके हैं. आप तो धर्म के ज्ञाता हैं इसलिए ऐसा न करें।''

इन्द्र ने हंसकर कहा, ''प्रिय अहिल्या ये सारी सृष्टि मेरी ही स्तुति करती है। चाहे वो आर्य मुनि हो, आर्य राजन्य हो, किरात हो, पणि हो, असुर या फिर कोई अन्य देव हो। मैं न सिर्फ देवों का राजा हूँ अपितु समस्त सृष्टि मुझे अपना आराध्य स्वीकारती है। इस सृष्टि में तुम भी हो। इसलिए यदि तुम अपना कौमार्य मुझे समर्पित करोगी तो इसमें कोई अधर्म नहीं होगा।''

इतना कहकर इन्द्र ने अहिल्या को अंकपाश में दबा लिया। वो केले के पत्ते के समान कांपने लगी और उसने काम की इच्छा होते हुए भी कहा, ''नहीं-नहीं देव ऐसा मत करो।''

इस पर इन्द्र ने उसे अपने अंक में भींचते हुऐ उसके होंठों पर अपने होंठ रख दिये। अहिल्या काम के वश में होकर इन्द्र के अंक में समा गई। इन्द्र ने उसके केश वीथी खोलकर बिखेर दी और उसके वस्त्रों को उसकी देह से स्वतंत्र करने लगा।

***

इन्द्र और अहिल्या अभी प्रेम के पग कर चलकर काम के चरम पर पहुँचे भी नहीं थे कि व्रज गर्जना के समान उनके कानों में त्वष्टा के शब्द पड़े।

''अरे इन्द्र! मेरे पुत्र के हत्यारे अपने शस्त्र संभाल और मुझसे द्वन्द कर..'' त्वष्टा की गर्जना सुनकर घबराहट से अहिल्या मूर्छित हो गई। इन्द्र ने उसे छोड़ दिया और त्वष्टा की ओर देखा।

''शस्त्र ग्रहण कर इन्द्र'' त्वष्टा पुनः गरजा।

''मैं आपसे युद्ध नहीं करूँगा।'' इन्द्र से सिर नीचे करके कहा।

''फिर क्या करेगा?''

''पलायन'' कहकर इन्द्र उपवन के द्वार की ओर लपका।

''ठहर तो'' कहकर त्वष्टा भी उसके पीछे भागा।

अहिल्या चैतन्य होकर अपना माथा पकड़कर सोचने लगी कि त्वष्टा का वहां आना उसके हित में था या अहित में।

***

यों देहूयो अनम मधश्नेनेर्यो आर्य पत्नीरूषसश्चकार
स निरूध्या नहुषो यहूवो अग्निर्विषश्च के बलिहतःसशोभिः

''महामुनि अगस्त्य की कोई सूचना?'' मुनि भारद्वाज ने समीप बैठे एक युवा मुनि से पूछा।

''महामुनि अगस्त्य की तो अभी तक कोई सूचना नहीं है, किन्तु मुनि वशिष्ठ आज आपकी कुटीर में पधारेंगे।'' युवा शिष्य ने शिष्टता से उत्तर दिया।

''हमने तो महामुनि अगस्त्य एवं मुनि वशिष्ठ को मुनि गौतम और अहिल्या के विवाह में भी आमंत्रित किया था, किन्तु वे आ न सके।''

''ठीक है.. मुनि गौतम तो अपनी नवपरिणीता पत्नी के साथ प्रस्थान कर चुके हैं किन्तु इन्द्र के इस प्रकार से अदृश्य हो जाने से उत्पन्न हुई समस्या के समाधान के लिए महामुनि अगस्त्य एवं मुनि वशिष्ठ का परामर्श अत्यन्त आवश्यक है। अतः उन्हें शीघ्रातिशीघ्र यहां पहुँचने का संदेश प्रेषित करो।''

''जो आज्ञा महामुनि।'' कहकर युवा मुनि उठकर खड़ा हो गया और फिर तनिक सकुचाते हुए बोला, ''हे महामुनि क्षमा करें, किन्तु एक प्रश्न पूछने से मैं खुद को रोक नहीं पा रहा हूँ।''

''पूछो?'' महामुनि ने नेत्र बन्द करके युवामुनि को अनुमति प्रदान की।

''क्या एक नवयुवती राजदुहिता का विवाह एक वृद्ध हो चले मुनि से उचित था?''

युवा मुनि का प्रश्न सुनकर महामुनि भारद्वाज ने नेत्र खोल कर कहा, ''वत्स प्रसकण्व ये किसी भी राजदुहिता के लिए सौभाग्य की बात है जो उसे

किसी मुनि ने वरण किया। और हाँ वत्स, ये स्मरण रहे हमें वही परिपाटी स्थापित करनी है जिसमें हम मुनि सर्वश्रेष्ठ बने रहे। देवों से भी श्रेष्ठ। किसी भी परिस्थिति में हमें अपनी श्रेष्ठता बनाये रखनी है। राजदुहिता अहिल्या का मुनि गौतम से विवाह हमारी इस परम्परा का आरम्भ है। भले ही हम मुनि और राजन्य आर्य हों, किन्तु हम मुनि ब्राह्मण, राजन्य क्षत्रियों से कहीं अधिक श्रेष्ठ है और इसलिए उनकी दुहिताओं पर हमारा अधिकार स्वयमेव सिद्ध हो जाता है। अहिल्या का गौतम से विवाह कराकर हमने उसी अधिकार का प्रयोग किया है और अब अदृश्य इन्द्र के स्थान पर उसका पद हम किसी अन्य आर्य को देकर अपने अधिकारों की संख्या बढ़ाना चाहते थे। और हमने नहुष को वो पद देकर ऐसा किया।''

''और यही महामुनि अगस्त्य का एक क्षत्रिय मुनि पर विशेष अनुग्रह है।''

महामुनि भारद्वाज और युवा मुनि प्रसकण्व ने स्वर की दिशा में देखा तो कुटीर के द्वार पर मुनि वशिष्ठ खड़े थे। महामुनि भारद्वाज को अपनी ओर देखते ही वह बोले, ''प्रणाम महामुनि! क्षमा करें, किन्तु सत्य यही है।''

महामुनि भारद्वाज वशिष्ठ को देखकर चुप खड़े रहे किन्तु प्रसकण्व प्रणाम करके मुनि वशिष्ठ से कुटीर के भीतर आने का अनुरोध किया।

''एक ऋषि के लिए इतना क्रोध उचित नहीं महामुनि वशिष्ठ! पधारिये भारद्वाज के आश्रम में आपका स्वागत है।'' कहकर महामुनि भारद्वाज ने हाथ के इशारे से वशिष्ठ को मृग चर्म के आसन पर बैठने का संकेत किया।

''किन्तु एक ऋषि के लिए ये क्रोध उस समय उचित हो जाता है जब उसे ज्ञात पड़े कि कोई ऋषि किसी क्षत्रिय को ऋषि बनाने का प्रबंध कर रहा हो।'' कहकर मुनि वशिष्ठ मृग चर्म का आसन ग्रहण करते हुए बोले, ''आपका बहुत बहुत आभार जो आपने मुझे महामुनि कहकर सम्बोधित किया। इस समय आर्यवर्त में आप अगस्त्य और गौतम ऋषि के अतिरिक्त ये उपाधि किसी के पास नहीं।''

''महामुनि वशिष्ठ संभवतः अपने अग्रज महामुनि अगस्त्य से रूष्ट है?'

''क्या गाधि पुत्र कुशिक विश्वरथ थे। ये उनका अतिरिक्त स्नेह होना उचित है?''

''आपका कथन उचित है महामुनि वशिष्ठ। किसी क्षत्रिय पर इतनी कृपा एक समस्या है..''

''पर मुझे तो ये सूचना मिली थी, कि आप नहुष द्वारा उत्पन्न किसी समस्या पर विचार हेतु मेरा परामर्श चाहते थे। किन्तु यहां ..'' मुनि वशिष्ठ को तनिक कठोर दृष्टि से देखते हुए महामुनि अगस्त्य ने भारद्वाज के कुटीर के भीतर प्रवेश किया।

''पधारिये महामुनि आपका स्वागत है।'' मुनि भारद्वाज ने अगस्त्य को प्रणाम किया। वशिष्ठ ने भी अगस्त्य को प्रणाम किया।

''प्रसकण्व, मुनि अगस्त्य और वशिष्ठ हेतु जलपान की व्यवस्था कीजिए।'' भारद्वाज की बात सुनकर प्रसकण्व ''जी महामुनि'' कहकर कुटीर से चला गया और मुनि भारद्वाज पुनः अगस्त्य को सम्बोधित करते हुए बोले, ''महामुनि आप नहुष के कृत्य से भिज्ञ तो होंगे?''

''हाँ किन्तु विस्तृत रूप से नहीं।'' मुनि अगस्त्य आसन पर विराजते हुए बोले, ''महामुनि भारद्वाज इस सन्दर्भ में मैं विस्तृत रूप से जानना चाहूँगा।''

''इन सप्त-सैंधव के कछारों में स्थिति विशाल चारगाहों पर आर्य का अधिकार स्थापित करने हेतु इन्द्र ने उनकी सहायता की और छल से वृत्रासुर का अंत कर दिया।'' भारद्वाज, नहुष समस्या की पृष्ठभूमि पर प्रकाश ड़ालते हुए आगे बोले, ''महामुनि अगस्त्य वृत्रासुर अत्यन्त वीर और विकट योद्धा था उसे सम्मुख युद्ध में परास्त कर पाना इन्द्र के भी वश में नहीं था।''

''इस कार्य के लिए हमें पणियों और आर्यों द्वारा पूजित विश्वरूप त्वष्टा की सहायता की आवश्यकता थी किन्तु त्वष्टा ने पणियों के विनाश की इस योजना में सहयोग से इन्कार कर दिया। तब इन्द्र ने त्वष्टा के पुत्र त्रिसिरा को बन्दी बनाकर त्वष्टा को इस कार्य के लिए बाध्य कर दिया। त्वष्टा द्वारा निर्मित अस्त्र की सहायता से इन्द्र ने मेघवृत्र पणि पर विजय प्राप्त की और हम आर्यों का इस सप्त-सैंधव पर अधिकार स्थापित हो गया।''

''फिर'' अगस्त्य ने पूछा।

''फिर इन्द्र ने इस विजय के उल्लास में त्वष्टा पुत्र त्रिसिरा का वध कर दिया जिससे त्वष्टा को अत्यन्त क्रोध आया और इन्द्र उसके क्रोध से भयभीत अब तक मानसरोवर में छुपा है। इन्द्र के यूँ अज्ञातवास से देवों के राजा का पद रिक्त हो गया, जिससे सप्त-सैंधव में नवस्थापित आर्य संस्कृति के अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लग गया। संकट की इस घड़ी में हमने विचार करके आर्यों के एक महान योद्धा नहुष का ऐन्द्राभिषेक कर दिया।''

''ठीक किया।'' अगस्त्य ने सहमति में सिर हिलाया।

''किन्तु अब ये नहुष ही हमारी चिंता का कारण है।''

''वो कैसे?''

''इन्द्र पद मिलते ही नहुष भोगलिप्सा में आसक्त हो गया। और अब वो इन्द्र की पत्नी देवी शचि से रति का आग्रह कर रहा है, जो देवी शचि को स्वीकार्य नहीं है।''

''देवी शचि सही है।'' अगस्त्य ने पुनः कम शब्दों में समर्थन किया।

''आप दोनों ही सप्त-सैंधव के प्रतापी ऋषि हैं अतः अब आप लोग ही इस समस्या का कोई हल निकालिए'' भारद्वाज मुनि ने बारी-बारी से अगस्त्य और वशिष्ठ को देखकर कहा।

''किन्तु ये नहुष तो वशिष्ठ का प्रिय रहा है। वशिष्ठ ने उसे अपने आश्रम में स्थान भी दिया था और शंकर की पुत्री अशोक सुंदरी से विवाह में भी सहायता की थी। फिर जब ये आर्य क्षत्रिय नहुष को इतनी सहायता कर चुके हैं तो मेरी विश्वामित्र को दी जा रही भेंट से इन्हें आपत्ति नहीं होनी चाहिये।''

अगस्त्य की बात सुनकर वशिष्ठ ने सिर झुका लिया किन्तु भारद्वाज अपने स्थान से उठकर आश्रम में टहलते हुए बोले, ''हे मुनि श्रेष्ठ! ये समय आपसी विवाद का नहीं है। यदि इस समय हम आपस में उलझे रहे तो सप्त-सैंधव में नव स्थापित आर्य संस्कृति के समाप्त हो जाने का भय है।''

''वो कैसे?'' वशिष्ठ ने मुनि भारद्वाज सीधा प्रश्न किया।

''मुनि वशिष्ठ'' भारद्वाज अब वशिष्ठ के पास आकर खड़े हो उन्हें सम्बोधित करते हुए बोले, ''पिछले कई वर्षों से आर्य योद्धा दिवोदास के नेतृत्व में किरातों से युद्ध कर रहे हैं किन्तु वे उन्हें जीत पाने में असमर्थ है। अब तो किरात अपने राजा शंबर के नेतृत्व में हम पर भारी पड़ने लगे हैं। यदि शीघ्र अति शीघ्र इन्द्र की सहायता प्राप्त न हुई तो हमारे पराजित हो जाने की संभावना है।''

''और हमें इन्द्र की सहायता तभी प्राप्त हो सकती है जब हम नहुष को अपदस्थ करके इन्द्र का पुनः अभिषेक करें।'' कहकर मुनि अगस्त्य खड़े हो गये और साथ ही मुनि वशिष्ठ भी अपने स्थान पर खड़े हो गये।

''ठीक है.. नहुष को मैं अपदस्थ करूंगा इन्द्र के पद से।'' कहकर अगस्त्य मुनि भारद्वाज को देखकर वशिष्ठ को देखा एवं पुनः बोले, ''किन्तु..'' महामुनि अगस्त्य ने बात अधूरी छोड़ दी।

''किन्तु क्या महामुनि?'' भारद्वाज एवं वशिष्ठ ने समवेत स्वर में अगस्त्य से पूछा।

''किन्तु यही कि शंकर की पुत्री अशोक सुंदरी नहुष की पत्नी है और उससे उत्पन्न ययाति एक वीर पुत्र। अतः नहुष को इन्द्र पद अपदस्थ किये जाने का यदि उन्होंने प्रतिशोध लेने का विचार किया तो आर्यों के मध्य ही गृह युद्ध छिड़ जायेगा।''

अगस्त्य की बात सुनकर भारद्वाज एवं वशिष्ठ एक दूसरे का मुख तकने लगे। उनके माथे पर चिन्ता की लकीरें स्पष्ट झलक रही थी।

भविष्य की इस चिन्ता के लिए वे कोई चर्चा आरम्भ कर पाते उससे पूर्व ही प्रसकण्व ने आश्रम में प्रवेश करके कहा, ''हे मुनिजनों जलपान सज्ज है।''

***

देवेन्द्र नहुष हाथ में सोमरस का पात्र लिये इन्द्र के बसाये नंदनवन में विचर रहा था।

सोमरस के अत्याधिक सेवन से उसकी आँखें आधी मुंदी, आधी खुली है। पांव में कम्पन है और मद्धिम स्वर में शचि-शचि दोहरा रहा हैं। अचानक उसकी आँख तनिक दूर सरोवर के समीप एक पाषाण खण्ड पर बैठी एक स्त्री पर ठहर गई।

''ओह, तो क्या देवी शचि ने मेरा रति अनुरोध स्वीकार कर लिया।'' ये शब्द नहुष के होंठों से निकले और उसके पांव स्वतः ही सरोवर की ओर बढ़ गये।

''देवी शचि!'' नहुष शिला खण्ड पर बैठी स्त्री के पीछे जाकर खड़े होते हुए बोला।

स्वयं को पुकारे जाने से पूर्व ही उस स्त्री को किसी के आने का आभास हो गया होगा क्योंकि नंदनवन वृक्षों से झड़े सूखे पत्तों पर नहुष के चलने से चर्र-चर्र की ध्वनि आ रही थी। किन्तु वो स्त्री इस ध्वनि को अनसुना करके शांत बैठी रही। सरोवर का शांत जल देखती हुई।

जब नहुष ने उसे 'देवी शचि' कहकर बुलाया तब भी उसने पीछे मुड़कर नहीं देखा और पूर्व की तरह ही सरोवर के शांत जल को तकती हुई बोली, ''देवेन्द्र नहुष देवी शचि के विचारों में इतने खोये रहते हैं कि उन्हें सृष्टि में अन्यत्र सौन्दर्य दिखाई ही नहीं पड़ता।''

''ओह, क्षमा करे देवी। मुझे लगा देवी शचि आ गई।'' नहुष ने पहले शिला खण्ड पर बैठी स्त्री को देखा ..

और फिर उसकी नजर उसके पास के दूसरे शिला खण्ड पर जम गई। जहां सोम का पात्र रखा हुआ था।

''देवेन्द्र नहुष! मुझ साधारण स्त्री से क्षमा मांग कर मुझे लज्जित न करें ..'' कहकर वो शिला खण्ड से उठी और पलटकर नहुष के सम्मुख खड़ी हो गई।

नहुष ने ज्यों ही उस स्त्री को देखा तो देखता ही रहा। वो सोलह श्रृंगार किये हुए थी। देह में अंगराग, अधर में अधर राग और केशों में पारिजात के पुष्प गुंथे थे। उसके नेत्र बड़े-बड़े और अत्यन्त आर्कषक थे। चन्द्रबिम्ब मुख, केले की तने सी जंघायें, पुष्ट नितम्ब और कलशों से भरे-भरे स्तन।

''आप कौन है देवी! इससे पूर्व आपको नंदनवन में नहीं देखा?''

नहुष ने स्पष्ट शब्दों में पूछा। अब इस पर सोमरस के साथ-साथ उस पर नवयौवना के सौन्दर्य का मद भी प्रभाव डाल रहा था।

''शश्वती, .. देव को देवी शचि के विचारों से मुक्ति ही नहीं मिली जो दासी को देख पाते।'' स्त्री ने कोमल स्वर में उत्तर दिया।

नहुष पास की शिलाखण्ड पर रखे सोम के पात्र को देखकर बोला, ''क्या देवी सोमपान कर रही थी?''

''नहीं अब तक नहीं, पर जो देव की आज्ञा हो तो?''

शश्वती की बात सुनकर नहुष हंसते हुए बोला, ''एक देवी शचि है जो मेरी आज्ञा का तिरस्कार कर रही है और एक तुम हो देवी, जो सोमपान हेतु भी मेरी आज्ञा चाहती हो।''

''क्योंकि हम आपको प्रेम करते हैं आर्य पुत्र।'' शश्वती ने बांकिम नेत्र से देख कर कहा।

शश्वती की बात सुनकर नहुष आनन्दतिरेक होकर बोला, ''प्रिये! क्या हम इस सरोवर में जल विहार कर सकते हैं?''

नहुष की बात सुनकर शश्वती उसका हाथ पकड़कर एक नाव में चढ़ गई। काफी समय तक वे दोनों उस नीलमणि से स्वच्छ जल के सरोवर में विचरते रहे तदुपरान्त नहुष शश्वती को अपने मणि महल में ले आया। वहां उपस्थित पणि दासियां नहुष के आदेश पर शश्वती को शयनागार में ले गई। जहां एक विशाल पलंग पर अत्यन्त कोमल वस्त्र बिछा हुआ था। नहुष, शश्वती को अंक में लेकर शय्या पर जा बैठा। दासिया चन्दन और मयूर पंख से उनको हवा करने लगी। जब नहुष शश्वती के अधरों के चुम्बन के आगे बढ़ा। तब शश्वती ने दासियों से आदेशात्मक

स्वर में कहा, ''एकान्त'' और दासियां मन्द-मन्द मुस्काती हुई वहां से चली गई। उनके जाने के बाद वे परस्पर एक दूसरे को आलिंगन करके चूमने लगे।

दिव्य आर्य कन्या शश्वती के साथ रति-विलास करके शान्त नहुष निद्रामग्न हो गया।

रति-विलास से तृप्त शश्वती ने सो रहे नहुष को देखा। उस समय वह अद्‌भुत शोभा धारण किये था। उसके शरीर से चन्दन के लेप की सुगन्ध आ रही थी। नहुष को यूँ सोते देख शश्वती धीरे-धीरे पलंग से उठी और सधे पांव बिना ध्वनि किये हर्म्य से बाहर निकल नंदनवन में चिन्हित एक वृक्ष के समीप जा पहुँची जहां एक साया उसकी बाट जोह रहा था।

''कब से प्रतीक्षा कर रहा हूँ।'' साया तनिक क्रुद्ध स्वर में बोला।

''क्षमा करें महामुनि! किन्तु नहुष से रति-विलास के आनन्द में समय का स्मरण ही नहीं रहा।'' शश्वती तनिक निर्लज्जता से हंसकर बोली।

''तो नहुष तुम पर आसक्त है?'' साया वृक्ष की ओर से निकलकर चांद के प्रकाश में आया।

''हाँ महामुनि अगस्त्य, वो मुझ पर आसक्त है, किन्तु देवी शचि से रति विलास का उसका मोह अभी भंग नहीं हुआ है।''

''ठीक है. देवी शचि आयेगी, तुम उसे आश्वस्त करो। किन्तु स्मरण रहे तुम्हें नहुष को रति-विलास में डुबोकर उसे आसक्त बनाये रखना है। उसे इतना कामान्ध कर दो कि उसे भोजन करने का भी स्मरण न रहे और हाँ, एक निश्चित समय पर मेरे संकेत पर तुम्हें उसे अस्त्र-शस्त्र से विहीन भी करना होगा।''

''जी महामुनि। अब मुझे नहुष की निद्रा खुलने से पूर्व जाना होगा। आज्ञा दीजिए।''

''हूँऽ' महामुनि अगस्त्य ने धीरे से कहा और फिर वृक्षों के मध्य लुप्त हो गये।

***

''हम अति प्रसन्न है, देवी शश्वती। तो देवी शचि कब पधार रही हैं।'' नहुष इस समय अपने शयनगार में था और शश्वती उसके अंक में थी।

''शीघ्र ही देव'' कहकर शश्वती, नहुष के अंक में बिखर गई और फिर दोनों आलिंगनबद्ध होकर एक दूसरे को अपना प्रेम प्रदर्शित करते हुए रति क्रीड़ा का आनन्द लेने लगे।

इस प्रकार कई दिवस व्यतीत हो गये। राजा नहुष के अधीन अब बस दो ही कार्य थे। अंक में आर्या शश्वती की देह एवं होंठों पर देवी शचि की कामना।

एक दिवस शश्वती की कोमल देह अपनी बलिष्ठ भुजाओं में कसते हुए नहुष ने अधीर होकर पूछा, ''मैं कैसे कहूँ देवी, अब शचि की कामना मेरे प्राण हर लेगी। उनका कोई समाचार मिला क्या? .. क्या उन्हें मेरे पद, मेरी गरिमा का तनिक भी मान नहीं रहा। क्या मेरी अवज्ञा में उन्हें आनन्द आता है? यदि ऐसा है तो मैं स्वयं वहां जाकर अपने पद के अधिकार का प्रयोग करते हुए बलात् देवी शचि पर अपना अधिकार सिद्ध करूंगा।''

''धैर्य धरें देव'' शश्वती ने नहुष के मुख पर एक गाढ़ा चुम्बन लेकर बोली, ''जो आनन्द सहमति से रति क्रिया में है वो बलात नहीं .. और देवी शचि आज रात्रि आपके हर्म्य में पधार रही हैं।''

''सत्य कह रही हो देवी शश्वती?'' नहुष ने अविश्वास से पूछा।

''हाँ ये सत्य है. किन्तु क्या देवी शचि के सानिध्य के पश्चात देव मुझे भुला देंगे?''

''कदापि नहीं'' कहकर नहुष, शश्वती को अंक में समेट कर पलंग पर लेट गया।

उस रात्रि नहुष अत्यन्त व्याकुल था। समय जैसे व्यतीत ही नहीं हो रहा था। यह देखकर शश्वती अपने हाथ में पात्र लिये उसके समीप आकर बोली, ''देव प्रतीक्षा की घड़ियां समाप्त हुई. देवी शचि पधारने वाली है। तब तक आप ये पान कीजिए'' कहकर शश्वती ने हाथ में लिया पात्र नहुष की ओर बढ़ा दिया।

शश्वती से पात्र लेकर नहुष उससे एक घूंट भर कर बोला, ''देवी यह क्या? ये सोम तो नहीं है.''

''हाँ देव ये सोम नहीं, सुरा है। इसके पान से रति-विलास का आनन्द बढ़ जाता है. और आज की रात तो आप देवी शचि के साथ व्यतीत करने वाले है.'' शश्वती ने नहुष को बंकिम नेत्रों से देखकर कहा।

''हाँ देवी शश्वती! ये आपकी अनुकम्पा है कि आज हमें शचि का सानिध्य प्राप्त होने जा रहा है। किन्तु देवी आज न जाने क्यों मेरे अंग शिथिल प्रतीत हो रहे हैं. ऐसा लग रहा है जैसे मैं अत्यन्त अशक्त हो गया हूँ ..''

''शक्ति और अशक्ति तो हृदय के विचार पर निर्भर है देव। मुझे विश्वास है कि जब देवी शचि आपके सम्मुख होगी तो उनका सौन्दर्य देखकर आपकी ये दुर्बलता स्वतः ही दूर हो जायेगी।''

नहुष एवं शश्वती का ये वार्तालाप अभी चल ही रहा था तभी एक पणि दासी ने वहां प्रवेश करके कहा, ''व्यवधान के लिए क्षमा करे देव! किन्तु समाचार अत्यन्त आवश्यक है.''

''क्या है?'' नहुष ने सुरा का घूँट लेते हुए पूछा।

''देवी शचि पधार चुकी है और वे आपके हर्म्य में प्रवेश की आज्ञा चाहती है.''

''क्याऽ सत्य!.'' नहुष ने उत्तेजित होकर एक ही घूँट में पात्र से सुरा समाप्त करके उसे एक ओर फेंकते हुए बोला, ''जाओ दासी उन्हें सम्मान सहित ले आओ।'' फिर एकाएक कुछ सोचकर ''नहीं .. नहीं रूको दासी!'' फिर शश्वती की ओर देखकर - ''देवी शश्वती! मैं चाहता हूँ आप स्वयं जाकर देवी शचि को लेकर आये।''

''जो आज्ञा आर्य'' कहकर मुस्काती हुई शश्वती दासी के साथ वहां से चली गई।

नहुष व्याकुलता से टहलने लगा। तभी देवी शचि शश्वती के साथ वहां उपस्थित हुई। उनकी पदचाप की आहट से नहुष का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हुआ। इस समय शचि बिना श्रृंगार के है। उनकी देह पर कोई भी साज सज्जा का चिन्ह नहीं है। केश विधियां खुलकर बिखरी है। नेत्रों से बहे आसुओं के चिन्ह कपोल पर दिखाई दे रहे हैं। अधर, अधरराग विहीन है।

''ये क्या देवी शचि! पति के हर्म्य में इस प्रकार आया जाता है?' नहुष ने तनिक क्रोध करते हुए पूछा।

''आर्य संभवतः भूल रहे हैं कि मैं उनकी नहीं इन्द्र की पत्नी हूँ'' शचि ने दृढ़ स्वर में कहा।

''और शचि संभवतः ये भूल रही हैं कि इस समय इन्द्र पद पर मैं आर्य नहुष सुशोभित हूँ''

''मैंने किसी पद से विवाह नहीं किया, मेरा विवाह व्यक्ति से हुआ है. और मेरा स्पर्श मेरा पति ही कर सकता है।''

''स्मरण रहे देवी, आपका वही पति कहीं पलायन कर चुका है। देव और आर्यों ने सर्वसम्मति से मुझे इन्द्र पद देकर उसकी सम्पत्ति का अधिकारी बनाया है। इस कारण आप पर भी मेरा अधिकार है।''

''मैं पत्नी हूँ कोई सम्पत्ति नहीं, जिस पर लोगों का अधिकार परिवर्तित होता रहे''

''ओह, एक दस्यु की पुत्री को इतना अभिमान। ठहर आज रात्रि मैं तेरा अभिमान भंग करता हूँ''

''हाँ मैं दस्यु कन्या हूँ। दानव श्रेष्ठ पुलोमा की पुत्री। परन्तु मुझे इसका गर्व है।''

''आऽ .. हाँ .. गर्व'' नहुष तनिक सोचकर बोला, और फिर शीघ्र ही कुछ सोचकर - ''देवी शश्वती, आप शचि के स्नान और श्रृंगार का प्रबन्ध करें आज मैं अपने शयनागार में इस दस्यु कन्या का मान-अभिमान भंग करूंगा।''

नहुष की बात सुनकर देवी शचि के नेत्रों से अश्रु की बूंदें झलक पड़ी और उन्होंने असहाय अवस्था में स्वयं को निहारा और विलाप करती हुई बोली, ''हाय रे भाग्य! दानव श्रेष्ठ पुलोमा की पुत्री एवं देवराज इन्द्र की पत्नी के भाग्य में ये रात्रि भी थी। क्या मुझ पतिव्रता स्त्री का मान मर्दन भाग्य का लेखा है या फिर मेरे किन्हीं बुरे कर्मों का प्रतिफल।''

''देवी शचि! विलाप न करें'' मुनि अगस्त्य ने हर्म्य में प्रवेश करते हुए कहा।

''ओह अगस्त्य तुम यहां? किसकी आज्ञा से मेरे हर्म्य में प्रवेश किया तुमने?''

''नहुष अनीति को रोकने के लिए मुझे कहीं भी जाने के लिए किसी की आज्ञा की आवश्यकता नहीं है।''

''पर मुनिवर हम पहले भी चर्चा कर चुके हैं कि इन्द्र की समस्त सम्पत्ति पर मेरा अधिकार है.. देवी शचि पर भी।''

''यदि तू देवी शचि का हठ नहीं छोड़ेगा, तो मुझे शक्ति का प्रयोग करना होगा।'' ये स्वर इन्द्र का था जिसने अभी-अभी हर्म्य में प्रवेश किया था।

इन्द्र को वहां उपस्थित देखकर शचि भाग कर उसके अंक से लगकर बोली, ''हे देव! मेरी रक्षा करें''

''ओह, तो इस भगोड़े इन्द्र में इतना साहस आ गया! .. अच्छा किया जो तुम भी शचि को प्राप्त करने हेतु शक्ति प्रदर्शन की शर्त रखी।'' नहुष क्रोध से फुंफकारता हुआ बोला।

''मैं तुम्हें अंतिम बार सचेत करता हूँ .. ये अनीति मत करो नहुष, अब ये इन्द्र पद पुरन्दर को पुनः लौटा दो और जाकर प्रतिष्ठान का राज्य भोगो।'' अगस्त्य ने कहा।

''नहीं मुनि, अब इन्द्र पद और शचि के अधिकार का निर्णय मेरे और इन्द्र के बीच द्वन्द से तय होगा। शश्वती तुम विलम्ब न करो .. शचि को मेरी शय्या सहचरी हेतु शीघ्र सज्ज करो।''

''देवराज इन्द्र नहुष की इच्छा पूरी करो। उसे पराजित कर धरती पर सर्प सा जीवन व्यतीत करने पर विवश करो।'' अगस्त्य की बात सुनकर नहुष ने अपना कुलिश खोजा। उसे न पाकर उसने शश्वती की ओर देखा तो वो अगस्त्य के पीछे ओट ले लेती है।

''ओह, छल ..'' ये कहकर नहुष शश्वती की ओर बढ़ा ही था कि तभी इन्द्र के वज्र का प्रहार उसकी छाती पर हुआ और वो रक्तवमन करते हुए मूर्छित हो गया।

''बन्दी बना लो इसे।'' अगस्त्य ने आज्ञा दी।

***

नहं तं वेद दम्भं दभत स भस्येदे हेतीरसरयं पराकात।
न तं मूहन्ति स्रवतो गभीरा हता इन्द्रेणयणभः शयध्वे।

सूर्योदय होना ही चाहता है। सरस्वती के तीर शीतल वायु प्रवाहित हो रही है। महामुनि मैत्रावरूण अगस्त्य अपनी पर्ण कुटी के सामने एक वृक्ष के समीप बैठे हैं। वृक्ष पर बैठे पक्षियों के कलरव को ध्यान से सुनते हुए आँखें बन्द किये हैं।

आर्य एवं किरातों का युद्ध लम्बा होता जा रहा है। शंबर और उसके सेनानायक भुष्ण एवं वर्ची दुर्दम्य योद्धा है। मुनि भारद्वाज और दिवोदास अपनी समस्त शक्ति लगाकर भी उन्हें पराजित कर पाने में असमर्थ रहे हैं। अगस्त्य, दिवोदास के पुरोहित नहीं है। पुरोहित मुनि भारद्वाज है। फिर भी अगस्त्य इस युद्ध

को लेकर अत्यन्त चिंतित है। उनका चिंतित होना स्वाभाविक है। यहां शंबर अपराजेय सिद्ध हो रहा है और उधर विन्ध्य पार दक्षिण में रावण 'रक्ष संस्कृति' की स्थापना का आरम्भ कर चुका है।

अभी पिछले दिनों पक्थों ने भी सिर उठाया था। अगस्त्य मुनि ने उनके दमन के लिए दिवोदास के ज्येष्ठ पुत्र प्रतर्दन को भेजा है। किन्तु वहां की स्थितियां कुछ अच्छी नहीं है। पक्थ भी वीर योद्धा हैं उन्हें विजित करने में प्रतर्दन अब तक असफल रहा है।

एक और समस्या है.. पणियों को पराजित कर दिया गया है. किन्तु उनका मूल विनाश नहीं हुआ है। किया भी नहीं जा सकता। क्योंकि यदि उनका विनाश कर दिया गया तो दास-दासियां और दैनिक उपभोग की वस्तुएं सरलता से सुलभ न हो सकेगी।

''प्रणाम महामुनि'' दो तरूणों के समवेत स्वर सुनकर मुनि अगस्त्य ने अपना नेत्र खोला। एक युवक मुनि वेष में है और दूसरा क्षत्रिय वेष में। दिखने में दोनों योद्धा प्रतीत होते हैं।

''आओ सुदास, आओ विश्वरथ ... लगता है तुम दोनों रात्रि भर सो नहीं पाये।''

''हाँ मुनिवर, किन्तु आपकी आज्ञानुसार देवी सरमा को पणियों की पुरी में भेज दिया गया है। वो वहां पणियों को अपने गोधन, अज, अवि एवं करम्भ को दान देने हेतु प्रेरित करेंगी।'' मुनि वेश वाले युवक ने कहा।

''उत्तम विश्वरथ?. अति उत्तम। अब तुम दोनों विश्राम कर लो। थके होगे।''

''कोई अन्य आज्ञा?'' क्षत्रिय वेशधारी तरूण ने मुनि से हाथ जोड़कर पूछा।

तरूण की बात सुनकर महामुनि ने नेत्र बन्द कर लिया। कुछ समय विचार करके नेत्र खोलकर बोले, ''सुदास तुम्हें पक्थों के विरूद्ध जाना होगा।''

''किन्तु वहां तो भ्राता प्रतर्दन गये हुए हैं.'' सुदास ने दुविधा से कहा।

''प्रतर्दन अब तक वहां सफल न हो सका है, मैंने उसे वहां से लौट आने का निर्देश भेज दिया है। वत्स सुदास, मैं चाहता हूँ कि तुम वहां जाकर स्थितियां सामान्य करो।''

''जो आज्ञा महामुनि मैं आज ही प्रस्थान करता हूँ'' सुदास ने कहा।

''नहीं पुत्र आज नहीं कल चले जाना। तुम काफी थके हो, आज विश्राम कर लो।''

''एक योद्धा को विश्राम तब तक शोभा नहीं देता, जब तक स्थितियां सामान्य न हो। यह आपने ही सिखाया है मुनि श्रेष्ठ'' सुदास ने विनीत भाव से कहा।

''एक दिन तुम आर्यवर्त के महानायक बनोगे सुदास। ठीक है आज ही प्रस्थान कर जाओ।'' कहकर महामुनि अगस्त्य आसन से उठ गये।

''क्या मैं भी सुदास के साथ पक्यों के विरूद्ध अभियान पर जाऊँ?'' विश्वरथ ने प्रश्न करते हुए कहा।

''नहीं विश्वरथ, सुदास इस अभियान को सफल करने हेतु सक्षम है और तुम्हारे लिए मेरे पास दूसरी योजना है.. और फिर आश्रम में रोहिणी का अकेले मन नहीं लगता।'' कहकर महामुनि अगस्त्य पर्ण कुटी के भीतर चले गये। रोहिणी की बात पर सुदास ने विश्वरथ को हल्के से कोहनी मारी तो वो हल्के से मुस्करा कर बोले, ''सुदास मैं देव सविता से तुम्हारी सफलता की कामना करता हूँ''

''और मैं देव वरूण से कामना करता हूँ कि वे तुम्हारे और रोहिणी के बीच प्रेम बढ़ाये।'' सुदास ने अपनी बात खत्म की और तभी एक पर्ण कुटी के द्वार से अत्यन्त कोमल स्वर सुनाई दिया। - ''विश्वरथ, सुदास सुबह का जलपान सज्ज है आ जाओ।''

सुदास और विश्वरथ ने देखा पर्ण कुटी के द्वार पर रोहणी खड़ी थी।

***

यद्यपि इन्द्र ने मेघवृत्र को मारकर सप्त-सैंधव से पणियों का राज्य समाप्त कर दिया था। अब सप्त-सिन्धु पर आर्यों का अधिकार था। पर यहां अब भी पणियों के कई स्थाई नगर और गांव थे। पणियों को आर्यों के सम्मुख नतसिर होना पड़ा। आर्य उन्हें मार्ग चलते अकारण ही पीट देते। पणियों को आर्यों की किसी भी बात का विरोध करने का अधिकार नहीं था, क्योंकि पणि अब शासक नहीं थे। उन्हें पराजित कर आर्य अब शासक बन चुके थे। आर्य भले ही सप्त-सिन्धु के शासक थे और पणि उनके अधीन दास किन्तु आर्य पणियों से पिछड़े हुए थे। पणि ऋतुनुसार कपड़े पहनते थे। वे गार्मियों में कपास के सूती वस्त्र और सर्दियों में अज (भेड़ों) की ऊन के कपड़े पहनते थे। कभी धनवान रहे पणि अब धीरे-धीरे गरीब होते जा रहे थे। कुछ पणि जो कभी अत्यन्त धनवान थे अब गरीबी के कारण आर्यों के यहां स्वतः दास-दासी का कार्य करने लगे थे। पणि

अपने व्यापार के लिए भी आर्यों पर निर्भर थे। पणियों के व्यापार का अधिकांश लाभ आर्यों को ही होता था। अतः पणियों का यदि आर्यों ने समूल विनाश नहीं किया तो इसमें आर्यों का व्यक्तिगत स्वार्थ था।

किन्तु आर्य किसी भी कीमत पर पणियों को धनवान नहीं रहने देना चाहते थे। दिवोदास एवं उसके सहायक कुलीतर शंबर से युद्ध में व्यस्त थे। अतः मुनि अगस्त्य ने पणियों को निर्धन करने की अन्य युक्ति निकाली। उन्होंने देव नारी सरमा को पणिग्रामों में जाकर उन्हें (पणियों) को अपना निष्क, गौ, करम्भ एवं अज आदि दान करने के लिए प्रेरित करने को कहा। अगस्त्य ने सरमा से ये भी कहा कि यदि पणि ऐसा करने को सहज नहीं होते तो उन्हें इन्द्र का भय भी दिखाया जाये।

यह एक पणियों की हाट थी। जहां भोजन के साथ सुरा भी मिलती थी। यद्यपि आर्यों का प्रिय पेय सोम है किन्तु वे सुरा का भी पान करते हैं।

वहां एक आर्य रोहिताश्व एक पणि की सुरापान कर रहा था। सुरापान करके वो आर्य जब वीथि में आगे बढ़ा तो पीछे से पणि ने कोमल स्वर में कहा, ''हे आर्य रोहिताश्व! सुरा पान के बदले आपने मुझे ताम्र खण्ड देने को कहा था। क्या सुरा के मद में स्मरण नहीं रहा?''

''ओह.. तो कृष्णयोनि पणियों में अब तक साहस शेष है!'' पलट कर कहते हुए पीतेकेशी आर्य रोहिताश्व ने कृष्णवर्णी पणि को धक्का मार दिया। वह पणि वीथि में लड़खड़ा कर गिर पड़ा। हाट में वस्तुओं क्रय-विक्रय कर रहे अन्य पणियों ने उसे गिरते हुए देखा और आगे बढ़कर उठाना चाहा किन्तु जब उन्होंने देखा पणि को एक आर्य ने धक्का मार कर गिराया है तो पुनः भय से चुपचाप अपने कार्यों में लग गये।

वह पणि उठकर तनिक क्रोध से आर्य की ओर देखा। संभवतः मन ही मन उस आर्य पर प्रहार करने का विचार किया कि तभी वहां हाट की उसी वीथि में एक आर्य नारी ने प्रवेश किया।

उस स्त्री ने सोलह श्रृंगार किये थे। उसकी देह में अंगराग लगा था। केशों में सुगन्धित फूल गुंथे थे। उसके नेत्र नाव से थे। पुष्ट नितम्ब, उन्नत उरोज, केले के तने सी जंघायें थी। उसकी रूप-राशि देखकर पणियों के झुके नेत्र बरबस उसे ही देखने लगे। पणियों द्वारा स्वयं को यूँ देखे जाने पर उसने उन्हें सम्बोधित करके कहा, ''अरे पणियों आओ मेरे समीप आओ, मैं इन्द्र की किंकरी सरमा आज तुम्हें ज्ञान का उपदेश दूंगी एवं इन्द्र की महिमा से अवगत कराऊंगी।''

सरमा की बात सुनकर पणिजन डरते, सहमते, सकुचाते धीरे-धीरे उसके समीप आ गये। फिर उनमें से एक वृद्ध पणि साहस करके उससे पूछा, ''सरमा, तुम हम पणियों की इस हाट में क्या इच्छा लेकर आई हो?''

पणि के प्रश्न पर सरमा अपने कमर पर दोनों हाथ रखकर किसी बालिका की तरह बोली, ''हे पणियों! मैं इन्द्र का सन्देश लेकर तुम्हारे कोष की चाह में आई हूँ''

सरमा की लोलुपता भरी बात सुनकर एक दूसरा पणि जो तरूण था उसने पूछा, ''सरमा, तुमने ये जल सी भरी नदियों वाला इतना लम्बा रास्ता पार किया, जिसमें तुम्हारे आने के रास्ते के दूसरे छोर की गिनती नहीं की जा सकती। और जबकि हमारे पास अब क्या है? सब कुछ तो आर्य लुटेरों ने लूट लिया है।''

''अरे तरूण पणि, क्या तू नहीं जानता कि नदी और उनकी बहती जलराशि इन्द्र की आज्ञा से बंधी है, एवं उन्होंने ही मेरे आने का मार्ग सुगम किया। और तुम क्या कहते हो! तुम्हारे इस हाट की वीथियों को देखकर कौन कहेगा कि तुम्हारा सब कुछ लूट लिया गया है।''

सरमा की बात सुनकर एक बालक पणि ने तनिक उत्साहित होकर पूछा, ''सरमा, तुम्हारा इन्द्र कैसा है? जिसका तुम संदेश लेकर आई हो?'' तभी एक अन्य वृद्ध पणि ने इन्द्र के नाम से तनिक भयभीत होकर कहा, ''सरमा, यदि वह इन्द्र आवे तो हम उसे अपना मित्र मानेंगे। अपनी गायों का उसे अधिपति बनायेंगे।''

''हा हा हा'' सरमा तनिक हंसकर बोली, ''हाँ वृद्ध पणि, तुमने सत्य कहा। जो इन्द्र को अपनी गायों का अधिपति बनाना स्वीकार किया। नहीं तो इस समस्त सप्त-सैंधव में दूसरा कौन है जो इन्द्र को रोक सके? उन्हें तो गहरी नदियां भी नहीं रोक सकती। हे पणियों! यदि तुमने इन्द्र की दासता को स्वीकार न किया तो उनका क्रोध तुम्हें क्षण भर में सुला देगा।''

सरमा की ये बात सुनकर कुछ तरूण पणि उत्तेजित नजर आने लगे। उनमें से एक ने आगे बढ़कर तनिक क्रोध से कहा, ''हे सुभगे सरमा, तुम शायद हमारे आयुधों की तीक्ष्णता को नहीं जानती। आकाश के अंतिम भाग में भी ऐसा कोई नहीं जो हमारी गायें हमसे छीन ले।''

उस तरूण की वीरता भरी बात सुनकर सरमा कुटिलता से बोली, ''पणियों, तुम केवल सैनिकों सी बातें कर सकते हो। तुम्हारे शरीर पापी और कृष्णवर्णी है. तुम युद्ध में पीतकेशी आर्यों एवं उनके संरक्षक देवों के सम्मुख क्षण

भर भी ठहर नहीं सकते। मैं तो तुम्हारे भले के लिए कह रही थी क्योंकि मुझे लगता है तुम्हारी मूर्खता भरी बातों से कुपित होकर देव गुरू वृहस्पति एवं आर्य पुरोहित भारद्वाज और अगस्त्य कहीं तुम्हें संकटापन्न न कर दे।''

सरमा की कटुता पूर्ण बात सुनकर एक दूसरा तरूण पणि बोला, ''सरमा, हमारी निधि को पर्वत सुरक्षित करते हैं। सुरक्षक पणि उसकी रक्षा करते हैं। अतः तुम यहां व्यर्थ ही प्रलाप कर रही हो।''

उस तरूण पणि की बात सुनकर सरमा हाथ नचाकर बोली, ''पणियों, यह सोमरस में मतवाले अयास, अंगिरस, नवगु जैसे ऋषि आयेंगे तो वो तुम्हारी, गायें छीन लेंगे। तो हे पणियों! तुम्हारी ये वीरता की बातें बस बकना भर है।''

सरमा की धमकी भरी बात सुनकर कुछ वृद्ध पणि भयभीत हो गये और वे सरमा से याचना करते हुए बोले, ''हे सरमा! हम तुम्हें अपनी स्वसा (बहिन) बनाते हैं, तुम अब यही पणि ग्राम में रह जाओ। हम तुम्हें गायें देंगे।''

''नहीं-नहीं पणियों, न मैं मातृत्व जानती हूँ न ही स्वसृत्व (भगिनी पन) इन्द्र और अंगिरा वंशी मेरे रक्षक है। पणियों तुम यहां से दूर चले जाओ, तुम्हारी गायों के स्वामी सोमरस पान करने वाले इन्द्र होंगे। तुम्हारी निधि वृहस्पति, अगस्त्य और भारद्वाज की होगी। जाओ पणियों जाओ यहां से दूर चले जाओ।''

यूँ इस प्रकार इन्द्र की दूती सरमा पणिग्रामों में जा जाकर उन्हें इन्द्र और आर्यों का भय दिखाती। उसके इन वार्ता से पणि विन्ध्य पार दक्षिण की ओर पलायन करने लगे। वे उस सरमा से धीरे-धीरे इतनी घृणा करने लगे कि जब वह उनके ग्रामों में आती तो वे दबे स्वरों में कहते, ''देखो! इन्द्र की कुतिया आ गई''

***

आर्जुनेय वत्स और शंयु युद्ध के लिए सज्ज है। उन दोनों के रथों में लाल घोड़े जुते हैं।

आर्य योद्धाओं को यूँ अपनी गायों के हरण के लिए आते देख पणि सूरि भी वृबु के नेतृत्व में मैदान में आ डटे।

शंबर युद्ध जिसे आर्य दस्यु युद्ध कहते थे, वो अत्यन्त लम्बा खिंच चला था। और अबकी बार तो शंबर ने अपने योद्धा शुष्ण और कुयव के भीषण पराक्रम से भारद्वाज को मात दे दी। भारद्वाज इस पराजय से क्षुब्ध आर्य ग्राम में विश्राम कर रहा था। इधर पणि सरमा के प्रलाप के पश्चात भी आर्यों को अपनी

निधि दान करने को सहजता से सज्ज नहीं थे। यद्यपि वे विपाशा और शतुद्र के कछारों में वृबु के नेतृत्व में संगठित होने लगे। वृबु एक महान पणि योद्धा था। जो पणियों को खोई सम्पन्नता को पुनः प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील था। भारद्वाज ने इसी वृबु का दमन करने के लिए आर्जुनेय कुत्स और शंयु के नेतृत्व में आर्य वाहिनी को भेजा था।

आर्य और पणि एक-दूसरे की शक्ति की थाह लेने के लिए आज आमने-सामने विपाशा और शतुद्र के मध्य के कछार में खड़े थे।

पणि और आर्य योद्धा एक-दूसरे की शक्ति परीक्षण हेतु आमने-सामने आ चुके हैं। अभी युद्ध प्रारम्भ नहीं हुआ है। एक भीषण स्तब्धता छाई है। तभी दूर से एक रथ आता दिखाई दिया। लाल घोड़े उसे द्रुत गति से खींच रहे हैं। आर्यों के आगमन के पश्चात पणि भी अब घोड़े और रथ का उपयोग करने लगे और कुछ तो उन्होंने आर्यों से ही प्राप्त किये हैं।

वो रथ आकर वृबु के समीप रूक गया। उसमें से एक किरात योद्धा भूमि पर कूदा। उसके सीने पर लगा ताम्र कवच जोर से झनझना उठा, जिसकी ध्वनि से वृबु के रथ में जुड़े घोड़े हिनहिना उठे।

वे किरात योद्धा वृबु के रथ पर चढ़कर उसका कंधा पकड़ते हुए बोला, ''मैं इस युद्ध में तुम्हारा सहायक हूँ। ये दुष्ट आर्य हमसे पराजित होकर तुम पर चढ़ आये हैं। आज इनकी अयसि साथ वास्तविक भेंट कराते हैं। मैं किरात के नायक शंबर का सहायक बलबूत आज अपने कुलिश से इन आर्यों को इनके ही यमलोक में भेजने को प्रस्तुत हूँ।''

किरात बलबूत की ये ओज वाणी सुनकर अब तक शांत विपाशा और शतुद्र की लहरें उत्ताल हो उठी। किनारे पर पड़े शिलाखण्डों से टकराकर आग बिखरने लगी। कछार में बहती हवा आकाश का माथा चूमने लगी। बलबूत वृबु के रथ से उतरकर अपने रथ में आकर दोनों हाथ में कुलिश लहरा कर नाद करता है - ''जय शिश्न देव'' यह सुनकर उसके पीछे वृबु समेत सभी पणियों ने भी ''जय शिश्न देव'' का नाद किया।

पणिजनों का ये उद्घोष सुनकर आर्जुनेय कुत्स ने ''जय इन्द्र देव'' कहकर अपना रथ पणियों की ओर बढ़ा दिया। शंयु समेत समस्त आर्यों ने उसका अनुसरण किया।

आमने-सामने खड़ी दोनों सेनायें कोलाहल करके भिड़ गई। कुलिश से कुलिश टकराने लगे। इनके टकराने से भयंकर नाद होने लगा।

बलबूत और वृबु अत्यन्त पराक्रम से आर्यजनों का संहार करने लगे। यह देखकर शंयु ने अपने एक सहायक आर्य को बलबूत के सम्मुख भेजा। किन्तु वो आर्य ज्यों ही किरात बलबूत के सम्मुख आया, त्यों ही बलबूत के हाथ में लहराता कुलिश उस आर्य के सिर पर पड़ा और वो अपने ही एक देव यम को प्रिय हो गया। शंयु ने एक-एक कर अपने बलिष्ठ योद्धाओं को बलबूत के सम्मुख भेजता जाता और बलबूत उन्हें उनके देव यम पास भेजता जाता।

अन्त में शंयु स्वयं बलबूत के सामने आ डटा। उसे अपने सामने देखकर बलबूत - ''ठहर वृहस्पति पुत्र मैं स्वयं आता हूँ'' कहकर रथ से कूद पड़ा। दोनों आपस में गुथ गये किन्तु कुछ समय में ही शंयु के अंग शिथिल पड़ने लगे। बलबूत के प्रहारों से त्रस्त होकर शंयु अपनी सहायता के लिये आर्जुनेय कुत्स को पुकारा।

पुकार सुनकर पणि योद्धाओं को चीरते हुए आर्जुनेय कुत्स शंयु की सहायता हेतु पहुँचा और दोनों मिलकर बलबूत पर टूट पड़े। किन्तु दोनों मिलकर भी उसे परास्त न कर सके। कुछ समय में ही बलबूत इन दोनों पर भारी पड़ने लगा और देखते ही देखते कुत्स और शंयु के शरीर बलबूत के भीषण प्रहारों से रक्त रंजित होने लगे। उधर वृबु तीव्रता से असहाय आर्य वाहिनी का विनाश करने लगा। और लगा कि आज इस युद्ध में एक भी आर्य जीवित न बचेगा।

तभी ...

एक श्वेत घोड़े पर सवार उस आर्य सूरि ने विद्युत वेग से युद्धभूमि में प्रवेश किया और पणियों एवं किरातों की सम्मिलित वाहिनी पर टूट पड़ा।

उस नव तरूण ने अपने पराक्रम से पणियों में इतना भय व्याप्त कर दिया कि उसके सम्मुख आते ही वे उसके बिना प्रहार के ही मरने लगे। अपने योद्धाओं को यूँ मरते देख बलबूत कुत्स और शंयु को छोड़ उस नव तरूण की ओर बढ़ा।

किन्तु ये क्या ? ..

बलबूत के उस नव तरूण के सामने पहुँचते ही युद्ध समाप्त हो गया। उस तरूण आर्य ने एक ही प्रहार से बलबूत का सिर उसकी देह से अलग कर दिया।

बलबूत के अंत के साथ ही समस्त पणि सेना स्तब्ध हो गई, उनका उत्साह भंग हो गया। इधर आर्य वाहिनी ने ''राजकुमार सुदास की जय'' का नाद किया और उधर राजकुमार सुदास ने अपने घोड़े की पीठ से छलांग लगाकर सीधे वृबु

के रथ पर कूद पड़ा। अगले ही क्षण वृबु के भुजदण्ड सुदास की बलिष्ठ बाहों में छटपटा रहे थे।

युद्ध समाप्त हो गया था। बहुत से पणि मारे गये, बहुत से दास बना लिये गये। कुछ अवसर देखकर भाग गये। इस युद्ध ने पणियों की बची खुची शक्ति को समाप्त कर दिया। उनके नायक वृबु को शंयु का दास बना दिया गया एवं उसकी सारी गौओं तथा सम्पत्ति पर शंयु का अधिकार स्थापित हो गया। अब सप्त-सैंधव में पणियों का कोई राज्य शेष न रहा। या तो वो आर्यों के दास बन गये या फिर आर्यों के अधीन पणन (व्यापार) करने को बाध्य हो गये। अब पणियों का सप्त-सैंधव से पलायन तीव्र हो गया। वो विंध्य पार कर दक्षिण की ओर बढ़े जिसके समीप लंका का राजा रावण 'रक्ष संस्कृति' की स्थापना का उद्योग कर रहा था।

जहां एक ओर इस युद्ध ने सप्त-सैंधव में पणि की शक्ति का समूचा नाश कर दिया, वहीं इस युद्ध ने आर्यों को एक नया नायक दिया। ये नायक और कोई नहीं अपितु प्रतापी दिवोदास का पुत्र सुदास था।

***

प्रतापी अतिथिग्व दिवोदास का एक पुत्र सुदास अत्यन्त वीर था। नव तरूण था। उसने पक्थों के उठे सिरों को नीचा किया था। यह वहीं था जिसने बलबूत को मारकर एवं वृबु को बन्दी बनाकर सप्त-सैंधव में आर्य ग्रामों की श्रृंखला का मार्ग खोला था।

महामुनि मैत्रावरूण अगस्त्य का सुदास एवं विश्वरथ पर अगाध स्नेह था। किन्तु विश्वरथ एवं सुदास पर अगस्त्य का ये स्नेह वशिष्ठ को बहुत अखरता था। क्यों न अखरता? सुदास, विश्वरथ भले ही आर्य थे किन्तु ब्राह्मण नहीं क्षत्रिय थे। वशिष्ठ विश्वरथ और सुदास को क्षत्रिय की बढ़ती शक्ति के रूप में देख रहे थे। जहां विश्वरथ एक ओर आर्यों के पुरोहित बनना चाहते थे, वहीं सुदास अपनी शक्ति और विवेक से आर्यों का सम्राट बनने का सामर्थ्य रखता था। यद्यपि अगस्त्य वशिष्ठ के बड़े भाई थे किन्तु वशिष्ठ को उनसे कोई विशेष आशा नहीं थी।

अभी विवाह सम्बन्धी नियम जटिल नहीं हुए थे। एक बहन अपने भाई से विवाह की याचना कर सकती थी। यमी ने अपने भाई यम से ऐसी ही याचना की थी। वैसे ही वशिष्ठ रोहणी से विवाह की इच्छा रखते थे। रोहिणी वशिष्ठ के बढ़े भाई मैत्रावरूण अगस्त्य की पुत्री थी। किन्तु अगस्त्य अपनी पुत्री का विवाह अपने परम मित्र अतिथिग्व दिवोदास के पुत्र सुदास से करना चाहते थे। रोहिणी

भी मन ही मन सुदास के प्रेम में थी। किन्तु सुदास अब नव तरूणाई में था। वो पवन के वेग की तरह बहना चाहता था। अभी वो विवाह हेतु सज्ज नहीं था। उसने अपने पराक्रम से पक्थों को परास्त किया था। पणियों का अन्तिम दमन भी उसने ही किया था। और अब वो शंबर के विरूद्ध अपने पिता दिवोदास की सहायता करना चाहता था।

सुदास ने बड़ी विनम्रता से महामुनि मैत्रावरूण अगस्त्य से उनकी पुत्री से विवाह करने में असमर्थता जताई। सुदास का अपने प्रस्ताव के विरूद्ध जाने को भी मैत्रावरूण अगस्त्य ने सहर्ष स्वीकार कर लिया क्योंकि सुदास पर उन्हें अगाध स्नेह था।

सुदास जब रोहणी से विवाह के लिये सज्ज नहीं हुआ तो वशिष्ठ के मन में रोहणी से विवाह की आशा पुनः जगी। किन्तु मैत्रावरूण अगस्त्य ने रोहणी का विवाह अपने दूसरे प्रिय शिष्य विश्वरथ से करा दिया।

यद्यपि वशिष्ठ की मन में विश्वरथ और सुदास दोनों के लिए ही कटुता थी। किन्तु उनका भविष्य भी सुदास पर निर्भर था। अभी तक भरत कुल के पुरोहित भारद्वाज थे और निश्चय ही भारद्वाज के पश्चात उनका पुत्र गर्ग ही भरत जनों का पुरोहित बनने वाला था। जबकि दिवोदास के पश्चात भरत जनों का राजा उनके बड़े पुत्र प्रतर्दन को बनना था।

वशिष्ठ ने मन ही मन सुदास से मैत्री करने का निश्चय कर लिया। क्योंकि उन्हें आशा थी कि यदि दिवोदास के पश्चात सुदास भरत जनों का राजा बना तो वे पुरोहित बन सकते हैं अन्यथा प्रतर्दन के राजा बनने की स्थिति में भारद्वाज पुत्र गर्ग का भरत जनों का पुरोहित बनना निश्चित था।

वशिष्ठ ने मन ही मन यह निश्चय कर लिया था कि वे सुदास को अपने अनुसार ढालकर उसे भरतों के सिंहासन पर बिठायेंगे और फिर स्वयं उसके पुरोहित बनकर समस्त आर्यजनों पर शासन करेंगे। अपने इसी ध्येय की प्राप्ति हेतु उन्होंने अपना पांव अपने लक्ष्य के पहले सोपान कर रखा था।

बलबूत के वध और वृबु को सुदास द्वारा बंदी बनाये जाने का वशिष्ठ ने अतिश्योक्त वर्णन किया और सुदास को उन्होंने अब तक हुए आर्य वीरों में सर्वश्रेष्ठ घोषित कर दिया। यद्यपि अगस्त्य एवं विश्वरथ भी सुदास के इस वीरोचित कार्य से अत्यन्त प्रभावित थे किन्तु वे सुदास की अब तक हुए समस्त आर्य योद्धाओं में वशिष्ठ द्वारा सर्वश्रेष्ठ मान लेने से तनिक असहमत थे।

यद्यपि सुदास एक वीर आर्य योद्धा था। वो एक प्रतापी पिता का प्रतापी पुत्र था। किन्तु वो नव तरूण था। अभी सांसारिक बातों की समझ उसमें पूर्णतयः विकसित नहीं हुई थी। इसलिए इसका मन वशिष्ठ की ओर इसलिए झुक गया क्योंकि वशिष्ठ ने उसका यशोगान किया था। वही सुदास का मन थोड़ा सा अगस्त्य और विश्वरथ की ओर से खट्टा हो गया था।

***

वशिष्ठ अपने प्रति सुदास के झुकाव को देखकर अति प्रसन्न थे। और उन्हें पूर्ण आशा थी कि सुदास के राजा बनने के पश्चात वो भरतों के पुरोहित बनेंगे।

वशिष्ठ को न केवल इतनी ही आशा थी कि वे भरतों के पुरोहित बनेंगे अपितु वे तो भरतों के पुरोहित बनकर आर्यों के रक्त शुद्धता की भी रक्षा करना चाहते थे। वशिष्ठ ये कतई नहीं चाहते थे कि कोई आर्य किसी दस्यु से मिलन करके कोई संतान उत्पन्न करें। यदि ऐसा हुआ तो आर्यों की नसों में प्रवाहित रक्त की शुद्धता जाती रहेगी।

इधर वशिष्ठ आर्यों की शुद्धता बनाये रखने की सोच रहे थे किन्तु उधर ..

उधर एक मनोहारी शाम जब सविता अस्त होना चाहते थे तब उपवन में विचरते हुए सुदास की नजर पुष्प चुनती एक तरूण युवती पर पड़ी।

उस तरूणी का कृष्ण वर्ण देखकर सुदास ने समझा वो कोई दस्यु (पणि या किरात) कन्या होगी, जिसे दासी बना लिया गया होगा। पहले तो सुदास उसे देखकर एक ओर बढ़ गया।

भला एक आर्य सूरि का किसी दास कन्या से क्या प्रयोजन? किन्तु जब सुदास पलटकर वहां से जा रहा था तो उसे तरूणी की हल्की सी चीख सुनाई पड़ी।

उस तरूणी की द्रापि (चादर) एक कंटक से उलझ गई थी। उसे छुड़ाने के प्रयास में उस कृष्णयोनि दासी की अंगुलियां आहत हो गई थी। यद्यपि वो दासी थी, चपटी नाक वाली कृष्णवर्णी थी किन्तु फिर भी उस तरूणी के हाथ से निकलते रक्त की धार देखकर सुदास स्वयं को रोक न सका। आगे बढ़कर उस दासी तरूणी की अंगुलियों का रक्त अपनी ऊर्णा द्रापि के छोर से पोंछते हुए सुदास ने

कहा, ''देवी, पुष्प चुनने में इतनी क्या शीघ्रता जो अपने अंगों का भी ध्यान न रहें। देखों तो कितना रक्त व्यर्थ में बह रहा है?''

राजकुमार सुदास के हाथों से अपना हाथ छुड़ाते हुए वह तरूणी बोली, ''हे आर्य सूरि! मुझे आपके कटु वचनों का बुरा नहीं लगा।''

''कटु वचन? मैं कुछ समझा नहीं देवी?'' सुदास उस तरूणी की कंटक में उलझी द्रापि को छुड़ाते हुए बोला।

''क्या 'देवी' का सम्बोधन हमें अपमानित करने के लिए नहीं?'' तरूणी ने अबकी बार अपनी आँखें सुदास की आँखों में डालकर कहा।

''देवी का सम्बोधन तो सम्मान का सूचक है. इसमें अपमान कैसा देवी?''

''पुनः देवी! ... उ.ऊँ..हूँऽ मैं तो भूल गई थी। अब मैं एक दासी हूँ एवं मुझे अब ऐसे अपमान के लिए सदैव सज्ज रहना चाहिये।''

''आपको अपमानित करने का मेरा कोई ध्येय नहीं है किन्तु मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि आपके प्रति मेरा देवी का सम्बोधन आपको अपमानित कैसे कर रहा है? जबकि ये अत्यन्त सम्मान सूचक सम्बोधन है।''

''पराजितों को अपने अनुसार सम्बोधित करना आपके लिए सम्मान का प्रतीक होगा आर्य सूरि किन्तु ये आवश्यक नहीं कि पराजित भी इस सम्बोधन से स्वयं को सम्मानित समझे। यद्यपि मेरा ये सब कहना अब व्यर्थ है क्योंकि हम किरातों का सम्मान उसी दिन समाप्त हो गया जिस दिन आर्यों ने हमें पराजित कर दास बनाया।''

''तो क्या आप देवी के सम्बोधन से अपमानित होती है?''

''अब तो मान-अपमान की बात करना भी हमारे लिए निरर्थक है।'' कहकर वो तरूणी वहां से जाने लगी तो लपक कर सुदास ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला, ''मेरी बात का उत्तर देती जाओ।''

''हे आर्य सूरि! यद्यपि मुझे अब अधिकार नहीं कि आपसे अपना हाथ छोड़ देने को कहूँ.. फिर भी आपसे ऐसा करने के लिए प्रार्थना करती हूँ'' दस्यु तरूणी ने सुदास से अपना हाथ छुड़ाने का कोई प्रयास किये बिना ही बोली।

''हाथ मैं छोड़ दूंगा, किन्तु उससे पहले आपको ये बताना होगा कि आपको देवी का सम्बोधन अपमानजनक क्यों लगा?''

''जब तुम आर्यों ने हमारे पुर को ध्वस्त करके उसे हरियापा नाम दिया तो ये पणियों और किरातों का अपमान ही तो है, हे आर्य सूरि!''

''तो क्या तुम्हें 'देवी' सम्बोधन इसलिए अपमानजनक लग रहा है क्योंकि ये आर्य अपनी स्त्रियों के लिए उपयोग करते हैं?''

''आर्य सूरि ऐसा समझ सकते हैं''

''तो आपसे मेरा निवेदन है कि आप वो सम्बोधन बताये जिसे सम्बोधित करने से आप स्वयं को सम्मानित अनुभव करेगी।'' सुदास ने अब दस्यु कन्या की बांह छोड़ दी थी।

सुदास द्वारा बांह छोड़ देने के पश्चात वो कृष्णयोनि तरूणी यथा स्थान खड़ी रही। नतसिर मुद्रा में उसे यूँ चुप देखकर सुदास पुनः बोला, ''मैं वो सम्बोधन जानना चाहता हूँ''

''क्यों? क्या ये आर्य सूरि की आज्ञा है?'' कृष्णवर्णी तरूणी वैसे ही नतसिर मुद्रा में बोली।

''यदि मेरा निवेदन देवी को स्वीकार नहीं तो इसे मेरा आदेश समझ सकती है।''

''पुनः देवी..?'' कहकर उस तरूणी ने अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से सुदास की ओर देखा।

''क्षमा करें, किन्तु जब तक मुझे वो सम्बोधन पता नहीं चलता जिससे आप सम्मान का अनुभव करती हैं तब तक मैं आपको इस शब्द से सम्बोधित करने को बाध्य हूँ देवी।''

''तो आप केवल विजेता ही नहीं, हठी भी है..''

''आप यह मान सकती है देवी।'' कहकर सुदास मन्द-मन्द हंसा।

''आपको अपमानित करने का अधिकार प्राप्त हो चुका है.'' कहकर तरूणी जाने को उद्यत हुई। सुदास ने जाती हुई तरूणी का पुनः हाथ पकड़ कर कहा, ''हे तरूणी! विजेताओं का तो समझ में आता है. किन्तु पराजित होने पर भी आपका ये हठ ..?''

''अब मैंने क्या हठ किया?'' तरूणी ने सुदास के हाथ से अपनी बांह छुड़ाने का कोई प्रयास नहीं किया।

''मैं आपको क्या कहकर सम्बोधित करूं तरूणी, जिससे आपको तनिक सम्मान प्रदान कर सकूं?'' सुदास ने अब उस तरूणी की बांह छोड़ दी थी।

'' 'देई' यदि आर्य सूरि एक पराजित को सम्मान देना चाहते हैं तो उसे 'देई' कहकर दे सकते हैं।''

''अवश्य देई .. क्या मैं अब आपका नाम जान सकता हूँ?''

''महदेई'' तरूणी ने कहा और वहां से जाने लगी। सुदास ने इस बार उसे रोकने का कोई प्रयास नहीं किया अपितु उसे जाते देखकर धीरे से उसका नाम बुदबुदाया, ''महदेई'' और उसके अधरों पर एक मुस्कान नृत्य कर उठी, किसी शिशु की मुस्कान की तरह।

***

आज उस कृष्णवर्णी नव तरूणी महदेई से सुदास पुनः उपवन में मिला। बीते दिनों में सुदास अनेक बार उस कृष्णयोनि तरूणी से मिल चुका था। और जब भी वह उससे मिलता तो उसे देई कहकर सम्बोधित करता। जब कभी पुष्प चुनते समय महदेई की अंगुलियां कंटक से चुभती और उससे रक्त निकलता तो सुदास अपने द्रापि से साफ करते हुए कहता, ''महदेई, क्यों इस तरह अपना रक्त व्यर्थ करती हो?'' सुदास की बात सुनकर महदेई अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से सुदास को देखते हुए कहती, ''ये रक्त उस रक्त के सम्मुख कुछ नहीं जो हम कृष्णवर्णियों का सप्त-सिन्धु में बहाया गया।'' महदेई की बात सुनकर सुदास नतसिर हो जाता।

***

आज सुदास ने धनुष डाला हुआ था। गर्दन ऊँची करके उसने उपवन में देखा। महदेई प्रतिदिन की तरह आज भी पुष्प चुन रही थी। उसके अतिरिक्त वहां अन्य कोई नहीं था। महदेई अपने होंठों से मन्द-मन्द कोई गीत गाते हुए लताकुंज से पुष्प चुनने में तल्लीन थी। सुदास खड़े होकर उसे देखने लगा। तभी सुदास की नजर लता पर रेंगते महदेई की ओर धीरे-धीरे सरकते नाग पर पड़ी। महदेई का ध्यान उधर नहीं था। सुदास उसे बुलाकर सावधान करना चाहता था फिर उसने सोचा, कहीं उसके यूँ बुलाने से महदेई चौंक पड़ी और उसका हाथ नाग की ओर पहुँच गया तो ..

नहीं-नहीं वो महदेई को यूँ नहीं खो सकता। आज सुदास ने अनुभव किया वो महदेई से प्रेम करने लगा है। नाग महदेई की ओर तनिक और सरका। सुदास ने कंधे से धनुष को उतारकर हाथ में पकड़ लिया। इषुधि (तर्कश) से एक इषु (बाण) निकाल कर उसे सधे हाथों से ज्या (धनुष) पर संधान किया।

सर्प एकाएक तीव्रगति से महदेई की ओर लपका, ठीक उसी समय सुदास ने सधे हाथों से ज्या में चढ़ाये ईषु को नाग की दिशा में छोड़ दिया। इषु

पवन के वेग से महदेई के कान के पास से निकलकर नाग के फन में जा धंसा। नाग एक क्षण के लिए तड़पा फिर शांत हो गया।

कान के समीप से निकले इषु से उत्पन्न वायु से महदेई चौंक उठी। पहले उसकी नजर इषु के प्रहार से मृत्यु को प्राप्त नाग पर गई और फिर इषु संधान से नाग को मारने वाले सुदास पर। एक क्षण वो ठिठकी खड़ी रही और स्थिति को समझ कर अपने प्राण बचाने वाले सुदास के अंक में भाग कर समा गई।

''प्राण बचाने के लिए किस प्रकार धन्यवाद करूं?'' महदेई का भय सुदास के अंक में समाकर तनिक कम हुआ।

''मेरे साथ आखेट पर चलकर'' सुदास, महदेई के अंकपाश से आवेशित गर्म श्वास लेकर बोला।

कुछ तो अपने प्राण रक्षक के प्रति कृतज्ञता एवं कुछ सुदास के लिए हृदय में प्रेम। महदेई ने सुदास को अपनी मूक सहमति प्रदान कर दी।

तरूणी की पतली कमर में हाथ डालकर सुदास ने उसे उठाकर अश्व पर बिठाया और फिर स्वंय उछलकर उसके पीछे अश्व की पीठ पर बैठ गया। अश्व सधा हुआ था। सुदास का इशारा पाकर वो उन्हें उपवन से लेकर वन की ओर दौड़ा पड़ा।

वन में पहुंच कर उन्हें एक हिरणी दिखाई पड़ी। सुदास ने एक के पश्चात दो इषु उस पर छोड़े। हिरण को मारकर उसे हाथ में उठाकर सुदास ने विजयी मुस्कान से महदेई को देखा। महदेई ने अरणी घिसकर सूखे पत्तों और लकड़ियों का अग्न्याधान किया। सुदास ने आखेट द्वारा प्राप्त हिरण के मांस के कई खण्ड किये। दोनों ने मांस को अच्छी तरह भूना और उसके पश्चात खाना आरम्भ किया। महदेई, सुदास को देखकर रूक-रूक कर मांस खा रही थी। मांस खाने के पश्चात सुदास ने महदेई का सिर पकड़ कर उसे अपनी जंघा पर रखकर लिटा दिया।

''कैसी विचित्र बात है?'' महदेई धीरे से बुदबुदाई।

सुदास ने सुन लिया। पूछा, ''कैसी विचित्र बात देई'' सुदास अब उसे देवी कह कर सम्बोधित नहीं करता था। महदेई कहता या बस देई। उसका ये सम्बोधन महदेई को अच्छा लगता।

सुदास की बात सुनकर महदेई ने कहा, ''क्या ये विचित्र बात नहीं कि जिस आर्य जाति की शुद्धता अक्षुण्ण रखने के लिए उसके पुरोहित अपना सारा

सामर्थ्य लगा रहे हैं, उन्हीं आर्यों का एक सूरि एक पणि कन्या के साथ आखेट पर आया है.''

''ये घृणा पर प्रेम की विजय का प्रतीक है.'' सुदास महदेई के कपोल को सहलाकर बोला।

''आप इसे घृणा पर प्रेम की विजय का प्रतीक मान सकते हैं, परन्तु आर्य सुरि सुदास मेरे हृदय की घृणा इतनी शीघ्र विलुप्त हो जायेगी, विश्वास नहीं होता। एक पणि राजा जिसका सर्वस्व छीन लिया गया और उसकी कन्या एक आर्य पुरोहित की दासी बनाई गई वो इस समय एक आर्य सूरि के साथ यहां वन के एकांत में उसके अंक पाश में है। क्यों सुदास! क्यों मैं आपसे घृणा नहीं कर पा रही? जबकि आप ने ही मेरे पिता वृभु को बन्दी बनाकर उनसे उनका सर्वस्व दान कर देने के लिए बाध्य किया था।''

''और मैं ये कदापि नहीं जानता था कि पणि राजा वृभु के सर्वस्व दान में उनकी दुहिता भी सम्मिलित होगी।'' सुदास उठकर अब तनिक बेचैनी से टहलते हुए बोला।

''तो क्या आर्य सूरि के हृदय में मुझे दासी बनाये जाने की ग्लानि है?'' महदेई भी उठकर अब सुदास के पीछे आ गई और उसने अपने हाथ से सुदास की पीठ को स्पर्श करते हुए कहा।

''हाँ महदेई, मेरे हृदय में ग्लानि और क्षोभ दोनों ही है, मेरे हृदय में कंटक चुभते हैं जब मैं तुम्हें महामुनि भारद्वाज के व्यक्तिगत कार्य करते देखता हूँ। कहां एक राजदुहिता, कहां एक दासी का कार्य?'' कहकर सुदास ने अपने मुष्ठि को आवेश में वृक्ष के तने पर दे मारा।

''तो क्या वो यही कारण है जो आर्य सूरि एक दासी पर कृपा कर रहे हैं?''

वृक्ष पर मुष्टि के प्रहार से सुदास के हाथ की खाल थोड़ी छिल गई थी तथा वहां से रक्त की लाल परत दिखाई दे रही थी। हाथ के उस छिले हिस्से को महदेई ने पहले अपनी द्रापि से साफ किया और फिर एक वनस्पति को तोड़कर अपनी हथेली में मसलकर उसका रस सुदास के हाथ पर लगा दिया।

''महदेई, ये कृपा नहीं मेरा प्रेम है.'' सुदास ने महदेई कर हाथ अपने हाथ में कसकर पकड़ कर कहा।

''प्रेम'' महदेई के अधरों से अयुष्ट स्वर निकले।

''हाँ महदेई मैं तुमसे प्रेम करता हूँ और..''

''और क्या?'' महदेई ने पूछा।

''और मैं तुमसे रमण करना चाहता हूँ'' सुदास ने एक क्षण सोचकर बोला।

सुदास की बात सुनकर महदेई लाज से नतमुख हो गई और सुदास ने ये उसकी मूक सहमति समझ कर उसे अपनी बलिष्ठ भुजाओं में लपेट कर वक्ष से लिपटा लिया और महदेई की सुमुष्ट जंघा से अपने जंघायें आवेष्टित करते हुए बोला, ''अब तुम मेरी हो। अब से मैं तुम्हें महामुनि के कार्य न करने दूंगा।''

''जो अतिथिग्व का आवेश हुआ तो?'' महदेई सविता की सुनहरी धूप से अपना मुख वृक्ष की ओर ले जाते हुए बोली।

''तब भी नहीं।'' सुदास महदेई को वृक्ष की सघन छाया में लाकर बोला।

''तो क्या उनसे भी युद्ध करोगे?'' महदेई अपना शिथिल गात्र सुदास को अर्पित करते बोली।

''नहीं उसकी आवश्यकता नहीं आयेगी।'' कहकर सुदास ने अपने अधर महदेई के अधर पर रगड़े।

''तो ..'' कहते हुए महदेई के नेत्र निमीलित हो गये।

''उनकी सहमति से मैं तुमसे विवाह करूंगा।'' सुदास ने अपने होंठ महदेई के वक्ष पर रखे।

''जो उन्होंने सहमति न दी?'' महदेई अपने होंठ सुदास के कान के पास ले जाकर बोली।

''तो तुम्हें साथ लेकर पलायन कर जाऊँगा कहीं।'' सुदास, महदेई की देह से द्रापि का आवरण हटाते बोला।

'एक आर्य सूरि जिसने पक्थों और पणियों को पराजित किया हो, महान अतिथिग्व का प्रतापी पुत्र पलायन करेगा।'' महदेई हंसी।

महदेई की हंसी सुनकर सुदास बिना कुछ कहे महदेई की बांह पकड़ कर उसे एक शिलाखण्ड पर ले आया। महदेई सुदास को देखकर शिलाखण्ड पर उल्लास भाव से लेटते हुए बोली, ''स्मरण रहे जो आपने पलायन किया तो मुनि अपनी ऋचाओं में तुम्हें पणियों एवं किरातों की भांति धिक्कारेंगे।''

''तुम्हारे लिए ये भी स्वीकार है.'' अबकी बार सुदास ने अपने होंठ महदेई के कान के समीप लाकर बोला।

सुदास की बात सुनकर पणि तरूणी महदेई के नेत्र बन्द हो गये और उसने अपनी बाहें और सघन जंघायें शिलाखण्ड पर फैला दी। सुदास ने देखा

महदेई के होंठों पर मन्द-मन्द मुस्कान खेल रही है. मानो वो किसी स्वप्न लोक में विचर रही हो। उसे यूँ स्वप्न लोक में विचरते देख सुदास सधे पांवों से उठा ओर सघन वृक्षों के मध्य में चला गया।

महदेई कुछ समय यूँ ही नेत्र बन्द किये मुस्कुराते होंठों से शिलाखण्ड पर लेटी रही। तत्पश्चात उसके होंठों से निकला ''सुदास'' उसके होंठों ने प्रथम बार सुदास का नाम लिया। उसे अच्छा लगा। यूँ सुदास का नाम लेना क्यों न अच्छा लगता इसके पीछे कारण भी था।

उसके पिता युद्ध में पराजित हुए थे। उन्हें बन्दी बनाया गया। मुनि वशिष्ठ उनका वध कर देना चाहते थे किन्तु सुदास बीच में आ गया। उसने उनके प्राण बचा लिये। भले ही उनसे उनकी गौएं और कोष दान करवा लिया गया।

उसी दिन से महदेई के हृदय में सुदास के लिए सम्मान था। किन्तु आज उसे अनुभव हो रहा था वो सुदास से प्रेम करने लगी है। इसी प्रेम से विभोर होकर उसने अपने प्रियतम का नाम पुकारा - ''सुदास'' उसे अच्छा लगा।

उसने फिर पुकारा - ''सुदास'' फिर पुकारा और बार-बार पुकारा ''सुदास .. सुदास''

उसे लगा सुदास उसके कान के पास अपने होंठ लाकर कहेगा कि हाँ महदेई मैं प्रेम करता हूँ तुमसे और तुम्हारा श्रंगार करना चाहता हूँ। इस अभिलाषा में महदेई की होठों से निकला ''सुदास'' , ''सुदास'' , ''सुदास''

सुदास के होंठ अब भी महदेई के कान के पास नहीं आये।

''सुदास'' , ''सुदास'' , ''सुदास'' कहते हुए महदेई के नेत्र खुल गये।

शिलाखण्ड पर उसने इधर-उधर हाथ चलाया। सुदास का स्पर्श न पाकर वह चौंक कर बैठ गई। घबराहट में क्षण भर में ही उसने चारों ओर देख डाला। कहीं भी सुदास दिखाई न दिया। 'कहां गया होगा?'

''कहीं वो .? नहीं-नहीं सुदास ऐसा नहीं कर सकता .. वो उसे यूँ छोड़कर नहीं जा सकता?'' महदेई स्वयं को समझाते हुए बुदबुदाई। फिर एकाएक ''परन्तु क्यों नहीं कर सकता?'' महदेई ने सोचा ''सुदास भी तो आर्य ही है। इन्द्र ने छल से ही तो मेघवृत को मारा था। सुदास भी तो इन्द्र को अपना देवता मानता है। तो क्या?.. सुदास ने उसके साथ छल किया है। यदि छल किया है तो यूँ वन में छोड़कर जाने से उसका क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है। वो तो वैसे भी एक दासी है अब ..''

सोचते-सोचते महदेई के नेत्र बन्द हो गये। स्वयं की दशा में अश्रु उसकी आँखों से छलकना ही चाहते थे तभी उसी सुमधुर स्वर सुनाई दिया ''महदेई''

उसने आँखें खोली, सामने सुदास खड़ा था। ''कहां चले गये थे?'' महदेई रूआंसी होते हुए बोली।

''तेरे श्रृंगार के लिए पुष्प लाने गया था।'' सुदास के बाहुपाश में ढेरों कमल पुष्प थे। उन पुष्पों को उसने महदेई पर बिखेर दिया।

महदेई मन ही मन अपनी सोच पर लज्जित हुई और सुदास के प्रति अपनी सोच को सुधार कर बोली, ''सुदास तुम मेरे प्रिय हो। ओ मेरे प्रियतम! कर दो मेरे अंग-अंग का श्रृंगार। कपोलों पर पुष्प रस मल दो। कुचों पर कमल का चित्र अंकित कर दो। मेरी सघन जंघाओं को मकरन्द से सुरभित कर दो। ओ प्रियतम! तनिक मेरे निकट आओ और मेरी तरंगित पिंडलियों को मसल कर उनमें रक्त का प्रवाह सुचारू कर दो।''

सुदास ने महदेई को श्रृंगारित किया। कुचों पर कमल के पुष्प का रस मला कपोलों पर लोध रेणु मला। अधरों पर अधर राग। अलकों में छोटे-छोटे नारंगी रंग के पुष्प थे। महदेई श्रृंगारित होकर वन कन्या सी चमक उठी। अब सुदास ने हंसकर पूछा, ''कहो महदेई अब तुम्हारा मैं और क्या करूं?''

महदेई सुदास को बंकिम नेत्रों से देखकर बोली, ''अब मुझे चुम्बन कर, मुझसे रमण करो।'' कहकर उसने अपनी बाहें फैला दी।

सुदास आनन्द से आवेशित होकर महदेई को अपनी बलिष्ठ बाहों में उठाकर सीने से लिपटा लिया और उसके प्रत्येक अंग के अनगिनत चुम्बन लिये।

महदेई ने भी अपनी भुजायें किसी पुष्प लता की तरह सुदास के कंठ में लपेट कर उसके अंग-प्रत्यंग का चुम्बन करने लगी।

सुदास ने अब उसे शिलाखण्ड पर लिटाकर उसके वक्षों पर अपना मुख रख दिया। महदेई अपनी लाल जीभ अपने दाँतों में दबाकर सीत्कार से स्वर में बोली, ''सुदास मेरा यौवन तुम्हारा है किन्तु ..''

''किन्तु क्या?'' सुदास ने उसके नेत्रों में झांका।

''मैं पणि कन्या हूँ मेरी भी मर्यादा है''

''कैसी मर्यादा महदेई?''

''यही कि अब तुम्हारे अतिरिक्त मैं किसी अन्य के साथ रमण को प्रस्तुत न हो सकूंगी। क्या तुम मेरी इस मर्यादा का मान रखने को प्रस्तुत हो।''

''प्रस्तुत हूँ महदेई'' कहकर सुदास ने अपनी भुजा उसके कंठ में डालकर उसे शिलाखण्ड से उठाकर सीने में समेट लिया।

''तो तुम प्रेम करो, मैं सहमति देती हूँ''

तदुपरान्त सुदास और महदेई अस्त होते सविता के मद्धिम प्रकाश में आलिंगनबद्ध होकर रमण करने लगे। इस बात से अनभिज्ञ कि एक जोड़ी क्रोधित नेत्र उन्हें देख रहे थे।

***

त्वं पुरं चरिष्णवं बधे! शुष्णस्य सम्पिणक
त्वं मा अनुनरो अधहिता यद्रिन्द्र हव्यो भुवोः।

(तुमने वज्र से शुष्ण के गमनशील पर ध्वस्त किये। हे इन्द्र! तुम पुकारने योग्य हो, क्योंकि तुम प्रभा का अनुसरण करते हो।)

उदव्रज पानी एवं गोचर भूमि वाला पुर, किरात सम्राट शंबर की राजधानी शंबर एवं उसके सहायक अत्यन्त वीर योद्धा थे जिन्हें आर्य दिवोदास और सहायक इन्द्र की सहायता प्राप्त करके भी पराजित कर पाने में अब तक असमर्थ थे।

तृत्सुग्राम में युद्ध की सूचनायें आती रहती थी। परन्तु इस समय तृत्सग्राम में युद्ध की एक सूचना से गहन अप्रसन्नता एवं उदासी छा गई। शंबर के सबसे निकट सहयोगी शुष्ण ने आर्यों को भीषण पराजय दी थी और अब शुष्ण का सामना करने के लिए आर्जुनेय कुत्स गया हुआ था।

वशिष्ठ चाहते थे कि इस युद्ध में आर्जुनेय कुत्स की सहायता हेतु सुदास जाये। उन्हें सुदास के पौरूष और भुजदण्डों पर पूर्ण विश्वास था। यदि वो युद्ध में प्रस्तुत हुआ तो निश्चित रूप से आर्यों का पलड़ा भारी हो जायेगा।

सुदास को युद्ध में भेजने के पीछे वशिष्ठ के दो उद्देश्य थे। पहला उद्देश्य था - आर्यों की विजय और दूसरा - वशिष्ठ सुदास को किसी भी दशा में प्रतर्दन से श्रेष्ठ सिद्ध करके उसे आर्यों का राजा बनाना था। वो जानते थे यदि प्रतर्दन राजा बना तो उसका पुरोहित भारद्वाज एवं भारद्वाज के पश्चात उनका पुत्र गर्ग होगा। वशिष्ठ को अपना भविष्य सुदास के साथ ही सुरक्षित दिखाई पड़ रहा था।

सुदास जिसने मैतावरूण अगस्त्य के रोहिणी से विवाह के प्रस्ताव को मना कर दिया था। क्योंकि वो कुछ दिनों स्वतंत्रता से अपना जीवन व्यतीत करना

चाहता था। वही सुदास अब एक पणि कन्या के प्रेमपाश में था। वो पणि कन्या जो एक प्रतिष्ठित पणि की पुत्री थी और जिसे विजयी करके दासी बना लिया गया था। यद्यपि ये पणि कन्या महदेई मुनि भारद्वाज की सेवा में थी किन्तु मुनि इस समय अतिथिग्व दिवोदास के साथ शंबर युद्ध में व्यस्त थे। अतः सुदास और महदेई के प्रेम के मध्य कोई कठिन व्यवधान नहीं था।

यद्यपि सुदास और महदेई को लगता था कि उनके प्रेम के मध्य कोई व्यवधान नहीं है, किन्तु ऐसा नहीं था। एक जोड़ी नेत्रों को उनका ये प्रेम कतई नहीं भाता था और ये एक जोड़ी नेत्र वशिष्ठ के थे। जो भारद्वाज की अनुपस्थिति में तृत्सुग्राम के एक आश्रम में निवास कर रहे थे।

एक दिन जब वशिष्ठ अपने आश्रम में टहलते हुए सुदास को युद्ध में भेजने की युक्ति पर विचार कर रहे थे तो उन्हें उपवन से पुष्प चुनकर आती महदेई पर पड़ी। जब से भारद्वाज दिवोदास के साथ शंबर से युद्ध हेतु उदव्रज गये है, तब से महदेई वशिष्ठ के पूजन की व्यवस्था किया करती है। यद्यपि महदेई पणि कन्या थी और आर्य पूजा पद्धति उसे तनिक न सुहाती थी, किन्तु विवश होकर उसे यूँ करना पड़ता था। उसके पिता को अपनी निधि समेत उसे आर्यों को दान करना पड़ा था। सो अब महदेई एक दासी थी और यूँ उसे अब अपनी इच्छा से कुछ करने का कोई अधिकार नही था। यद्यपि महदेई के मन में कई बार ये विचार भी आया कि वो चुपके से वहां से भाग जाये या फिर आत्महत्या कर ले। पर महदेई जानती थी यदि उसने ऐसा किया तो आर्य उसके पिता के प्राण ले लेंगे। और फिर अब महदेई का मन आर्य ग्राम में लगने लगा था। इसका कारण अतिथिग्व दिवोदास का पुत्र सुदास था, जो महदेई से प्रेम करने लगा था।

सिर पर उपवर्हण (चादर) डाले और हाथ में चुने पुष्प का पात्र लिए जब महदेई वशिष्ठ के पार्श्व से नतमुख कुटीर के भीतर जाने लगी तो वशिष्ठ ने कहा, ''सुनो दासी!''

आदेश पाकर महदेई सहम कर खड़ी हो गई। न जाने क्यों महदेई को वशिष्ठ से बहुत भय लगता था। उसे वशिष्ठ की आँखों में जाने क्यों अनार्यों के लिए अत्यन्त घृणा दिखाई पड़ती थी।

''आज हवि में गवाशिर और पुरोडाश भी बना लेना।'' वशिष्ठ ने कहा और महदेई ''जो आज्ञा महामुनि'' कहकर बड़े वेग से पर्ण कुटी के भीतर यूँ प्रवेश कर गई जैसे कोई अवि (बकरी) के सम्मुख सिंह आ गया हो।

महदेई पर्ण कुटी में चली गई और वशिष्ठ की आँखें सोच की मुद्रा में सिकुड़ गई।

***

समस्त तृत्सुग्राम में सुदास आज व्याकुलता से भ्रमण कर रहा है।

कुछ दिनों के लिए सुदास पुरूग्राम में फैली अव्यवस्था को व्यवस्थित करने गया था। जब से शंबर के साथ आर्यों का युद्ध आरम्भ हुआ था, तब से किसी न किसी आर्यग्राम में अव्यवस्था फैलती ही रहती थी। कभी-कभी तो किरात अपने किसी उत्साही नायक के नेतृत्व में किसी आर्यग्राम पर धावा बोल देते हैं और अपनी उन गौओं को वापस ले जाते, जिन्हें आर्य उनसे किसी युद्ध में छीनकर लाये होते थे।

जब सुदास पुरूग्राम जा रहा था तो महदेई ने उसके कंठ से लगकर कहा, ''आर्य सूरि .. न जाने क्यों मेरे हृदय में भय व्याप्त है.''

महदेई की व्याकुलता देखकर सुदास ने उसे धैर्य बधाते हुए कहा, ''महदेई, तुम्हारी चिन्ता व्यर्थ है, तुम्हें भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं। मैं पुरूग्राम को व्यवस्थित करके शीघ्र ही लौट आऊँगा।''

सुदास पुरूग्राम चला गया और महदेई आशंकित मन उसे स्वयं से दूर जाते देखती रही।

***

आज मध्यान्ह में सुदास तृत्सुग्राम आया था मुनि वशिष्ठ को पुरूग्राम की सूचना देकर वो महदेई की खोज में निकल गया। मध्यान्ह से संध्या होने को आई किन्तु उसे महदेई का कोई चिन्ह दिखाई नहीं दिया। समस्त तृत्सुग्राम में कोई भी व्यक्ति महदेई के संदर्भ में सुदास को कोई सूचना नहीं दे सका।

अन्ततः सुदास ने मुनि वशिष्ठ की पर्ण कुटी में जाकर उनसे महदेई के बारे में पूछा।

वह सुदास को देखते रहे फिर बोले, ''एक आर्य सूरि का एक दासी के लिए इतना चिन्तित होना ठीक नहीं।''

''किन्तु मुनि, महदेई केवल दासी ही नहीं अपितु नारी भी है और किसी की नारी के बारे में एक आर्य सूरि पूछ सकता है।''

''किन्तु सुदास किसी आर्य सूरि को अपना समय किसी दासी में यूँ व्यर्थ करना शोभा नहीं देता। फिर भी तुम अतिथिग्व के पुत्र हो, सो बताये देता हूँ कि महदेई को महामुनि भारद्वाज की सेवा में मैंने उदव्रज में भेजा था किन्तु ..''

''किन्तु क्या महामुनि?'' सुदास ने व्याकुल होकर पूछा।

''मार्ग में कुछ पणियों ने आर्य रक्षकों समेत महदेई का वध कर दिया।''

''महदेई का वध .. पणियों ने कर दिया किन्तु महदेई भी तो पणि कन्या ही थी। तो फिर वे महदेई का वध कैसे कर सकते है?'' कहते-कहते सुदास शोकाकुल होकर भूमि पर बैठ गया।

''स्वयं को संभालो सुदास .. तुम एक आर्य सूरि हो। मात्र भरतों के ही नहीं, समस्त आर्यों के सम्राट बनोगे। तुम्हें ये निर्बलता शोभा नहीं देती।'' कहकर वशिष्ठ ने सुदास को कंधे से पकड़कर उठाया।

''किन्तु महामुनि पणियों द्वारा एक पणि कन्या का वध?'' सुदास ने अश्रु भरी आँखों से मुनि वशिष्ठ को देखकर कहा।

''किन्तु महदेई एक दस्यु कन्या भी थी। जो एक आर्य कुमार के निकट आ रही थी। कदाचित दस्युओं को ये अच्छा नहीं लगा होगा कि उनकी कन्या किसी आर्य से सम्बन्ध बनाये, वो भी दैहिक..''

''किन्तु महामुनि महदेई मुझे प्रेम करती थी, ये पणियों को कैसे पता चला?'' सुदास के नेत्रों से अश्रु की बूंदे ढलक पड़ी।

''तृत्सुग्राम में दास-दासी के रूप में रह रहे किसी दस्यु ने ये किया होगा।''

वशिष्ठ की बात सुनकर सुदास कुछ देर मौन रहा और फिर मुष्टि तान कर बोला इन पणियों का इतना दुस्साहस .. मैं आज ही अपनी अयसि से इन पणियों के सिर काट कर समस्त तृत्सुग्राम को पणिमुक्त कर दूंगा।''

''शांत सुदास शांत ..'' वशिष्ठ बोले।

''नहीं महामुनि नहीं! .. आप मुझे शांत मत कीजिए। अब पणियों को महदेई के वध का मूल्य चुकाना ही होगा।''

''सत्य कह रहे हो सुदास, मैं भी यही चाहता हूँ कि तीव्रता से दस्युओं का विनाश हो।''

''और फिर भी आप मुझे शांत रहने को कह रहे हैं''

''नहीं सुदास .. मैं तो ये कह रहा हूँ तुम दस्युओं से प्रतिशोध लो जिससे उनका विनाश हो जाये।''

''वही तो मैं करने जा रहा था महामुनि।''

''नहीं सुदास जो दस्युओं से प्रतिशोध लेना है तो तुम्हें उदव्रज जाना होगा। अपने पिता दिवोदास को सहायता देनी होगी शंबर के विरूद्ध।''

मुनि वशिष्ठ की बात सुनकर सुदास आवेश में बोला, ''ऐसा ही होगा महामुनि। मैं कल प्रातः ही उदव्रज की ओर प्रस्थान करूंगा।''

सुदास की बात सुनकर वशिष्ठ के होंठों पर एक कुटिल मुस्कान नृत्य कर उठी।

***

''शुष्ण और शंबर दोनों ही बड़े योद्धा है और जब तक ये दोनों साथ रहेंगे, इन्हें पराजित कर पाना कठिन कार्य है।'' महामुनि अगस्त्य ने अपने समक्ष बैठे जनों से कहा।

''किन्तु महामुनि हमने पणियों को पराजित किया। उनके पुरों का ध्वस्त किया। फिर आप हमें इन किरातों को बड़ा योद्धा बताकर भयभीत क्यों करना चाह रहे हैं।'' आर्जुनेय कुत्स ने अपनी अयसि को एक हाथ से दूसरे हाथ में लेते हुए कहा।

''आर्जुनेय कुत्स, तुम्हारा उत्साह देखकर मेरे हृदय की इच्छा भी बलवती हो उठी है।'' कुत्स की बात सुनकर महामुनि भारद्वाज ने ओजपूर्ण वाणी में कहा, ''सुनो वीर आर्जुनेय कुत्स, मैं तुम्हें शुष्ण के विरूद्ध अभियान में आर्यों का नायक बनाता हूँ और वीर भुज्य को तुम्हारा सहायक नियुक्त करता हूँ।''

''महामुनि भारद्वाज मैं निश्चित रूप से आपके आशीर्वाद और इन्द्र की कृपा से शुष्ण का नाश करूंगा।'' आर्जुनेय कुत्स मुनि भारद्वाज को शीष झुकाते हुए बोला।

''और मैं भी आपकी आशाओं को पूर्ण करने का सम्पूर्ण प्रयास करूंगा।'' भुज्य भी उत्साहित था।

भुज्य और आर्जुनेय कुत्स का उत्साह देखकर महामुनि अगस्त्य अपने स्थान से उठकर बोले, ''अब हमें ये युद्ध शीघ्र समाप्त करना होगा। इस युद्ध की समाप्ति पर ही मैं विन्ध्य पार दक्षिण का प्रवास कर सकता हूँ। जहां रक्षराज रावण यहां से गये किरातों और पणियों को रक्ष संस्कृति में सम्मिलित कर रहा है। शीघ्र ही हमें वहां आर्य संस्कृति की स्थापना के लिए किसी आर्य नायक की आवश्यकता होगी।

''तो क्या महामुनि अगस्त्य किसी आर्य नायक का चयन दक्षिण अभियान हेतु किया हैं?'' मुनि भारद्वाज ने पूछा।

'''नहीं अभी नहीं।'' कहकर मुनि अगस्त्य कुछ समय मौन रहकर पुनः बोले, ''अभी हमें अपना पूरा ध्यान शंबर और उसके सेनापतियों पर लगाना है।

स्मरण रहे, आर्जुनेय कुत्स एवं भुज्य, शंबर के सेनापति शुष्ण, अशुष, कुयव एक दुर्दम्य योद्धा हैं। इस युद्ध में हमें इन्द्र के अतिरिक्त अन्य आर्य नायकों की भी आवश्यकता पड़ेगी।''

''अन्य आर्य नायक?'' मुनि भारद्वाज ने अगस्त्य से प्रश्न किया।

''हाँ मुनि भारद्वाज इसलिए मैंने कोशल नरेश दशरथ से इस युद्ध में सहायता का निवेदन किया है।''

''दशरथ, शंबर के विरूद्ध अतिथिग्व दिवोदास से श्रेष्ठ सहायक सिद्ध होंगे। शंबर से अन्तिम युद्ध बड़ा ही भयंकर होगा अतः हमें उसके सहायकों का वध करके उसे निर्बल बनाना होगा।''

''वो कैसे?'' भारद्वाज ने अगस्त्य से पूछा।

''शंबर की शरद पुरियों को विध्वंस करके।'' ये कहकर महामुनि अगस्त्य पर्ण कुटी से बाहर चले गये।

***

अतिथिग्व दिवोदास ने महामुनि अगस्त्य की योजना में सूक्ष्मता से विचार किया, और शुष्ण के विरूद्ध उसने आर्जुनेय कुत्स और भुज्य के नेतृत्व में आर्य सेना को सज्ज किया।

आर्जुनेय कुत्स ने कुछ भेदिये शुष्ण के चरिष्णु (चलायमानपुर) भेजे थे। ये भेदिये पणि थे। वो पणि जिनके परिवार के सदस्यों को कुत्स ने बंदी बना रखा था। पणियों को ये आज्ञा थी यदि वे शुष्णपुरी की सूचना नहीं लाये तो उनके सदस्यों का वध कर दिया जायेगा।

पणियों का स्वयं का राज्य समाप्त होने के पश्चात वो यत्र-तत्र जीविका हेतु भटक रहे थे। पणि ताम्र के अस्त्र-शस्त्र बनाने में सिद्धस्त थे। अपने इन अस्त्र-शस्त्र को विक्रय हेतु वे किरातों की पुरियों में आते-जाते रहते थे। किरात अब तक पाषाण से बने अस्त्र-शस्त्र को ही अधिकतर प्रयोग करते थे। किन्तु अब वे धीरे-धीरे पणियों द्वारा निर्मित अस्त्र-शस्त्र भी प्रयोग करने लगे।

पणियों का यूँ किरात पुरियों में जाने का लाभ आर्जुनेय कुत्स उठाना चाहता था। वो शुष्ण पर आक्रमण करने से पूर्व उसकी कुछ आंतरिक दुर्बलताओं को पता करके उनका लाभ उठाकर शुष्णपुरी का नाश कर देना चाहता था।

कई प्रयासों के उपरान्त भी आर्जुनेय कुत्स को शुष्ण की किसी आन्तरिक दुर्बलता का पता नहीं चल रहा था। उसे बहुत प्रयासों के उपरान्त बस

इतना ही पता चल सका कि किरातों की कई पुरियों में से शुष्ण की पुरी कौन सी है। शुष्ण की पुरी में अज, अवि, गायों के साथ अश्व भी थे।

कुत्स और शुष्ण की सेनाओं का एक दो बार आंशिक रूप से आमना-सामना हुआ था, जिसमें आर्यों की बहुत क्षति हुई थी। अतः दिवोदास ने शुष्ण की पुरियों पर कुत्स को रात्रि में आक्रमण करने का परामर्श दिया।

दिवोदास के परामर्श पर आर्जुनेय कुत्स ने आशंका प्रकट की, कि रात्रि के अन्धकार में दस्युओं की शक्ति बढ़ जाती है. इससे वो कहीं हमारा ही विनाश न कर दे।

आर्जुनेय कुत्स की आशंका का निवारण करते हुए दिवोदास बोले, ''रात्रि में दस्युओं की शक्ति नहीं बढ़ जाती अपितु वे पहाड़ों, दुर्लभ मार्गों एवं सघन वनों से पूर्णतया परिचित होते हैं इसलिए वे सरलता से आक्रमण कर सकते हैं और आवश्यकता पड़ने पलायन भी कर सकते हैं जबकि हम उनके स्थलों से अपरचित होते हैं, इसलिए रात्रि के अंधकार में कर्तव्य विमूढ़ हो जाते हैं। रात्रि में कार्य करने का अभ्यास दस्यु बाल्यकाल से ही करते हैं। अतः वे उसमें पारगंत बन जाते हैं, जिसे वे अपनी माया कहकर हमें भय दिखाते हैं।''

आवश्यक सूचनायें एकत्रित करके एक रात्रि दिवोदास के परामर्श से आर्जुनेय कुत्स और भुज्य ने शुष्ण पुरियों पर आक्रमण करने की ठानी।

उदव्रज से नीचे शुष्ण की शरद चरिष्णु पर आर्जुनेय कुत्स और भुज्य ने आक्रमण कर दिया। इस अचानक हुए आक्रमण से शुष्णपुरी में कोहराम मच गया। किन्तु शुष्ण महान योद्धा था। वो तुरन्त ही अपनी पुरी से हाथ में कुलिश लेकर बाहर निकला और चिल्ला-चिल्ला कर किरात योद्धाओं को युद्ध के लिए सज्ज करने लगा।

आर्य योद्धा अचानक आक्रमण की स्थिति से घबराये किरात योद्धाओं का विनाश करने लगे। उनकी पुरियों को अग्नि लगाकर उनकी गौओं को लूटने लगे। अपनी पुरी और अपने योद्धाओं का यूँ विनाश होते देख शुष्ण अपने कुलिश को लेकर आर्जुनेय कुत्स की ओर दौड़ा। शुष्ण जानता था कि यदि उसे अपनी पुरों एवं योद्धाओं के इस अचानक आक्रमण से रक्षा करनी है तो तो उसे आर्य नायक पर काबू पाना होगा।

''जय शिश्नदेव!'' कहकर शुष्ण, आर्जुनेय कुत्स के रथ के सम्मुख जा खड़ा हुआ।

''कौन! शुष्ण?'' कहकर आर्जुनेय कुत्स अग्नि की तेज लपटों में जल रही शुष्ण पुरियों के प्रकाश में शुष्ण को पहचनाने का प्रयास करते हुए पूछा।

''हाँ शुष्ण...मैं शुष्ण हूँ .. और तुम संभवतः कुत्स हो आर्जुनेय कुत्स। रात्रि के अंधकार में यूँ घात लगाकर आक्रमण करने वाले नीच आर्य। आ यदि सामर्थ्य है तो रथ से उतरकर मेरे कुलिश का सामना कर..''

शुष्ण की बात सुनकर आर्जुनेय कुत्स रथ से कूदकर उसके सम्मुख आ गया। दोनों योद्धाओं ने एक दूसरे की आँखों में देखा और फिर अपने हाथों में लिए अस्त्रों को फेंककर एक दूसरे से गुथ गये। युद्ध करते-करते शुष्ण, आर्जुनेय कुत्स को पराजित करके उसके सीने पर बैठकर बोला, ''ये लो मेरा प्रहार..'' फिर उसने उठकर अपनी लात का प्रहार आर्जुनेय कुत्स के सीने पर किया। प्रहार इतना प्रचण्ड था कि कुत्स मूर्छित हो गया।

शीघ्र ही कुछ किरात योद्धाओं ने आर्जुनेय कुत्स को बांध लिया। अपने नायक को यूँ बन्दी अवस्था में देखकर आर्य सेना वहां से पलायन करने लगी।

***

दिवोदास निश्चिन्त था कि रात्रि में शुष्ण पर किये गये आक्रमण से आर्यों की विजय निश्चित होगी इसलिए वो अपने कुछ चुनें हुए साथियों के साथ शंबर की गतिविधियों की जानकारियां इकट्ठी करने हेतु गुप्त अभियान पर निकल गया।

महामुनि भी दक्षिण की ओर गये हुए थे। वे वहां रावण के बढ़ रहे प्रभुत्व से चिंतित थे और वहां आर्य संस्कृति की स्थापना चाहते थे।

घायल भुज्य जब बचे हुए आर्यों के साथ अपने पुर में पहुंचा तो मुनि भारद्वाज फलों का सेवन कर रहे थे। सविता उदय होकर प्रातः काल व्यतीत हो चुका था। भुज्य ने महामुनि भारद्वाज को युद्ध का सारा विवरण बताया। कि 'कैसे शुष्ण ने आर्जुनेय कुत्स को पराजित करके उसे बन्दी बना लिया। कैसे भुज्य किसी प्रकार अपने प्राण बचाकर रणभूमि से भागा।'

विवरण सुनकर महामुनि भारद्वाज बेहद चिंतित हो उठे।

आर्य इससे पूर्व भी किरातों से पराजित हो चुके थे। इसलिए मुनि भारद्वाज की चिन्ता का ये कारण बड़ा नहीं था। उनकी चिन्ता का कारण था शुष्ण द्वारा आर्जुनेय कुत्स का बन्दी बनाया जाना था। दिवोदास एवं महामुनि अगस्त्य की अनुपस्थिति में शुष्ण से आर्जुनेय कुत्स को स्वतंत्र कराना अत्यन्त कठिन कार्य

था। अब आर्यों का देव इन्द्र ही था जो इस कठिन काल में आर्यों की सहायता कर सकता था। मुनि भारद्वाज ने तुरन्त सहायता हेतु इन्द्र के पास संदेश भी भिजवाया। किन्तु वो जानते थे कि इन सब कार्यों में बहुत समय व्यतीत हो जायेगा और तब तक संभवतः शुष्ण, आर्जुनेय कुत्स को लेकर उदव्रज न चला जाये। या फिर उसका वध ही न कर दे।

आर्यों के युद्ध शिविर में इस समय प्रतर्दन के अतिरिक्त अन्य कोई योद्धा न था। प्रतर्दन महान अतिथिग्व दिवोदास का ज्येष्ठ पुत्र था। महामुनि भारद्वाज ने प्रतर्दन को भुज्य के साथ शुष्ण पर तुरन्त आक्रमण करके आर्जुनेय कुत्स की रक्षा करने को कहा।

किन्तु भुज्य पर शुष्ण का आतंक छाया था। अतः उसने अपने घायल होने की बात कहकर तुरन्त युद्ध में जा पाने में असमर्थता जताई। भुज्य को यूँ निर्बल देखकर प्रतर्दन का हृदय भी बैठने लगा। उसने भी अकेले शुष्ण के सम्मुख जाने में भय प्रदर्शित किया।

प्रतर्दन एवं भुज्य के इस निर्बलता के प्रदर्शन से महामुनि भारद्वाज अत्यन्त चिंतित हो उठे। आर्जुनेय कुत्स आर्यों का मुख्य योद्धा था, उसकी रक्षा यदि न की गई तो न सिर्फ किरातों का मनोबल बढ़ेगा अपितु आर्यों का मनोबल गिर जायेगा। वैसे भी आर्यों में इन्द्र द्वारा नहुष को अपमानित करने से आंतरिक कलह उत्पन्न हो गई थी। नहुष भी आर्य था एवं उसका अपमान कुछ आर्य जनों को उचित नहीं लगा था। महामुनि भारद्वाज को इस संकट के समय में कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था। वे व्यग्र होकर शिविर में विचर रहे थे।

कोई मार्ग न पाकर भारद्वाज ने आकाश की ओर मुख करके कहा, ''हे आर्यों के रक्षक इन्द्र! संकट की इस घड़ी में कृपया हमारे सहायक बने।''

''इन्द्र ने सहायता भेज दी है महामुनि।'' मुनि भारद्वाज ने स्वर की दिशा में देखा तो वहां कण्व पुत्र मेघातिथि खड़ा था और साथ में एक तरूण भी।

''तुम्हारे कहने का क्या तात्पर्य है कण्व पुत्र? क्या इन्द्र हमारी सहायता हेतु पहुंच गये?'' मुनि भारद्वाज ने तनिक उत्तेजित होकर पूछा।

''यही समझ लीजिए महामुनि। ये महान इन्द्र की इच्छा रही होगी, जो इस संकट की घड़ी में दिवोदास पुत्र सुदास यहां उपस्थित हुए है। अब निश्चित ही हम शुष्ण और उसके सहायक कुयव का वध करके आर्जुनेय कुत्स की रक्षा कर पाने में सफल होंगे।''

''किन्तु सुदास, शुष्ण और कुयव जैसे पराक्रमी योद्धाओं से युद्ध कर पायेगा? जबकि भुज्य एवं प्रतर्दन को उनके सम्मुख जाने में भय हो रहा है।'' मुनि भारद्वाज ने संशय प्रकट किया।

मुनि भारद्वाज का संशय दूर करते हुऐ तरूण सुदास बोला, ''आप विश्वास रखिये महामुनि मैं अपने पिता महान दिवोदास की पराक्रम गाथा पर कोई कलंक न लगने दूंगा। महदेई की शपथ आज संध्या तक शुष्ण आर्यग्राम में बन्दी होगा और उसके दण्ड निर्धारण का कार्य आर्जुनेय कुत्स के अधिकार में होगा।''

''किन्तु..''

''अब किन्तु परन्तु का समय नहीं है महामुनि'' मेघातिथि, महामुनि भारद्वाज को टोकते हुए बोला, ''अब तो अति शीघ्र आर्यजनों को एकत्र करके सुदास के नेतृत्व में दस्युओं पर धावा बोल देना चाहिए.. कहीं ऐसा न हो कि हमारे विलम्ब से आर्जुनेय कुत्स का कोई अहित हो जाये।''

मेघातिथि की ओजपूर्ण वाणी सुनकर एवं सुदास के मुख पर दृढ़ता का भाव देखकर महामुनि भारद्वाज बोले, ''जाओ फिर शीघ्र जाओ, और उस भीषण दस्यु योद्धा शुष्ण के आघातों से आर्य कुत्स की रक्षा करो। जाओ पुत्र सुदास मैं प्रार्थना करूंगा कि इस युद्ध में इन्द्र तुम्हारे सहायक रहे।''

महामुनि भारद्वाज की सहमति प्राप्त होते ही सुदास दृढ़ता के साथ वहां से चल पड़ा, साथ में कण्व पुत्र मेघातिथि भी।

शुष्ण और कुयव की चरिष्णु आर्जुनेय कुत्स को बांध कर सविता की प्रथम किरण के साथ स्थान परिवर्तन के लिए चल पड़ी थी। शुष्ण जानता था कि आर्जुनेय कुत्स को छुड़ाने के लिए आर्य जरूर धावा बोलेंगे। वो आर्जुनेय कुत्स का वध कर सकता था किन्तु वो चाहता था कि इस आर्य योद्धा को किरात सम्राट शंबर के सम्मुख उपस्थित किया जाये। किसी भी आर्य योद्धा को जीवित पकड़ना शुष्ण के लिए एक बड़ी उपलब्धि थी। शुष्ण जानता था आर्य उसे छुड़ाने का प्रयास करेंगे और यदि कुत्स को शंबर के पुर में पहुंचा दिया गया तो आर्यों के लिए उसे छुड़ा पाना एक दुष्कर कार्य सिद्ध होगा।

शुष्ण ने चरिष्णु की गति बढ़ाने को कहा। वैसे ही उसे 'इन्द्र की जयकार' का कोलाहल सुनाई पड़ा। रथ में खड़े होकर उसे देखा तो पूर्व की ओर से उसे अश्वों की टापों की ध्वनि और उनकी चाल से मार्ग से उड़ रही धूल दिखाई पड़ी।

''शायद आर्य आ गये।'' कुयव अपने रथ पर खड़े होकर शुष्ण से बोला।

''शायद हाँ .. मुझे यही आशंका थी।'' शुष्ण बोला।

''हमें मार्ग परिवर्तित कर इस समय आर्यों को भ्रमित करना चाहिए'' कुयव ने सुझाव रखा।

''नहीं, अब इसका अवसर नहीं। आर्य सिर पर आ पहुँचे हैं, अब तो उन्हें उत्तर देना ही पड़ेगा।'' शुष्ण ने अपने अश्वों की दिशा पूर्व की ओर कर दी, जिधर से आर्य जन इन्द्र की जयकार करते हुए आ रहे थे।

ज्यों ही आर्यजन अपने अश्वों की टापों से धूल उड़ाते किरातों के सम्मुख आये वैसे ही शुष्ण चिल्लाया - ''जय शिश्न देव'' कुयव समेत समस्त किरातों ने उसका अनुमोदन किया।

सुदास तीव्रगामी अश्व की पीठ पर बैठा आर्य जन का नेतृत्व कर रहा था। उसे यूँ आर्यों का नेतृत्व करते हुए देखकर कुयव हंसकर शुष्ण से बोला, ''इस शिशु को भेज दिया आर्यों ने हमें परास्त करने। आप यहीं ठहरो शुष्ण, मैं अभी इस आर्य तरूण का मेल इसके ही देव यम से करवाता हूँ..''

यह कहकर कुयव किरातों की ओर बढ़ रहे आर्यों की ओर बढ़ा। जब सुदास उससे कुछ ही दूर रह गया तो उसने सुदास को बालक कहकर लौट जाने को कहा। किन्तु सुदास ने जब उससे कहा कि वो उससे भयभीत नहीं है तो कुयव ने सुदास को युद्ध की चुनौती दी।

कुछ क्षणों में ही सुदास और कुयव एक दूसरे का शक्ति परीक्षण करने लगे। शुष्ण अपने रथ में खड़े होकर इस युद्ध का आनन्द लेना चाहता था। उसे पूर्ण विश्वास था कि वह आर्य तरूण शीघ्र ही कुयव के हाथों मारा जायेगा।

सविता की किरणें सीधे शुष्ण के मस्तक पर पड़ रही थी। इस कारण वो कुयव एवं आर्य तरूण का द्वन्द देख पाने में असमर्थ था। सविता की किरणों से बचने के लिए शुष्ण ने अपने दोनों हाथों को अपने मस्तक पर छप्पर की तरह रखा और नेत्रों को खोलकर कुयव का उस आर्य तरूण से हो रहे द्वन्द को देखने का प्रयास किया।

किन्तु उसके खुले नेत्र और अधिक खुल गये जब उसने कुयव को तरूण सुदास के प्रहार से भूमि पर गिरते हुऐ देखा। विस्मय के साथ शुष्ण के खुले नेत्रों के साथ होंठ भी खुले और वो चिल्लाया ''कुयव''

शुष्ण न केवल चिल्लाया अपितु अपने मित्र की रक्षा हेतु रथ से कूदकर उस ओर भागा भी। किन्तु जब तक वो कुयव के समीप पहुंचता तब तक वो सुदास के प्रहारों से त्रस्त होकर रक्त वमन करता हुआ मृत्यु को प्राप्त हो चुका था।

''दुष्ट आर्य .. ठहर तो तनिक'' कहकर क्रोध से कांपता हुआ शुष्ण सुदास पर झपटा।

शुष्ण एक महान योद्धा था, उसने आर्जुनेय कुत्स को पराजित किया था। उसे आशा थी वो शीघ्र ही इस तरूण आर्य पर नियन्त्रण कर लेगा। किन्तु उसकी ये आशा तब निराशा में परिवर्तित होने लगी, जब सुदास के प्रहार उसे इन्द्र के वज्र के समान लगने लगे।

शुष्ण को प्रतीत हो रहा था कि उसके सम्मुख युद्ध करने वाला कोई आर्य तरूण नहीं अपितु इन्द्र है। धीरे-धीरे सुदास के प्रहार शुष्ण की शक्ति को क्षीण कर रहे थे। अन्ततः अन्त में सुदास के तीक्ष्ण प्रहारों ने महायोद्धा शुष्ण को पूर्णतया निर्बल कर दिया। उस समय शुष्ण ने अविश्वास से सुदास की ओर देखा, जब सुदास ने उस पर पूर्ण नियन्त्रण स्थापित करते हुआ पूछा, ''आर्जुनेय कुत्स कहां है?''

***

पुरोडाश और करम्भ के हवि के बाद इन्द्र को गर्म ऊन के कपड़े से छना सोम प्रस्तुत करते हुऐ मेघातिथि ने कहा, ''..और हे इन्द्र! इस प्रकार वो कृष्णवर्णी दस्यु इस समय हमारी एक कोठरी में बन्दी है।''

''और तुम कह रहे हो उसे शुष्ण को जिसने आर्जुनेय कुत्स को पराजित किया था उसे दिवोदास के अवयस्क पुत्र ने बन्दी बनाया है?'' इन्द्र ने छने हुऐ सोम का पान करते हुए यूँ पूछा मानो उन्हें इस पर अभी भी अविश्वास हो कि सुदास जैसा सुकुमार प्रतीत होने वाले बालक ने इस दुष्कर कार्य को भली-भांति सम्पन्न कर दिया है।''

''हाँ देव, किन्तु ये सब आपकी कृपा से संभव हो पाया।'' मेघातिथि ने करबद्ध निवेदन किया।

''तो फिर हमारी इस कृपा पर ऋचाओं का सृजन होना चाहिये।'' सोमपान करता हुआ इन्द्र मुस्कुराया।

''जैसी देव की आज्ञा।''

''न केवल मेरी कृपा की ऋचायें अपितु ऋचाओं का मर्म भी कुछ इस तरह.. जैसे आर्जुनेय कुत्स की रक्षा मैंने स्वयं शुष्ण से की हो।''

''जी अवश्य'' मेघातिथि का अनुमोदन जानकर इन्द्र उठता हुआ बोला, ''तो फिर मैं उस कृष्णवर्णी को त्वरित दण्डित करना चाहूँगा।''

''हम भी इस शुभ कार्य की प्रतीक्षा कर रहे थे। आईये देव, इस ओर आईये। इधर ही वो दस्यु नियन्त्रित करके रखा गया है।'' कहकर मेघातिथि एक ओर चल दिया एवं उनका अनुसरण करते हुए उनके पीछे इन्द्र। पदचाप के स्वरों से शुष्ण ने मुख उठाकर देखा। सम्मुख इन्द्र खड़ा था। हरित मूंछ-दाढ़ी, पीतकेशी, ताम्र से दृढ़, सोमपान से बलवान, मस्तक पर सुशिप्र (सुमुकुट) एवं हाथ में सोम का चमस (पात्र)।

''ओह, छली इन्द्र! अनगिनत निर्दोषों से छल करने वाले, असंख्यों को बलात दास बनाने वाले, अकारण शिशुओं का वध करने वाले, स्त्रियों से बलात् शय्या सहचरी करने वाले।''

यह कहकर शुष्ण ने मुख तनिक ऊपर करके इन्द्र की ओर थूक दिया। थूक से बचने के लिये इन्द्र एक ओर झुका तो सन्तुलन बिगड़ने से एक ओर जा गिरा। .. सिर से सुशिप्र और हाथ से सोम का चमस छिटक कर दूर जा गिरा।

इन्द्र को यूँ गिरते देख शुष्ण अट्ठाहस करके हंसते हुऐ बोला, ''बस यही हो तुम बली इन्द्र, जिसे आर्यजन देव कहते हैं।''

इन्द्र के पार्श्व में खड़े मेघातिथि ने उन्हें संभाला और भूमि पर पड़े सुशिप्र को पुनः उनके मस्तक पर व्यवस्थित करते हुए तनिक दूर खड़े एक आर्यजन से कहा, ''जाओ जाकर देव के लिए सोम का चमस ले आओ।''

''नहींऽ'' इन्द्र ने दहाड़ते हुए कहा, ''सोम का चमस नहीं, मेरा वज्र लेकर आओ।''

इन्द्र की बात सुनकर वहां खड़ा एक आर्यजन भागकर उनका वज्र उठा लाया। वज्र को उस आर्यजन के हाथ से लेकर उसका एक प्रहार शुष्ण पर करते हुए इन्द्र बोला, ''देख आज मैं कैसे तेरी कृष्णवर्णी त्वचा छीलता हूँ''

''अरे इन्द्र! जो तू शक्तिमान है, तो मेरे बंधन खोलकर अपनी शक्ति परीक्षण का एक अवसर दे'' वज्र के प्रहार से कराहते हुए शुष्ण बोला।

''तू देव की शक्ति परीक्षण करेगा।'' कहकर मेघातिथि ने शुष्ण के कटिबन्ध में पांव का प्रहार किया। वो कराह कर लुढ़क गया। मेघातिथि को रोककर इन्द्र ने आगे बढ़कर शुष्ण की जांघों के जोड़ पर स्थिति अण्डकोष पर

अपना पांव रखकर कहा, ''दुष्ट कृष्णवर्णी मैं तुझे मार कर तेरे सारे जनों को समाप्त करूंगा। तेरी सारी मायावी चरिष्णुपुर को ध्वस्त कर दूंगा। तेरी स्त्रियां आर्यों की दासी बनेंगी। तेरे आयसी (पाषाण) दुर्ग तोड़कर वहां आर्यों की गौओं हेतु चरागाह बनाऊँगा।''

इतना कहकर इन्द्र ने समस्त शक्ति से अपने पांव से शुष्ण के अण्डाकोश को मसल दिया। वो भीषण पीड़ा से चीत्कार कर उठा। शुष्ण की इस पीड़ा में वृद्धि करते हुए इन्द्र उस पर पूर्ण शक्ति से वज्र प्रहार करने लगा। शुष्ण की मार्मिक चीखें गूंज उठी। तदुपरान्त इन्द्र ने शुष्ण के सिर पर वज्र प्रहार किया और एक अन्तिम चीख के साथ शुष्ण शांत हो गया।

***

शुष्ण के वध के बाद दस्युओं के हृदय में भय व्याप्त करने के लिए परूष्णी के तट पर उसकी खाल छीली गई। उसके बच्चों समेत उसके समस्त परिवार जनों का निर्ममतापूर्वक वध कर दिया गया। स्त्रियों का बलात्कार करके उन्हें आर्यजनों के कुटीरों में कार्य करने हेतु रख दिया गया।

शुष्ण के वध से शंबर की शक्ति आधी रह गई और भारद्वाज और वशिष्ठ से मुनियों ने दिवोदास से इसका लाभ उठाने को कहा। दिवोदास अपने सहायकों के साथ शंबर युद्ध की योजना बनाने लगा।

शुष्ण के पुरों की सभी स्त्रियों को दास बना लिया गया था। उनमें से एक उसकी पुत्री थी। लाखई नाम की। यद्यपि किरातों द्वारा महदेई के वध से सुदास किरातों पर अत्यन्त क्रोधित था फिर भी न जाने क्यों उसे लाखई के बड़े-बड़े नेत्रों में डबडबाते अश्रु उसके हृदय को कचोट जाते। उसे यूँ ही प्रतीत होता मानो लाखई के रूप में महदेई लौट आई हो।

वशिष्ठ की भविष्य की समस्त आशा सुदास के राजा बनाने पर निर्भर थी। यही कारण था उनके नेत्र सदैव सुदास का पीछा किया करते थे। उसके चतुर नेत्रों से सुदास के नेत्रों में लाखई के लिए उत्पन्न हुई दया छुप न सकी।

यद्यपि वशिष्ठ आर्यों की रक्त शुद्धता बनाये रखने के घोर पक्षधर थे फिर भी उन्होंने सुदास को लाखई के प्रति नहीं उकसाया और उसे किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने को प्रेरित किया। जहां वो दस्यु कन्या अपना खोया मान-सम्मान प्राप्त कर सके।

लाखई के लिए ये सुरक्षित स्थान शंबर की आयसी थी। और यूँ एक रात्रि वशिष्ठ की प्रेरणा से सुदास लाखई को लेकर चुपके से शंबर आयसी की ओर निकल पड़ा।

सुदास और लाखई के साथ विश्पला थी। ये वशिष्ठ के किसी मित्र मुनि की पुत्री थी जिनका दस्युओं के साथ युद्ध में वध कर दिया गया था। प्रत्यक्ष रूप से वशिष्ठ ने सुदास एवं लाखई से कहा था कि ये मुनि कन्या उनकी सहायता एवं देखभाल के लिए है। किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से वो वशिष्ठ की प्रेरणा से दस्यु से प्रतिशोध लेने की अभिलाषा रखती थी। दुर्गम मार्गों पर कई दिनों के सफर के उपरान्त सुदास, लाखई एवं विश्पला शंबर की मुख्य आयसी के समीप पहुँचे। ये तीनों अश्वों की सवारी से यहां तक पहुँचे। लाखई शंबर की आयसी जानती थी। वह अपने पिता के साथ वहां कई चतुर्मास बिता चुकी थी। शंबर की आयसी देखने के पश्चात लाखई के विषाद युक्त मुख पर कई दिवस पश्चात प्रसन्नता झलकी।

प्रसन्नता के मारे होंठों से बिना स्वर निकाले जब तर्जनी से विश्पला ने आयसी की ओर इंगित किया तो सुदास समझ गया यही शंबर की मुख्य पुरी है। अश्व से उतरकर वे तीनों एक पीपल वृक्ष के नीचे सुस्ताने लगे। अश्वों को वहां पर्वतों में हरी घास खाने के लिए छोड़ दिया, वे चरते-चरते वहां से दूर निकल गये। इन तीनों को भी अत्यधिक थकान के कारण निद्रा ने आ घेरा।

सबसे पहले सुदास के नेत्र खुले। सिर हिलाने का उसका प्रयास निष्फल हो गया। उसकी इन्द्रियों ने उसे सूचित किया कि वो बंधन में है। शीघ्र ही वो ये भी जान गया, विश्पला एवं लाखई भी उसी प्रकार से बंधन में है।

शंबर के आयसी रक्षक गुप्तचरों ने उन्हें बन्दी बना लिया था और अब उन्हें किसी गुप्त मार्ग से आयसी के भीतर लेकर जा रहे थे। सुदास ये नहीं समझ पा रहा था कि शंबर के सैनिकों ने कृष्णवर्णी लाखई को क्यों बंदी बनाया है।

किरात सैनिकों ने तीनों को एक अंधेरी कोठरी में डालकर किवाड़ों पर बाहर से सांकल लगा दिया। कुछ देर बाद दो किरात किवाड़ खोलकर भीतर आये और मिट्टी के चमस में सुरा दे गये। विश्पला एवं सुदास को सुरा नहीं भाती थी। आर्यग्रामों में तो उनके लिए ऊनी कपड़ों से छना सुगन्धित सोम सदैव उपलब्ध रहता था। सुरा के साथ एक पात्र में अज के मांस के कुछ भुने हुए टुकड़े थे।

अत्यधिक थकान एवं भूख के कारण विश्पला एवं सुदास ने सुरापान करते हुए उनका भुना मांस खाया। लाखई ने भी सुरा पी एवं मांस खाया।

भोजन के उपरांत वे तीनों ही कोठरी की कच्ची दीवारों के साथ सिर टिका कर बैठ गये। शीघ्र ही नींद ने उन्हें आ घेरा।

बन्द कोठरी के कारण सुदास को सविता उदय का भी भान नहीं हुआ। किन्तु वो जग गया था। शीघ्र ही उसे अनुभव हुआ कि अब उनके साथ कोठरी में लाखई नहीं हैं। संभवतः ये सुदास पहले से जानता था इसलिए चुपचाप बैठा रहा। लाखई शंबर के सहायक शुष्ण की पुत्री थी और शंबर उसे अधिक समय तक यूँ अंधेरी कोठरी में नहीं रख सकता था। उस कोठरी में तो कतई नहीं जहां पीतकेशी आर्यों को बन्दी बनाकर रखा गया हो।

'चर्र.र.र' की ध्वनि के साथ किवाड़ खुले और इस ध्वनि से विश्पला उठकर बैठ गई जो अब तक सो रही थी। सुदास पहले ही जगा हुआ था।

किरात सैनिक उन्हें स्नानागार में ले गये। ये स्नानागार लौह ईटों (कच्ची मिट्टी की बनी ईटों को आग में तपाकर) के बने थे। स्त्री एवं पुरूषों के लिए पृथक-पृथक स्नानागार थे। स्त्री स्नानागार में आकर विश्पला ने उत्तरसाग (चादर) कचुक एवं अन्तरवस्त्र उतार दिये। अब वो पूर्णतयः नग्न थी। अपने नेत्रों से विश्पला ने स्वयं को निहारा - फूले हुए वक्ष, मोटी मांसपेशियों वाली बांहे और जंघाएं। विश्पला एक अच्छी तैराक थी, उसकी ये पुष्ट देह इसी का ही परिणाम था। नदी में तैरना एक अच्छा व्यायाम है। विश्पला पूर्णतयः नग्न होकर नदी में घंटों तैरने का आनन्द लिया करती थी। आर्यग्राम में यहां किरात ग्रामों के जैसे स्नानागार नहीं थे। निश्चय ही आर्यों को बहुत सी चीजें किरात एवं पणियों से सीखनी थी। किन्तु वशिष्ठ एवं भारद्वाज जैसे मुनि इसका निषेध करते थे।

'उ..हूं.. वशिष्ठ।' जल में हाथ भिगोते हुए विश्पला को वशिष्ठ का स्मरण हो आया। एक ओर तो वो आर्यों की रक्त शुद्धता बनाये रखना चाहता है, वहीं दूसरी ओर वशिष्ठ ने उसे शंबर को अपने पर मोहित करके उसे युद्ध से विमुख करने के लिए भेज दिया। चमड़े के पात्र से अपनी देह पर जल डालकर अपने पुष्ट वक्षों को एवं सुडौल बाहों को देखकर होंठों में बुदबुदाई.. ''शबंर जिसे दिवोदास की आयसि अब तक पराजित कर पाने में असमर्थ रही है, उसके भाग्य में विश्पला के इन अस्त्रों से पराजित होना लिखा है।''

***

सुदास को स्वयं मालूम नहीं था, शंबर का पुर कितना दुर्जेय है। आर्यों का शंबर से युद्ध छेड़े हुए न जाने कितने वर्ष बीत चुके थे। अब ये चालीसवां शरद था। इस शरद में महामुनि भारद्वाज एवं मुनि वशिष्ठ शंबर को किसी भी कीमत पर पराजित करना चाहते थे। आर्य मुनिजन ये जानते थे शंबर को सीधे युद्ध में पराजित करना सरल नहीं है। अतः उन्होंने सुदास एवं विश्पला को विशिष्ट उद्देश्य से शंबरपुर में भेजा था।

सुदास कभी भी छल में विश्वास नहीं करता। ये वशिष्ठ जानते थे इसलिए उन्होंने इस कार्य हेतु विश्पला को नियुक्त किया था। किन्तु सुदास इन किरातों एवं पणियों जैसे असुरों से घृणा करता था। इस घृणा का कारण ये था कि वशिष्ठ ने उसे बताया था कि उसकी प्रेमिका महदेई का वध इन्हीं असुरों ने इस कारण किया था क्योंकि वो उसके पिता नमुचि के हत्यारे इन्द्र के सहायक दिवोदास के पुत्र से प्रेम करती थी।

***

सुदास आश्चर्यचकित था कि उसे यूँ कहीं भी पुर में आने-जाने दिया जा रहा है। उसने तो सोचा था कि वो हर क्षण किरात सैनिकों की रखवाली में रहेगा। परन्तु वो जिस ओर भी जाता, किरात रक्षक उसे सिर्फ एक बार देखते और फिर अपने गन्तव्य की ओर बढ़ जाते। सुदास ने देखा कि शंबरपुर में हर व्यक्ति योद्धा नहीं है जैसे आर्य ग्रामों में होता है। यहां तो उसे कुम्भकार, तन्तुकार, कर्मकार दिखाई पड़े जो अपने कार्यों में पूर्ण मनोयोग से व्यस्त थे। कार्य करते हुए वे सुदास को देखते और फिर मुस्कुराकर पुनः अपने कार्यों में व्यस्त हो जाते। सुदास चाहकर भी उनकी मुस्कराहट का उत्तर मुस्कराहट से नहीं दे पाता। वो मन ही मन हर असुर को महदेई की मृत्यु का दोषी मानता।

वहां उपस्थित असुर तरूणी सुदास को देखकर अनायास ही खड़ी हो जाती और अपनी गहरी आँखों से उसे देर तक देखती रहती। पीतकेशी श्वेतवर्णी सुदास का सौन्दर्य उनके हृदय को तरंगित कर देता। उनके हृदय को अवश कर देता। ऐसे ही एक असुर तरूणी अपने हृदय से नियंत्रण खोकर सुदास के मार्ग में आ गई।

सुदास मार्ग के दोनों ओर शंबरपुर को देखता हुआ चल रहा था। इसलिए मार्ग में यूँ अचानक सामने आई असुर तरूणी से टकराने से स्वयं को रोक न सका।

यूँ टकराने से सुदास झिझक गया, उसे यूँ झिझकते देख किरात तरूणी हंस पड़ी। चपटी नाक के नीचे जामुनी होंठों के मध्य श्वेत दंत पंक्तियां चमक उठी। उस तरूणी को अपने ऊपर यूँ हंसते देख सुदास तनिक क्रोधित होकर होंठों में बुदबुदाया, ''कैसी असुरों की तरह हंस रही है।''

तरूणी ने यह सुन लिया। वह कमर पर हाथ रखकर और अपनी हंसी रोक कर तनिक क्रोध में बोली, ''हाँ मैं असुर पुत्री हूँ। वो असुर जो जनों को वायु देते हैं. प्राणवायु। तुम देवों की तरह नहीं जो प्राणवायु देने वाले वनों को हवन के नाम पर जला देते हो। तुम पीतकेशी आर्य बहुत स्वार्थी हो जो हमारी गौओं का हरण करते हो। वो तो तुम महान दिवंगत शुष्ण की पुत्री लाखई के प्रेयस हो इसलिए मार्ग में हमसे टकराने के लिए स्वछन्द हो, नहीं तो किसी अंधेरी कोठरी में रजुक से बंधे पड़े होते।'' कहकर वो असुर तरूणी अपनी चपटी नाक दांये कपोल की ओर सिकोड़कर चली गई और सुदास विचारों में खो गया।

''तो उसकी स्वछन्दता का ये भेद है कि वो एक असुर कन्या का प्रेमी है। शुष्ण की दुहिता उससे प्रेम करने लगी है और इसलिए शंबर ने उसे अपने पुर में मुक्त रखा है। जो ये असुर अपनी तरूणी के किसी शत्रु से प्रेम पर उस शत्रु को इतना मान देते हैं तो फिर उन्होंने महदेई का वध क्यों किया?'' यह सोच कर सुदास के सिर में पीड़ा उत्पन्न होने लगी।

लाखई भले ही आर्यपुर में दासी के रूप में रही थी, परन्तु वो सुदास को जानती थी, किन्तु वो ये नहीं जानती थी सुदास, दिवोदास का पुत्र है। न ही वो ये जानती थी कि सुदास ही वो तरूण है, जिसने उसके पिता को बन्दी बनाया था। इसका कारण ये या कि सुदास स्वयं को प्रसिद्धि से दूर रखता था, शुष्ण की पराजय में मेघातिथि एवं वशिष्ठ मुनियों ने इन्द्र एवं आर्जुनेय कुत्स की महिमा बखान की थी। लाखई भी यही समझती थी, कि उसके पिता के हत्यारे इन्द्र एवं आर्जुनेय कुत्स है। लाखई, प्रतर्दन को दिवोदास का पुत्र समझती थी। सुदास उसके लिए एक उदास आर्य तरूण था जो न जाने क्यों अपने को दुखों में डालकर उसे दुखों से दूर यहां शंबरपुर में पहुँचाने आया था।

सुदास अभी वीथि में विचारमग्न खड़ा था कि वहां लाखई आई। उसके साथ दो अन्य असुर तरूणी भी थी। उनमें एक को सुदास पहचानता था। ये वही थी जो अभी सुदास से वीथि में टकराई थी और उस पर क्रोधित हो गई थी।

इस बार लाखई ने सिर झुकाकर सुदास का अनुमोदन किया। उसका अनुसरण अन्य तरूणियों ने भी किया।

''तो ये आपकी दासियां है?'' सुदास ने लाखई से पूछा।

''दासियां नहीं ये मेरी सखियां है। दासियों का प्रचलन तो आपके ग्राम में है। ये दोनों आज से आपकी सेवा में रहेगी।''

''एक पीतकेशी, एक आर्य, एक शत्रु की सेवा हेतु तरूणियां?'' सुदास ने कहकर लाखई की ओर देखा।

सुदास की बात सुनकर लाखई के स्थान पर उसके साथ खड़ी तरूणी बोली, जो अभी कुछ समय पूर्ण सुदास से वीथि में टकराई थी - ''और आप एक पीतकेशी, एक आर्य, एक शत्रु होने के अतिरिक्त कुमारी लाखई को दासत्व से मुक्त करके यहां उनके पुर में लाने वाले भी है।''

उस असुर तरूणी की बात सुनकर सुदास मौन हो गया। मौन खड़े सुदास को प्रेमपूर्ण आँखों से देखते हुए लाखई बोली, ''सुदास, ये आपको आपका विश्राम कक्ष दिखा देगी और फिर आपको भोजन कराकर देवशाला में ले जायेगी।'' कहकर लाखई चली गई और सुदास उसे जाते देखकर बाकी दो तरूणियों के पीछे अनुसरण करते हुए चल पड़ा।

***

सविता के उदय के साथ ही शंबरपुर में कोलाहल मच जाता था।

लाखई के साथ सुदास एवं विश्पला को शंबरपुर में आये तीन दिन बीत चुके थे। इन दिनों में उन्हें खाने-पीने और रहने की कोई असुविधा नहीं हुई थी। दोनों के लिए ही अलग-अलग कक्षों की व्यवस्था थी।

सुदास की देखभाल के लिए लाखई ने कई असुर कन्याओं को नियुक्त किया था। वे पूर्ण रूप से उसका ध्यान रखती। उनमें से एक वो भी थी जिसने प्रथम दिवस सुदास पर वीथि में कटाक्ष किया था। किन्तु वो अब सुदास से सीमित बात करती थी। एक दिवस जब सुदास ने उसका नाम पूछा तो वो 'जुहिला' कहकर तनिक लजा गई। लाखई सविता उदय से रात्रि के बीच सोने तक कई बार सुदास के पास आती और उस पर अपना स्नेह प्रकट करती। जब लाखई सुदास के कक्ष में आती तो सुदास की सेवा में नियुक्त दोनों असुर तरूणियां वहां से चली जाती। लाखई कभी-कभी सुदास को लेकर घूमने निकल जाती। उसे पण्यवीथि दिखाती, क्रीड़ागन दिखाती। एक दिन उसने अपने देव शिश्नदेव का स्थान भी दिखाया। सुदास, शंबर से मिलना चाहता था किन्तु लाखई ने अब तक न तो उसे शंबर से मिलवाया और न ही उसका भवन दिखाया।

विश्पला की सेवा के लिए भी दो असुर तरूणियां नियुक्त थी जो उसे स्नान से लेकर उसके समस्त क्रिया-कलापों में सहायता करती। वे तरूणियां जब विश्पला को स्नान कराती तो वे उसकी निष्क सी चमकती देह को आश्चर्य से ताकती रहती। विश्पला को स्नान कराते समय वे कभी-कभी भोलेपन से पूछ लेती कि क्या प्रतिदिन स्नान करने से उनकी देह भी सविता की किरणों सी चमक उठेगी।

उनकी बात सुनकर जब विश्पला हंसकर कहती 'हां' तो असुर तरूणियां लजाते हुए पूछती - ''तब क्या आपके साथ आया वो पीतकेशी तरूण हमसे प्रेम करेगा?''

विश्पला उनकी भोली सूरत देखकर कहती, ''उसकी मन की तो वही जाने, किन्तु मैं उससे मिलना चाहती हूँ जिसने अगस्त्य, भारद्वाज, वशिष्ठ और दिवोदास को कई बार पराजित किया है।''

विश्पला की बात सुनकर एक दस्यु तरूणी बोली, ''ये महान कार्य करने वाले तो महान किरात नायक शंबर है।''

''तो क्या मैं उस महान नायक के दर्शन न पा सकूंगी?'' विश्पला ने कहा।

''ठीक है, मैं किरात राज से आपकी इच्छा निवेदन कर दूंगी।'' कहकर असुर तरूणी चली गई।

विश्पला ने अपनी ये अभिलाषा पहले ही दिन असुर तरूणियों के सामने व्यक्त कर दी थी। यह पता चलते ही शाम को शंबर ने उसे अपने हर्म्य में बुलाया। बीते तीन दिवस से वो प्रतिदिन शंबर के समीप जा रही थी। एक बार शंबर भी उसके कक्ष में उसकी सुख-सुविधाओं की वस्तुओं को देखने के बहाने आया।

विश्पला ने सुदास को बताया कि शंबर की देह उसके पिता दिवोदास की देह के समान सुगठित है, बस लम्बाई में कुछ कम है। विश्पला की बात सुनकर सुदास ने हंसकर ठिठोली करते हुए पूछा, ''शंबर की देह सुगठित है, ये कैसे पता चला?''

''क्योंकि कल रात्रि मैं शंबर का हृदय जीतने में सफल रही।'' विश्पला ने कहा।

''और शैय्या?'' सुदास ने प्रश्न किया।

''वो भी'' विश्पला ने बिना लजाये कहा।

''ओह, इतना शीघ्र!'' कहकर वह कुछ देर चुप रहा। फिर ज्यों ही उसने कुछ बोलने हेतु मुख खोला, तो उसे रोकते हुए विश्पला बोल पड़ी,

''न सुदास न, अब ये मत पूछना कि तुम्हारे पिता की सुगठित देह के बारे में मुझे कैसे मालूम है।''

***

आज भोर होते ही शंबरपुर में कोलाहल कुछ अधिक ही था।

सुदास एव विश्पला को शंबरपुर में आये अब तक एक माह व्यतीत हो चुका था। इन दिनों में समस्त शंबरपुर के जनों में इन दोनों के लिए अत्यन्त सम्मान उपज चुका था।

इस सम्मान का उचित कारण भी था। सुदास एवं विश्पला दोनों ही पीतकेशी आर्य होने के उपरान्त भी कृष्णवर्णी असुरों से स्नेह रखते थे। विश्पला का शंबर से एवं सुदास का लाखई से स्नेह का समस्त शंबरपुर ने मौन स्वीकृति दे रखी थी।

पुर में आज अधिक हो रहे कोलाहल का कारण अपने-अपने कक्षों में नियुक्त असुर तरूणियों से सुदास एवं विश्पला ने पूछा।

''आज पुनः हमारे राजा शंबर ने तुम्हारे पीतकेशी आर्यों को पराजित किया है।'' जुहिला तनिक व्यंग्य करती हुई सुदास से बोली।

न जाने क्या रहता था जुहिला की व्यंग्य करती आँखों में कि सुदास अक्सर उसे देखकर विचलित हो उठता था। आज भी उसकी वही दशा थी। अतः जुहिला की आँखों से बचते हुए सुदास, विश्पला के कक्ष की ओर निकल गया।

सुदास ने विश्पला के कक्ष के गवाक्ष से सुना। एक दस्यु तरूणी कह रही थी - ''यूँ हमारे महान योद्धा वर्ची एवं देवक मन्यमान उस पीतकेशी को पकड़कर ले आये हैं। आज शिश्नदेव के सम्मुख उस आर्य के भाग्य का निर्णय स्वयं कुलीतर पुत्र महान शंबर लेंगे।''

दस्यु तरूणी की बात सुनकर विश्पला अपने कक्ष से बाहर निकली। वो ये महत्वपूर्ण सूचना सुदास को शीघ्र अति शीघ्र देना चाहती थी। किन्तु कक्ष के बाहर सुदास को खड़ा देखकर रूक गई। सुदास की आँखे देखकर विश्पला समझ गई सुदास ने सब सुन व समझ लिया।

''आप लोग सज्ज होकर शीघ्र शिश्नदेव की शाला में उपस्थित हो। किरात राज शंबर की आज्ञा है।'' विश्पला एवं सुदास ने स्वर की दिशा में देखा तो एक कृष्णवर्णी उन्हें शबंर की आज्ञा सुना रही थी।

***

सुदास पहली बार शंबर को देख रहा था। विश्पला ने सत्य कहा था वो एक सुगठित देह का स्वामी था। शंबर के मुख्य सेनापति के आदेश पर विश्पला एवं सुदास का शिश्नदेव शाला में ससम्मान बैठने की व्यवस्था की गई। असुर राज शंबर की दाईं ओर वर्ची एवं वाम पक्ष में देवक मन्यमान बैठा था। देवक मन्यमान एक पीतकेशी था।

शंबर ने हाथ उठाकर संकेत किया एवं असुर योद्धा एक पीतकेशी आर्य को रस्सियों से बांध कर शिश्नदेव शाला में लाये।

जब वो बंधक शिश्नदेव के तनिक समीप आया तो किरात योद्धाओं ने उसे धक्का दे दिया। वो पीतकेशी मुंह के बल शिश्नदेव के समीप जा गिरा।

''इस पीतकेशी का मुख उपस्थित सभी जनों को दिखाया जाये।'' शंबर ने गौरवशाली स्वर में कहा।

एक किरात सैनिक ने पीतकेशी के केश पकड़कर उसे उठाया और उसे चारों ओर घुमाया, जिससे वहां उपस्थित जनसमूह उसका मुख देख सके। ज्यों ही वो पीतकेशी का मुख विश्पला एवं सुदास के सम्मुख आया उनके अधर स्वतः बुदबुदाये ''द्रधिका''

विश्पला एवं सुदास अच्छी प्रकार से द्रधिका को पहचानते थे। वो तृत्सु सेना में अश्वों का प्रमुख था। राजा दिवोदास के अश्व की देखभाल का उत्तरदायित्व उसी पर था।

एकाएक कृष्णवर्णियों ने उसे घूसों के प्रहार से मारना आरम्भ कर दिया। कुछ समय में ही उसके कंठ से चीखें निकल पड़ी। निःसहाय द्रधिका ने प्राण रक्षा हेतु इधर-उधर आँख दौड़ाई। एकाएक उसकी दृष्टि सुदास पर ठहर गई। सुदास एवं विश्पला एक अभियान पर थे, ये सिर्फ कुछ प्रमुख लोग ही जानते थे, सब नहीं। द्रधिका भी इससे अनभिज्ञ था।

यूँ वहां सुदास को एक ऊँचे आसन पर बैठा देख द्रधिका को डूबते को तिनका का सहारा नजर आया। वरूण देव ने उसकी देह में मानो शक्ति का संचार कर दिया। वह एक झटके में बल लगा कर कृष्णवर्णियों की पकड़ से स्वतंत्र

हो गया एवं जब तक वे उसे पुनः पकड़ पाते द्रधिका भाग कर सुदास के समीप पहुँच गया।

''हे सुदास, हे आर्य सूरि! देखो किस प्रकार ये कृष्ण त्वचा वाले एक पीतकेशी की देह का मर्दन कर रहे हैं, वो भी आपके सम्मुख। हे सुदास! मेरी रक्षा करें।'' द्रधिका ने सुदास के पांव पकड़कर कातर स्वर में अर्न्तनाद किया।

शंबर, वर्ची एवं देवक समेत वहां उपस्थित समस्त जन द्रधिका को सुदास के पांव पकड़कर बिलखना देखने लगे। शंबर, वर्ची इत्यादि के माथे पर अचरज के चिन्ह उभर आये।

''हे सुदास, इस काले असुर शंबर से मेरी रक्षा करना आपका कर्तव्य है. आप महान अतिथिग्व दिवोदास ... आऽह''

अभी द्रधिका की बात पूरी तरह से कंठ से निकली भी न थी कि एक चीख के साथ उसके कंठ से रक्त की धारा बह निकली और वो अपने आश्चर्य से भरे फटे नेत्रों के साथ जमीन पर लुढ़क कर तड़पने लगा। सुदास समेत समस्त जनसमूह का मुंह खुला रह गया।

''विश्पला?'' सुदास के अधरों से कांपता स्वर निकला।

''हाँ सुदास, हम महान शंबर के पुर में है। इन्होंने हमें अपने परिवार सा रखा है, कोई उनको पापी कहे ये विश्पला को बर्दाश्त नहीं।'' इतना कहकर विश्पला ने शंबर की ओर देखा, तो उसने उसे अपने आसन से उठकर अपनी ओर आते हुए देखा।

''विश्पला मुझ कृष्णवर्णी से जिसे समस्त पीतकेशी घृणा करते हैं उसके सम्मान हेतु तुमने अपने ही एक पीतकेशी आर्य का वध कर दिया है।'' कहकर शंबर ने विश्पला के हाथ की आयसी छीनकर फेंकते हुए उसका हाथ पकड़ लिया।

ज्यों ही शंबर ने विश्पला का हाथ पकड़ा विश्पला ने धीरे से कहा, ''हे वीर पुरूष, स्मरण रखो। हम एकांत में नहीं जन समूह के मध्य शिश्नदेव के समक्ष है।'' विश्पला की फुसफसाहट सुनकर शंबर ने उसका हाथ छोड़ दिया।

***

''क्या तुम सच कह रही हो जखदेई! कि महाराज ने पुरी से बाहर निकलकर आर्यों से युद्ध करने का निर्णय लिया है?''

''हाँ जुहिला मैंने आज प्रातः ही लाखई और उस आर्य सूरि की वार्ता सुनी है।''

''किन्तु क्यों? जबकि हमें इस पुरी में आर्य पराजित नहीं कर सकते तो फिर महाराज नीचे उतरकर उन पीतकेशियों से क्यों लड़ना चाहते हैं। कहीं महाराज का ये निर्णय आत्मघाती न सिद्ध हो जखदेई!''

''महाराज का ये सोचना है जुहिला कि जब पहले उनके साथ एक आर्य देवक था तब आर्य उनसे इतना भयभीत रहते थे और अब तो देवी विश्पला एवं सुदास भी साथ है। अब इस संगठित शक्ति के साथ महाराज आर्यों के शीश कुचल देना चाहते हैं।''

''महाराज जिन्हें संगठन समझ रहे हैं, कहीं वही घात न कर दे जखदेई, यह सोचकर मेरा हृदय कांप रहा है..''

''क्यों जुहिला! क्या तुम्हारे जीवन में भी कोई तरूण आ गया है जो तुम्हारा भी हृदय कांपने लगा।''

लाखई का स्वर सुनकर उसे देखकर जखदेई एवं जुहिला शीश झुकाकर चुपचाप खड़ी हो गई।

''क्यों जुहिला! क्या लाज कुछ कहने नहीं दे रही?''

''नहीं देई, मेरे चुप रहने या हृदय कांपने का कारण लाज नहीं अपितु..''

''अपितु क्या जुहिला?'' लाखई ने पूछा।

''अपितु महाराज का ये गलत निर्णय है।''

''महाराज का गलत निर्णय .. लगता है तुम्हारे शीश से शिश्नदेव की कृपा लुप्त हो गई है जुहिला, जो तुम महाराज के निर्णय पर अंगुली उठा रही हो।'' लाखई ने तेज स्वर में कहा।

''क्षमा करे देई लाखई..'' जुहिला ने शीश झुका कर लाखई के पांव को देखते हुए बोली, ''मुझे लगा महाराज को आर्यों से अंतिम युद्ध से पूर्व अपनी सेना की शक्ति एक संगठन के अतिरिक्त वाह्य सहायता प्राप्त करने का भी प्रयास करना चाहिए।''

''वाह्य सहायता? तो क्या देवक मन्यमान के अतिरिक्त अब जो हमारी सहायता आर्य देवी विश्पला एवं आर्य सूरि सुदास कर रहे हैं, क्या वो वाह्य सहायता नहीं है? जुहिला क्या तुमने देखा नहीं, देवी विश्पला ने किस प्रकार महाराज शंबर के अपमान मात्र पर अपने ही जन में से एक पीतकेशी का वध कर दिया। क्या तुम्हें नहीं लगता कि विश्पला एवं सुदास के हमारे पक्ष में होने से हमारा पलड़ा भारी है।''

''निश्चित रूप से महाराज शंबर सामर्थ्यवान है। वे अकेले ही आर्यों को पराजित कर सकते हैं। आर्य सुदास एवं देवी विश्पला यदि हमारा साथ देंगे तो निश्चय ही हमारी विजय होगी। किन्तु देई लाखई यदि इस युद्ध में कार्तवीर्य अर्जुन एवं रक्ष संस्कृति के ध्वज वाहक रावण हम असुरों की सहायता करते तो स्वयं इन्द्र को भी हमारे सम्मुख पराजित होना ही पड़ता।''

''तुमने सही कहा जुहिला। तुम्हारी इस बात से मैं सहमत हूँ। रक्षराज रावण हमारी सहायता हेतु आ रहे हैं किन्तु कार्तवीर्य अर्जुन ने युद्ध में भाग लेने से मना कर दिया।''

''मना कर दिया पर क्यों? आर्य उन्हें भी तो अधीन रखना चाहते है?''

''हाँ किन्तु वे भी आर्य का ही अंश है। मुनि भृगु कभी उनके पुरोहित रह चुके हैं। संभवतः इसीलिए वे तटस्थ रहना चाहते हैं।''

''संभवतः कार्तवीर्य अर्जुन ये नहीं जानते कि आर्य उन्हें उनकी तटस्था के कारण भी चैन से नहीं बैठने देंगे। यदि आर्य हमें पराजित कर पाये तो निश्चय ही उनका अगला लक्ष्य कार्तवीर्य अर्जुन होंगे। दुर्भाग्य से हम इस संकट में भी संगठित नहीं हो पा रहे हैं।''

''ये तुम्हरा भय है जुहिला। आर्य हमें कभी पराजित नहीं कर पायेंगे अपितु उन्हें पराजित होना पड़ेगा। सुदास, विश्पला एवं रावण की सहायता से हम उन्हें पराजित कर देंगे।''

यह कहकर लाखई वहां से चली गई। और उसे जाता देखकर जुहिला अपने होंठों में ही यह शब्द बुदबुदाई - ''शिश्नदेव ऐसा ही हो, किन्तु न जाने क्यों मुझे विश्पला एवं सुदास पर विश्वास नहीं होता।''

***

''नहीं, महाराज शंबर ऐसा नहीं कर सकते जखदेई? वे रक्षराज अपने साढू रावण की सहायता के बिना पुर से बाहर निकलकर आर्यों से युद्ध नहीं कर सकते। .. ये आत्मघाती होगा।'' जुहिला व्याकुल होकर अपना एक हाथ दूसरे हाथ से मसलते हुए बोली।

''ये महाराज का निर्णय है जुहिला। और हम दासियों को महाराज के निर्णय पर बात नहीं करनी चाहिये। महाराज शंबर की आज्ञा है कि आज रात्रि शिश्नदेव की पूजा के बाद, प्रातः आर्यों का वे नाश करेंगे। जाओ जुहिला तुम भी

दिया हुआ कार्य सम्पन्न करो। अभी मुझे शिश्नदेव की शाला में जाकर कई कार्य करने है।''

कहकर जखदेई चली गई और जुहिला मन ही मन में यह कहती हुई, ''हाँ जखदेई, अब मैं दिया हुआ कार्य सम्पन्न करूंगी।'' सुदास के कक्ष की ओर बढ़ गई।

सुदास के कक्ष में जुहिला को जब सुदास दिखाई न दिया तो वो विश्पला के कक्ष की ओर बढ़ गई। विश्पला का कक्ष भी रिक्त था। ''कहां गये दोनों?'' सोचते हुए जुहिला शिश्नदेव शाला की ओर निकल गई। वहां पर उसे भी कुछ कार्य करने थे।

जुहिला आश्चर्य में पड़ गई जब सुदास एवं विश्पला को उसने शिश्नदेव की शाला में कार्य करते देखा। 'इन्द्र के उपासक, शिश्नदेव की शाला में?' जुहिला कुछ समझ नहीं पा रही थी। वो इस उलझन में चुपचाप खड़ी रही। तभी जखदेई ने उसे टोका, ''क्यों जुहिला! क्या तू यहां मात्र ये देखने आई है कि हम कार्य कर रहे हैं या कुछ कार्य करेगी भी।''

जखदेई की बात सुनकर जुहिला चुपचाप शिश्नदेव के चारो ओर बनी मिट्टी की दीवार पर गीली मिट्टी से कुछ आकृतियां बनाने लगीं। कुछ स्वास्तिक जैसी। कुछ वृत्त के भीतर वृत्त की परिधि को स्पर्श करते हुए छः लकीरें इत्यादि।

रात्रि का अंधकार छा चुका था। शिश्नदेव शाला की दीवारों को सज्ज करके थकी हुई जुहिला एक पीपल वृक्ष के नीचे उंघ रही थी कि उसी दौरान किसी के कंधे पकड़कर हिलाने से जुहिला की नींद में डूबी आँखें खुल गई। सामने शुष्ण कुमारी लाखई थी। देखकर जुहिला तुरन्त शीश झुकाकर खड़ी हो गई।

''मेरा एक कार्य करेगी जुहिला?''

''आज्ञा दे देई ..''

''देख जुहिला शिश्नदेव को प्रसन्न करने से पूर्व महाराज शंबर समस्त पुर में विचरण कर रहे हैं। लोगों से मिल रहे हैं। उनके साथ कल भोर आर्य सूरि भी युद्ध पर जायेंगे। मैं उससे पूर्व उनसे मिलना चाहती हूँ।''

''तो इसमें क्या व्यवधान है देई? आपको तो किसी के भी कक्ष में जाकर किसी से भी मिलने का अधिकार प्राप्त है।''

''हाँ किन्तु आज की रात्रि, उत्सव की रात्रि है। इसलिए सुरापान किया कोई भी व्यक्ति आज सूरि से मिलने की कामना लिए वहां आकर व्यवधान

उपस्थित कर सकता है। मैं चाहती हूँ तुम वहां जाकर आर्य सूरि को संदेश दो कि मैं तुम्हारी पर्णकुटी में उनकी प्रतीक्षा कर रही हूँ।''

''मेरी पर्ण कुटी में ..?'' जुहिला ने घबराकर लाखई की ओर देखा।

''हां तेरी पर्ण कुटी में, क्या तुझे कोई आपत्ति है? चल ठीक है आज तू थकी है। आर्य सूरि को संदेश देकर तुम मेरे कक्ष में जाकर विश्राम कर लेना। आशा है तुम्हारी पर्ण कुटी में मेरे एवं आर्य सूरि के मध्य व्यवधान डालने के लिए कोई नहीं आयेगा। जा अब शीघ्र जाकर आर्य सूरि को मेरा संदेश दे कि मैं रात्रि के तीसरे पहर वहां उनकी प्रतीक्षा करूंगी।''

***

महदेई की मृत्यु के पश्चात सुदास के हृदय में किरात एवं पणियों के लिए अपार घृणा थी। किन्तु उसके हृदय में लाखई ने तनिक स्थान बना लिया था। महदेई के विछोह से उत्पन्न हुए अवसाद को कम करके उसमें प्रसन्नता के अंश का समावेश सुदास के हृदय में लाखई ने किया था।

जब जुहिला, लाखई का संदेश लेकर सुदास के कक्ष में पहुंची तो सुदास शिश्नदेव के उत्सव में सम्मिलित होने हेतु स्नानागार में स्नान कर रहा था। जुहिला उसे खोजती बेध्यानी में स्नानागार तक पहुंच गई।

''ऊफ्फ ..'' सुदास स्नान करके पूर्णतयः नग्न होकर नेत्र बन्द किये खड़ा था। मानो वरूण का ध्यान कर रहा हो।

सुदास को यूँ देखकर जुहिला जड़वत हो गई। वो पुरूष को नग्न देखकर भाग जाना चाहती थी। किन्तु सुदास की निष्क से चमकती देह ने उसके पांव भूमि से चिपका दिये। इससे पूर्व जुहिला ने कभी किसी पुरूष को नग्न नहीं देखा था।

सुदास की नग्न देह और उसमें तनी मांसपेशियों देखकर जुहिला की नसों में बहता रूधिर उष्णित होकर देह में समाहित होने लगा। हृदय की धड़कनें तरंगित हो उठी। विस्फारित नेत्र जुहिला की किसी भी आज्ञा को निषेध करते हुए सुदास की देह का निरीक्षण करते रहे।

उपासना करके सुदास के नेत्र खुले तो उसके सम्मुख खुले नेत्रों वाली जुहिला थी। उसके नेत्र इतने अधिक खुले थे कि उसे संसार की कोई वस्तु दिखाई नहीं दे रही थी। सच कहे तो जीवन में पहली बार किसी पुरूष की आवरण विहीन देह को देखकर वह स्पंदित हृदय के हाथों अवश होकर जड़वत हो गई थी।

सामने एक तरूणी के देख तीव्रता से अपनी देह पर दृष्टि डालते हुए सुदास ने कहा, ''जुहिला आप इस समय यहां?''

संसार के सर्वाधिक सुंदर तरूण का स्वर सुनकर जुहिला स्वप्न लोक से शंबर लोक लौटी। और फिर लजा कर नेत्र नीचे करके बोली, ''आपकी प्रतीक्षा देई लाखई रात्रि के तीसरे पहर करेंगी।''

लाज से सिकुड़ी जुहिला अब सुदास के नेत्र का सामना नहीं कर सकती थी, सो तुरन्त वहां से बाहर निकल आयी। सुदास की देह का अद्‌भुत सौन्दर्य उसके ऊपर छा चुका था जिसके कारण वह सुदास को ये बताना भूल गई कि लाखई उसकी प्रतीक्षा कहां पर करेगी।

***

शिश्नदेव का यज्ञ रात्रि के अन्तिम पहर, अर्थात भोर होने तक चलना था उसके उपरान्त सविता के उदय के साथ ही शंबर अपनी पुरी से बाहर निकल कर आर्यों से अंतिम युद्ध पर निकलने वाला था।

सुदास एवं लाखई शिश्नदेव शाला में उपस्थित थे। किन्तु एक-दूसरे से दूर अलग-अलग कोनों पर। दोनों बात नहीं कर सकते थे। किन्तु नेत्रों की बात करने से रोक पाना न तो आर्यों के देव इन्द्र के वश में था और ना ही अनार्यों के देव शिश्नदेव के।

लाखई के नेत्रों ने पूछा, ''संदेश मिला?'' सुदास के नेत्रों ने 'हाँ' कहा। लाखई ने लजाकर अपने नेत्र नीचे किये।

तीसरे पहर में लाखई जनों की दृष्टि बचाकर वहां से निकल गई। उसकी प्रमुख दासियां भी ये न जान पाई कि शुष्ण कन्या लाखई शिश्नदेव शाला से जा चुकी है।

लाखई को शिश्नदेव शाला से किसी ने जाते देखा हो या नहीं किन्तु लाखई ने शिश्नदेव शाला से निकलते समय स्वयं को सुदास की दृष्टि में आने दिया।

सुदास के हृदय में घृणा भी थी, प्रेम भी। सुदास को पणियों एवं किरातों से घृणा थी। इस घृणा के लिए उसके पास पर्याप्त कारण थे किन्तु सुदास सहृदयी था। वो किसी भी ऐसे व्यक्ति से घृणा नहीं कर सकता था, जो दोषी न हो। उसे लाखई में भी कोई दोष दिखाई नहीं देता था अपितु वो तो उस पर अपने प्रेम

बरसा रही थी जबकि वो एक आर्य था। उन आर्यों में से एक जो किसी भी प्रकार से उनका अस्तित्व समाप्त कर देना चाहते थे।

सुदास के हृदय में घृणा कितनी भी हो किन्तु प्रेम उससे भारी था। इसी प्रेम के वशीभूत होकर सुदास लाखई के शाला से जाने के कुछ घड़ी बाद सबके नेत्रों से बचते हुए शिश्नदेव शाला से बाहर निकल आया और देई लाखई के हर्म्य की ओर जाने वाली वीथि पर आगे बढ़ गया।

***

सुदास ने निःशब्द शुष्ण कन्या के हर्म्य में प्रवेश किया। हर्म्य पूर्णतः रिक्त था, सभी शिश्नदेव के उत्सव में सम्मिलित थे। दास-दासी और रक्षक सैनिक सभी। शंबरपुर इतना सुरक्षित था कि उन्हें हर्म्यों के आन्तरिक सुरक्षा को अधिक सुदृढ़ करने की आवश्यकता ही नहीं थी।

कुछ दिवस भर किये गये कार्य की थकान का असर था, तो कुछ रात्रि के तीसरे पहर का असर.. कुछ देई लाखई के नर्म बिछावन का असर और कुछ सुदास की नग्न स्वर्णिम देह का असर। जिसके कारण जुहिला बिछावन पर लेटते ही सुदास के साथ स्वप्न लोक में विचरण करने लगी।

''लाखई'', ''लाखई''

सुदास के मद्धिम स्वर का जब कोई उत्तर न मिला तो मदिरा पान से तृप्त सुदास के पांव लाखई के बिछावन पर स्वयं जा पहुँचे। लाखई का वो बिछावन जिस पर जुहिला सोई थी। सुदास ने उसकी देह रात्रि के अंधकार में अपनी बलिष्ठ भुजाओं से खींचकर अपने कंठ से लगा लिया।

पुरूष स्पर्श से जुहिला के नेत्र खुल गये। पर जब उसने स्वयं को सुदास की भुजाओं में देखा तो पुनः नेत्र बंद करके उसने अपनी थरथराती देह उसे समर्पित कर दी।

दोनों एक-दूसरे की देह को आत्मसात करके तृप्त मन एवं देह के साथ स्वप्न लोक में विचरते हुए निद्रालोक में चले गये।

लाखई काफी समय तक लजाई सिकुड़ी जुहिला की पर्ण कुटी में अपने प्रेयस आर्य सूरि सुदास की प्रतीक्षा करती रही।

ज्यों-ज्यों उसकी प्रतीक्षा बढ़ती गई, त्यो-त्यों उसकी लाज बेचैनी में परिवर्तित होने लगी। वो बेचैन होकर पर्ण कुटी में टहलने लगी। बार-बार वो पर्ण

कुटी के गवाछ से रात्रि के अन्धकार में देखने का प्रयास करती। किन्तु उसकी प्रतीक्षा का कोई अन्त ही नहीं हो रहा था। धीरे-धीरे सविता की लाली पूर्व में दृष्टिगोचर होने लगी।

क्या आर्य सूरि को उसका संदेश विस्मरण हो गया? क्या उन्हें शिश्नदेव शाला में राजा शंबर ने रोक लिया? अवश्य कुछ न कुछ घटित हुआ होगा तभी तो आर्य सूरि उससे मिलने की हाँ करके भी नहीं आये। हाँ लाखई ने सुदास की आँखो में 'हाँ' देखी थी।

सविता उदय होना चाहते थे। अब लाखई जुहिला की पर्ण कुटी में रूकना नहीं चाहती थी। आज महाराज शंबर को आर्यों से युद्ध करने के लिए जाना था। उसे उनकी भी कुछ तैयारियां देखनी थी। अतः सुदास को स्मरण करते हुए लाखई, जुहिला की पर्ण कुटी से अपने हर्म्य की ओर चल पड़ी।

घर्घर का स्वर पूरे पुर में गूंज उठा। इस स्वर का अर्थ था कि समस्त सैनिक तुरन्त पुर के मुख्य प्रांगण में एकत्रित हो जाये।

घर्घर का स्वर सुनकर जुहिला एवं सुदास की निद्रा टूट गई। सुदास स्वयं की भुजाओं में जुहिला को देखकर उछलकर खड़ा हो गया। जुहिला भी नेत्र नीचे करके खड़ी हो गई। दोनों एक-दूसरे से कुछ कह पाते उससे पहले ही वहां लाखई ने प्रवेश किया। उन्हें एक साथ उस हालत में देखकर वह क्रोध से मानो पागल हो उठी।

लाखई ने सुदास एवं जुहिला की किसी भी बात को न सुनते हुए सैनिकों को बुलाया और जुहिला को शीघ्र ही बंदी बनाने की आज्ञा दी। उसकी दृष्टि में जुहिला का अपराध अक्षम्य था।

सुदास ने लाखई को जब समझाने का प्रयास किया तो वो उसे प्रेम में छल करने का आरोप लगाते हुए उससे कभी न मिलने का प्रण करती हुई वहां से चली गई। सुदास जब उसके पीछे जाकर उसे अपना पक्ष साफ करना चाहता था, तभी विश्पला ने वहां आकर उसका हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा, ''आर्य सूरि हम जिस अभियान पर आये थे, अब उसे पूर्ण करने का समय आ गया है।''

***

दिवोदास एवं भारद्वाज के नेतृत्व में आर्य जन संगठित होकर उदव्रज के समीप असुरों से युद्ध हेतु एकत्रित थे। उदवज्र शंबर की एक पुरी थी।

शंबर भी अपनी वैजयन्तीपुरी नामक पुरों से निकलकर उदवज्र में आर्यों के सम्मुख आ डटा।

उसकी सेना में सुदास, देवक मन्यमान एवं देवी विश्पला से आर्यों के अतिरिक्त वर्ची, विप्रचिति, दृष्टरोमा, प्रकम्पन्न, विकटाक्ष आदि महान असुर योद्धा थे। शंबर का साढू रक्षराज रावण किन्हीं कारणों से युद्ध में सम्मिलित होने हेतु पहुँच न सका था। किन्तु शंबर को विश्वास था कि वो रक्षराज रावण की सहायता के बिना ही आर्यों को परास्त कर सकता है। उसके इस विश्वास का कारण उसके पक्ष में सुदास एवं उसकी आर्या प्रेयसी देवी विश्पला का होना था।

आर्यों का नेतृत्व तृत्सुराज दिवोदास कर रहा था और उनकी सहायता में कोशल नरेश दशरथ एवं उनकी सेना भी थी। इसके अतिरिक्त भरतों के स्वामी विश्वरथ, इन्द्र द्वारा भेजे गये अश्विनी कुमार भी आर्यों की सहायता कर रहे थे। वशिष्ठ एवं अगस्त्य इस युद्ध में उपस्थित नहीं थे। वशिष्ठ दशरथ के पुत्रों को शिक्षा देने हेतु कोशल में थे एवं अगस्त्य रक्षराज रावण के बढ़ते प्रभाव को कम करने के लिए दक्षिण की ओर प्रस्थान कर चुके थे।

जब प्रबल शत्रु आमने-सामने हो तो देह में बहते रक्त की ऊष्मा बढ़ने लगती है। आर्यों ने अपने सम्मुख असुरों की चमू देखकर आक्रमण की घोषणा की। आसुरों की वाहिनी में भी रणभेरी बज उठी ।

देखते ही देखते दोनों ओर से शस्त्र चलने लगे। योद्धा मर-मर कर गिरने लगे। रूधिर की कुल्या (छोटी नहर) बहने लगी। दिवोदास की विकट मार से असुर छिन्न-भिन्न होने लगे।

अपनी सेना को अस्त-व्यस्त होते देख शंबर ने सुदास एवं विश्पला को खोजा किन्तु वे कहीं दिखाई न पड़े तब शंबर ने अपने समीप खड़े वर्ची एवं देवक मन्यमान से कहा, ''तुम लोग इन पीतकेशियों से सेना की रक्षा करो मैं जाकर इस दिवोदास को रोकता हूँ।''

देवक मन्यमान एवं वर्ची का समर्थन पाकर शंबर ने अपने सारथी को रथ दिवोदास की ओर ले चलने को कहा।

शंबर का रथ दिवोदास के समीप पहुंच पाता, इससे पहले ही कौशलेन्द्र दशरथ ने शंबर को युद्ध के लिये ललकारा। आनव कैकय की पुत्री कैकयी धनुष बाण लिये रथ पर दशरथ की रक्षा कर रही थी।

शंबर एवं दशरथ में तुमुल युद्ध छिड़ गया। शंबर के तीखे बाणों ने दशरथ के सारथी का वध कर डाला। कई बाण दशरथ की देह में जाकर लगे

उसकी देह से रक्त बह पड़ा। अपने पति कौशलेन्द्र दशरथ के प्राण संकट में देख कैकयी ने धनुष बाण रखकर घोड़ों की रास पकड़कर दशरथ की रक्षा हेतु उसे दिवोदास की ओर लेकर भागी। दिवोदास भी दशरथ को संकट में देखकर शंबर की ओर बढ़ा।

शंबर, भागते दशरथ को छोड़कर दिवोदास की ओर बढ़ रहा था कि तभी उसे अपनी ओर घोड़े पर सवार विश्पला आती दिखाई दी।

विश्पला को सामने देखकर शंबर ने अपना रथ रोककर उससे कहा, ''देखो देवी, वो दशरथ कैसे हमारे प्रहारों से आहत होकर भाग रहा है। देखो अब हम कैसे उस दिवोदास का पराभाव करते हैं।''

''अवश्य महान शंबर क्या मैं आपके रथ पर आरूण होकर आपकी इस महान विजय की साक्षी बन सकती हूँ?'' विश्पला घोड़े से उतरते हुए बोली।

''हाँ-हाँ क्यों नहीं देवी विश्पला! मैं तुम आर्य नारियों की वीरता से अभिभूत हूँ। देखो अभी-अभी कैसे आनव कैकय की पुत्री ने अपने पति दशरथ की रक्षा की है। आओ देवी विश्पला रथ पर तुम्हारा स्वागत है।'' कहकर शंबर विश्पला की ओर अपना हाथ बढ़ा दिया।

''शंबर का हाथ पकड़कर विश्पला ज्यों ही रथ पर चढ़ी वैसे ही उसने हाथ की तलवार शंबर के पेट में घोंप दी। पीड़ा को सहते शंबर विस्फारित नेत्रों से विश्पला को देखता रहा। विश्पला ने तलवार का द्वितीय प्रहार शंबर पर किया किन्तु शंबर ने उसका हाथ पकड़ लिया। उसकी तलवार छीनकर शंबर बोला, ''छल...सच ही कहा था दासी जुहिला ने कि तुम पर विश्वास नहीं करना चाहिए. दुष्ट आर्य स्त्री तुझे इस छल का दण्ड अवश्य मिलेगा।''

''दण्ड तो तुझे मिलेगा दुष्ट शंबर, देख! वो जो देवक मन्यमान को दण्डित कर रहा है वो सुदास है जिससे तेरे मित्र शुष्ण की कन्या प्रेम करती है। वो सुदास अन्य कोई नहीं अपितु महान दिवोदास का पुत्र है। देखो वो कैसे कृष्णत्वचा वालों को क्रूरता से काट रहा है।'' कहते समय विश्पला के अधरों पर हंसी खेल रही थी। रक्तिम हंसी।

शंबर ने दृष्टि घुमाकर देखा तो सुदास को क्रूरता से कृष्णवर्णियों को मारते पाया। देवक मन्यमान उसे रोकने का असफल प्रयास कर रहा था।

''इतना बड़ा छल ओ शिश्नदेव!'' शंबर ने एक लम्बी श्वांस खींच कर कहा। उस समय शंबर को असावधान पाकर विश्पला उससे अपना हाथ छुड़ाकर रथ से कूदी।

''कहां जा रही है दुष्ट ..'' कहकर शंबर ने परशु उठाकर विश्पला पर चलाया। परशु भागती विश्पला के पांव पर लगा और लगते ही वह चीखकर भूमि पर गिर पड़ी।

''भागती कहां है दुष्ट छली आर्य स्त्री। अपने छल का परिणाम तो भोगती जा।'' कहकर शंबर रथ से उतरकर विश्पला की ओर लपका। रथ से कूदने में उसको विश्पला के दिये घाव से रक्त का बहाव तीव्र हो उठा। वह विश्पला के समीप पहुँचता उससे पहले ही उसे किसी ने ललकारा, ''ठहरो असुर राज! क्या ही अच्छा होता जो तुम स्त्री को छोड़कर किसी पुरूष से युद्ध करते।''

शंबर ने देखा तो सामने दिवोदास खड़ा था।

''स्त्रियों को अस्त्र की तरह प्रयोग करने वाले दशरथ एवं दिवोदास, आओ युद्ध में तुम्हारा स्वागत है।'' कहकर हंसते हुए शंबर दिवोदास की ओर लपका।

शंबर एवं दिवोदास दोनों ही वीर थे - महावीर। अब दोनों महावीरों में विकट युद्ध होने लगा - प्रचण्ड युद्ध। शंबर विश्पला के प्रहार से आहत था फिर भी वो विकट युद्ध कर रहा था। उन दोनों की देह से रक्त की सहस्र धारायें बह रही थी।

''जय शिश्नदेव'' की एक चीख के साथ जब ये ध्वनि शंबर के कानों में पड़ी तो उसने देखा सुदास ने अपनी तलवार देवक मन्यमान के पेट में घोंप दी है।

''देवक'' शंबर चिल्लाया और ठीक उसी समय दिवोदास ने असावधान शंबर के मर्मस्थल पर प्रहार किया।

इधर शंबर भूमि पर गिरा, उधर देवक मन्यमान ने गिरते हुए सुदास से कुछ कहा जिसे सुनकर सुदास गम्भीर हो गया।

शंबर के गिरते ही वर्ची ''जय शिश्नदेव'' की हुंकार करता हुआ दिवोदास पर झपटा। वर्ची भी वीर था। वह शंबर का अनुयायी था। उसने पहर भर युद्ध किया किन्तु जब दिवोदास ने अवसर पाकर उसका शीश काट लिया तो असुर सेना में भगदड़ मच गई और आर्य उनका निर्ममता से वध करने लगे।

देवक मन्यमान के शव के पास गंभीर मुद्रा में बैठे सुदास के कंधे पर अश्वनी कुमार ने हाथ रखा। सुदास ने उनकी ओर देखा तो अश्वनी कुमार बोले, ''साधु सुदास तुमने अदभुत वीरता दिखाई है। इसके पुरस्कार स्वरूप मैं तुम्हें अपनी पुत्री सुदेवी को भेंट करता हूँ।''

सुदास बिना कुछ बोले वहां से उठकर चल दिया। उसके पीछे अश्वनी कुमार भी चल दिये। तभी उसे दिवोदास एवं भारद्वाज आते दिखाई पड़े जिन्होंने विश्पला को सहारा दिया हुआ था।

''हम विजयी हुए महामुनि भारद्वाज। अब आप एवं महाराज दिवोदास मिलकर असुर पुरियों की व्यवस्था संभालिये।'' अश्वनी कुमार ने कहा।

''हाँ और हमारी इस विजय में देवी विश्पला का भी बड़ा योगदान है।'' महामुनि भारद्वाज बोले।

''हाँ देवी विश्पला ने अतुलनीय कार्य किया है। हम इन्हें शल्य विधि से पांव प्रदान करने की व्यवस्था करते हैं।'' कहकर अश्वनी कुमार झुककर विश्पला के कटे पांव का निरीक्षण करने लगे।

*****

शमी वृक्ष के नीचे बैठे युवक का चेहरा निस्तेज था। हाथ-पांव धूल से सने और अधरों पर पपड़ियां थी।

दृष्टिगत होता है वो अपने जीवन से ऊब चुका है। जीवन जीने की इच्छा उसके भीतर बची न हो। वो वृक्ष के तने से शीश टिकाकर बैठा था। जैसे मानो वह मृत्यु की प्रतीक्षा में हो।

चर्रर्रर.. की ध्वनि हुई और शमी वृक्ष से शीश टिकाये तरूण ने अपना नेत्र खोला। वृषभ गाड़ी से एक तरूणी उतरी। जबकि एक वृद्ध वृषभ की रस्सियां पकड़े बैठा है।

तरूण के समीप पहुंचकर तरूणी उसके फटे होंठ देखकर एवं उसे प्यासा समझकर वापस वृषभ गाड़ी के समीप आयी और जल का पात्र लेकर उसे तरूण के सामने रख दिया।

तरूण स्थिर नेत्रों से मात्र जल को देखता है किन्तु पीता नहीं।

''संभवतः अत्यधिक अशक्त होने के कारण ये स्वतः जलपान नहीं कर सकता। अविका तू उसकी जलपान में सहायता कर'' वृद्ध वृषभ गाड़ी के ऊपर से तरूणी से बोला।

तरूणी ने अपनी एक हथेली तरूण के होंठों से लगाई और दूसरे हाथ के पास से उसमें जल डाला। तरूण ने अनिच्छा से जल को अपने कंठ के नीचे उतारा।

''कहाँ जाना है? कहाँ से आये हो?'' वृद्ध ने वृषभ गाड़ी के ऊपर से पूछा। तरूण चुप रहा।

''अरे तुम गूंगे हो या बहरे?'' वृद्ध ने तनिक झल्लाकर कहा।

'संभवतः पथिक है एवं पथ भटक गया है।'' तरूणी ने कहा।

''हाँ ऐसा ही लगता है और संभवतः अत्यधिक अशक्त होने के कारण ये अब कहीं जा नहीं सकता।'' वृद्ध गाड़ी से उतरकर तरूण के समीप आते हुए बोला।

''तो..?'' तरूणी ने प्रश्न किया।

''तो क्या अविका, इसे ग्राम में लेकर चलते हैं जब ये स्वस्थ हो जायेगा तो जहां जाना होगा चला जायेगा। चल इसे गाड़ी में बिठाने में मेरी सहायता कर''

''जी बाबा'' तरूणी ने कहा और फिर वृद्ध एवं तरूणी ने सहारा देकर उस तरूण को गाड़ी में लिटा दिया।

***

तरूण अब स्वस्थ हो चुका था, चेहरे का तेज लौट आया था। पुरूधान वहीं वृद्ध था जो तरूण को अपनी वृषभ गाड़ी में बिठाकर अपने घर ले आया था। जहां अविका की देखभाल ने उसे कुछ दिनों में ही स्वस्थ एवं बलिष्ठ बना दिया था।

''पुरूधान'' , ''ओ पुरूधान!'' बाहर कोई पुरूधान को पुकार रहा था।

''हाँ आता हूँ भाई! काहे इतनी हांक लगा रहे हो?'' कहकर पुरूधान घर से बाहर निकला। उसके पीछे-पीछे उसकी पुत्री अविका की। तरूण पहले से ही गवाक्ष के पास खड़ा था। किन्तु पता नहीं कि वो बाहर देखकर भी देख रहा था या फिर किसी और सोच में डूबा था।

''क्या बात हो गई जो इतनी भोर को बुला रहे हो?'' पुरूधान ने बाहर खड़े एक बलिष्ठ से पूछा जिसके हाथ में बांस की एक लाठी थी।

''अरे प्रधान पुरूहूत ने इन्द्र पूजा का आयोजन करने की सोची है। समस्त ब्राह्मणों को उसमें आहूति देने के लिए सम्मिलित होना है। प्रधान ने तुम्हें भी बुलाया है। कल अपनी पुत्री के साथ आ जाना। इस बार प्रधान ने इन्द्र पूजा के बाद मिलन के लिए तुम्हारी पुत्री को चुना है।''

उस बलिष्ठ व्यक्ति की बात सुनकर पुरूधान का चेहरा पीला पड़ गया। तरूण ने देखा अविका का चेहरा भी उस संदेश लाने वाले व्यक्ति की बात सुनकर ऐसा हो गया मानो वो बरसों से बीमार हो।

''किन्तु ..'' पुरूधान ने कुछ कहना चाहा परन्तु उस व्यक्ति ने कहा, ''किन्तु क्या पुरूधान! क्या तुम इन्द्र पूजा में सम्मिलित होकर पुण्य अर्जित नहीं करना चाहते?''

''नहीं ऐसी बात नहीं है, किन्तु अविका अभी छोटी है।'' पुरूधान ने कहा।

''हा हा हा'' वह व्यक्ति पहले हंसा एवं फिर ''पन्द्रह बरसात तो देख चुकी है। और कहता है कि आयु कम है... कहा न कि समय पर आ जाना।'' कहते हुए वहां से चला गया।

'धम्म' की ध्वनि सुनकर पुरूधान ने पलटकर देखा तो अविका भूमि पर गिरी पड़ी थी।

''पुत्री..पुत्री..'' कहकर पुरूधान उसकी ओर लपका। तरूण भी गवाक्ष से हटकर बाहर आ गया।

अविका की दशा देखकर तरूण उल्टे पैर पुनः झोपड़ी के भीतर गया और तुरन्त ही जल से भरा घड़ा ले आया। जल से अविका के चेहरे पर कुछ छींटे मारने के बाद जब उसे होश आया तो तरूण ने पूछा, ''क्या हुआ अविका?.. तुम इस तरह अशक्त कैसे हो गई?''

तरूण की बात सुनकर अविका रोने लगी और फिर उठकर अंदर भाग गई। तरूण ने प्रश्नवाचक दृष्टि से वृद्ध पुरूधान को देखा तो उसने रूद्ध कंठ से कहा, ''कल ग्रामणी ने इन्द्र पूजा का आयोजन किया है और हवि देने के लिए मुझे भी बुलाया है।''

''ओह, तो इन्द्र को हवि अब ग्राम-ग्राम में दिया जाने लगा है।'' तरूण ने कहा एवं फिर तनिक रूककर बोला, ''आपने बताया था आप भी इन्द्र को मानते हैं .. फिर उनके हवन के आयोजन से आपके एवं अविका के मुख पर इतनी उदासी क्यों आ गई?''

''क्योंकि प्रत्येक बरस इन्द्र को हवि देने के उपरान्त ग्रामणी ग्राम की एक तरूणी से मिलन करके उसे अपने हर्म्य में रख लेता है।''

''क्या..?'' तरूण चौंकते हुए बोला, ''तरूणी की इच्छा न होते हुए भी!''

''हाँ'' वृद्ध पुरूधान सिसका।

''तो आप तृत्सुग्राम जाकर नृपति दिवोदास से ग्रामणी के दुष्ट व्यवहार के बारे में क्यों नहीं बताते। सुना है वो बड़े न्यायप्रिय है।''

''हाँ नृपति दिवोदास तो न्यायप्रिय है, किन्तु अब वे अस्वस्थ है और युवराज प्रतर्दन..'' पुरूधान ने बात अधूरी छोड़ दी।

''युवराज प्रतर्दन क्या..?'' तरूण ने उत्तेजित होकर पूछा।

''वे तो स्वयं इस ग्राम से तरूणियों को मिलन हेतु बुलवा चुके हैं।''

पुरूधान की बात सुनकर तरूण को धक्का लगा और वो समीप के पीपल वृक्ष के नीचे जाकर सोचपूर्ण मुद्रा में बैठ गया।

***

''क्यों री, अविका! आज नदी के समीप जाकर भी तू उसमें अठखेलियां करने हेतु नहीं उतरी। नहीं तो जल देखते ही तुम मत्स्य कन्या जैसी बन जाती थी।'' तरूण नदी के समीप बैठी अविका के समीप बैठते हुए बोला।

''लगता है देव पर्जन्य हमसे पूरी तरह रूठ गये हैं अमृताश्व! और ये इन्द्र को कैसी हवि दी जाती है, जिसके उपरान्त कन्याओं के साथ बलात मिलन किया जाता है।''

''मैंने सुना है पर्जन्य वृद्ध हो गया है और उसका स्थान इन्द्र ने ले लिया। अब हम सब इन्द्र की आज्ञा पर है।'' कहकर तरूण हंस पड़ा।

''तू हंस रहा है अमृताश्व! क्या कल जब मैं ग्रामणी से मिलन करके उसकी हो जाऊँगी तो तुझे दुख न होगा। अमृताश्व क्या तू मुझे प्रेम नहीं करता?''

''प्रेम! ..'' कहकर तरूण अमृताश्व अपने स्थान से उठकर सोचपूर्ण मुद्रा में नदी के तट पर टहलने लगा। उसे यूँ टहलते देख उसके पीछे आकर अविका बोली, ''सच कह अमृताश्व, क्या तू मुझे प्रेम नहीं करता?''

''लगता है जिस प्रेम ने मुझे जहां से दूर किया, वही प्रेम मुझे वहां पुनः लेकर जाना चाहता है।'' अमृताश्व धीरे से बुदबुदाया किन्तु अविका ने सुन लिया।

''तू कहां जाने की बात कर रहा है? देख तू मुझे छोड़कर गया तो मैं अपने प्राण हर लूंगी।'' तरूणी, अमृताश्व का हाथ पकड़कर उसे झिझोड़ते हुए बोली।

अविका की बात सुनकर भी अमृताश्व कोई उत्तर नहीं देता। बस मौन टहलता रहता है। कुछ देर उसके साथ टहलने के बाद अविका ने पुनः पूछा, ''क्या तुझे पीड़ा न होगी अमृताश्व जो मैं कल ग्रामणी की हो जाऊँगी?''

''नहीं होगी।'' अमृताश्व ठहर कर नतसिर करके बोल पड़ा।

''क.क..क्या..? क्या तू मुझसे प्रेम नहीं करता?''

''करता हूँ देवी अविका!''

''फिर तुझे पीड़ा न होगी जो मैं ग्रामणी की उप पत्नी बन जाऊँगी! . . सच कह अमृताश्व क्या तू सच में मुझसे प्रेम करता है..?'' अविका अमृताश्व के कंठ के समीप आकर बोली।

अपनी बलिष्ठ भुजाओं से अविका की देह अपने कंठ से लगाकर अमृताश्व बोला, ''प्रेम करता हूँ इसीलिए तो पीड़ा नहीं होगी।''

''क्या.. ये कैसा प्रेम है तेरा, जो मुझे पराया देखकर भी तुझे पीड़ा न होगी?'' अविका ने शीश ऊपर उठाकर अमृताश्व की आँखों में झांकते हुए बोली।

''तू नहीं जानती अविका, कि प्रेम ने मुझे इतनी पीड़ा दी है कि अब मैं पीड़ा सहने का अभ्यस्त हो गया हूँ। किन्तु तुम व्यथित न हो अविका, कल कुछ नहीं होगा। वो ग्रामणी कल तेरी इच्छा के बिना तुझे स्पर्श तक न कर सकेगा।''

''ओह .. क्या सच में वो ग्रामणी मुझे स्पर्श न कर सकेगा?.. सुन अमृताश्व, इस समय मुझे परिहास तनिक भी नहीं सुहाता।'' अविका रूठकर अमृताश्व के कंठ से हटकर नदी के तट पर खड़ी होकर बोली।

''ये परिहास नहीं है अविका! मैं सत्य कह रहा हूँ।'' अब अमृताश्व भी उसके समीप आ गया।

''तो तुम उस ग्रामणी से मेरी रक्षा करोगे?.. मानो तुम इन्द्र, वरूण या महाराज दिवोदास जैसे सामर्थ्यवान हो?''

''तूने सच सोचा अविका .. मैं इनमें से तो कोई नहीं किन्तु तुम्हारी रक्षा करने का सामर्थ्य मुझमें है।''

''तू कौन है अमृताश्व? सच कह मुझसे।''

''बता दूंगा .. पर तूझे वचन देना होगा कि तू ये बात किसी को न बतायेगी और..''

''और क्या अमृताश्व?''

''और तू प्रतिदिन की तरह अपनी निवस्त्र देह से इस नदी के जल में तैरकर मुझे अपना कलरव दिखायेगी।''

''वो तो तू रोज देखता है किन्तु कभी साथ देने जल में नहीं आता।''

''आज आऊँगा।'' अमृताश्व ठहरकर बोला।

अविका ने अमृताश्व की ओर देखते हुए अपने देह से द्रापि उतारी और नदी के शांत जल में उतर गई।

कुछ ही समय में नदी के जल में अविका की अठखेलियों से छोटी-छोटी लहरें आकार लेने लगी।

नदी के तट पर खड़ा अमृताश्व अविका को नदी में मछली की तरह तैरता देखता रहा।

अमृताश्व रोज ही अविका की नग्न देह को नदी की जल द्रापि से झांक कर देखता रहा है। किन्तु आज न जाने क्यों उसे अविका की देह अधिक लावण्यमयी लगी। वह आज से पहले कभी भी नदी में उतरकर अविका के साथ नहीं तैरा, किन्तु आज वो मन के हाथों विवश है और विवश होकर नदी में अविका के साथ तैरने लगा। कुछ समय तैरने के उपरान्त अमृताश्व अविका को अपनी भुजाओं में लेकर नदी से बाहर निकला और उसे घनी घास पर लिटाकर उसकी देह का निरीक्षण करते हुए बोला, ''अविका तैरने के बाद तेरे वक्ष कितने फूल जाते हैं और तेरी बाहें एवं जांघाओं की मांसपेशियां दूनी मोटी हो जाती है।'' कहकर अमृताश्व अपनी बलिष्ठ हथेलियों से अविका के पुष्ट वक्षों का मर्दन करने लगा। यह सबकुछ बड़ी आसानी से करते देखकर भी अविका ने उसे रोका नहीं बल्कि उसके लाल अधरों से सीत्कार फूट पड़ी। वो अधमुदी आँखों से अमृताश्व को देखते हुए बोली, ''प्रिय अमृताश्व तैरना एक भारी व्यायाम है, किन्तु तू तो ये व्यायाम नहीं करता, फिर भी तेरी देह कितनी पुष्ट है। तू सच बता, तू कौन है अमृताश्व?''

''बता दूंगा अविका, पहले मुझे ये व्यायाम कर लेने दे।'' कहकर अमृताश्व ने अपनी देह का पूरा बोझ अविका की देह पर डाल दिया।

***

''क्याऽ .. तू क्या कह रहा है.. तूऽ सुदास! ..'' अविका आश्चर्य से तरूण अमृताश्व को देखे जा रही थी।

''हाँ अविके, अभी तुझे विश्वास न होगा किन्तु कल जब मैं उस ग्रामणी से तेरी रक्षा करूंगा तो तुझे विश्वास हो जायेगा।''

''इसका अर्थ ये है तू वो सुदास है जिसने पणियों एवं किरातों को पराजित कर इस भूमि को आर्यवर्त नाम दिया।''

''नहीं-नहीं, ये कार्य तो मेरे पिता महाराज दिवोदास ने किया है।'' सुदास अविका के वक्षों का धीरे-धीरे मर्दन करते हुए बोला।

''किन्तु उन युद्धों का नायक तो तू ही था सुदास!'' अविका ने सुदास के माथे पर चुम्बन लेकर कहा।

''चल अब चलते हैं, कल इन्द्र के हवन के आयोजन में भी जाना है। तनिक चलकर विश्राम कर ले।'' सुदास ने अविका के होंठों का चुम्बन लेकर उठते हुए कहा।

''सुदास क्या ये सच है?''

''क्या अविका?''

''कि तू असुर कन्याओं से प्रेम करता था।''

''हाँ''

''किन्तु महामुनि भारद्वाज एवं मुनि वशिष्ठ तो इसका विरोध करते हैं। वे आर्यों की शुद्धता बनाये रखना चाहते है. फिर..?''

''प्रेम इन बंधनों को नहीं मानता। आर्यों के पुरोहित तो इसका भी निषेध करते हैं कि एक क्षत्रिय आर्य एक ब्राह्मण आर्या से मिलन नहीं कर सकता।'' सुदास अविका की नग्न देह द्रापि से ढ़ाकते हुए बोला।

''मुझे अब भय लग रहा है।'' अविका सुदास की बांह पकड़कर बोली।

''कैसा भय? क्या तुझे अब भी लगता है कि मैं तेरी रक्षा उस ग्रामणी से न कर सकूंगा।''

''न सुदास न .. समस्त आर्यवर्त में ऐसा कोई न होगा, जो तेरे सामर्थ्य पर विश्वास न करे। मुझे भय तो इस बात का है, कहीं आपके पिता और पुरोहित हमारा प्रेम अस्वीकार न कर दे। तुम तो जानते हो सुदास तुम आर्य क्षत्रिय हो और मैं आर्य ब्राह्मण।''

''तुम्हारा भय सत्य है अविका। ये पुरोहित अपने स्वार्थ के लिए इस भूमि को नरक बना देंगे।''

''क्या इन पुरोहितों को रोका नहीं जा सकता।''

''नहीं अविका ये बड़े छलछन्दी होते हैं। इनके आगे राजपद भी विवश होता है। तुम नहीं जानती अविका, इन्हीं पुरोहितों के स्वार्थी ज्ञान ने मुझे प्रेम से वंचित किया है। किन्तु असुर भी कम नहीं है.. जहां इन आर्य पुराहितों ने मुझसे लाखई एवं जुहिला को छीना, वहीं असुरों ने मुझसे महदेई को छीन लिया। जानती हो अविका, इसीलिए मैं तुमसे अपना प्रेम प्रदर्शित नहीं कर रहा था क्योंकि मेरे भाग्य में प्रेम नहीं है।''

''ऐसा न कहो सुदास, तुम्हारा विछोह मेरे प्राण हर लेगा।''

''नहीं अविका, कल मुझे उस ग्रामणी से तुम्हारी रक्षा करने के बाद तृत्सुग्राम जाना ही होगा।''

''तो क्या तू मुझे छोड़कर चला जायेगा सुदास? क्या आज का हमारा ये मिलन प्रथम एवं अन्तिम मिलन सिद्ध होगा?''

''चल अविका घर चल। अभी तू ज्यादा सोच मत कर। शिश्नदेव चाहेंगे तो सब ठीक होगा।''

''शिश्नदेव! .. तू आर्य होकर इन्द्र के स्थान पर शिश्नदेव की कृपा की बात करता है सुदास। क्या ये महदेई, जाखई एवं जुहिला के प्रेम का असर है जो तुम इन्द्र एवं वरूण के स्थान पर शिश्नदेव का गुणगान कर रहे हो।''

''तू अभी ये बाते छोड़ अविका, चल पहले घर चल।'' कहकर सुदास वहां न रूका। न ही मुड़कर देखा कि अविका उसके पीछे आ रही है या नहीं। सुदास को जाते देख, अविका भी उसके पीछे चल दी, विचार मग्न होकर।

***

इन्द्र को हवि देने के लिए जो मुख्य पुरोहित था, उसकी आयु लगभग साठ साल की होगी। उसके श्वेत केश, नाभि तक लटकती श्वेत चमकती दाढ़ी।

इन्द्र को हवि देने के लिए अविका ने आज अपनी देह को लाल ऊनी द्रापि से ढाक रखा था। कहते हैं, ग्रामणी पुरूहूत को लाल रंग की द्रापि में लिपटी कन्याओं में विशेष रूचि थी।

मुख्य पुरोहित ने मंत्र पढ़ना आरम्भ किया, साथ में पुरूधान ने भी मन्त्रोच्चारण किया। आहुतियां पूरी हुई। उपस्थित जनों में सोम, सुरा के चमस वितरित किये गये। पुरोडाश एवं हवि के लिए पकाया गया वृषभ का मांस, जनों के सामने आया। सब प्रसन्नता से इन्द्र एवं वरूण को धन्यवाद देकर भोजन करने लगे।

ग्रामणी पुरूहूत ने इशारा करके अविका को अपने हर्म्य में ले जाने का संकेत किया। दो आर्य स्त्रियां अविका को साथ ले जाने लगी। अविका ने अश्रु भरे नेत्रों से पुरूधान की ओर देखा। पुरूधान ने विवशता से नेत्र झुका लिए।

अविका को धीरे चलते देख आर्य स्त्रियों ने उसकी भुजायें पकड़कर उसकी चाल बलपूर्वक बढ़ाई। अविका ने उनके बल प्रयोग से घबड़ाकर सुदास की ओर देखा।

''रूको आर्य स्त्रियों! क्या किसी स्त्री को उसकी इच्छा के विरूद्ध किसी पुरूष के साथ संभोग करने के सज्ज करना उचित है?'' सुदास का कठोर स्वर सुनकर आर्य स्त्रियों ने अविका की बाहें छोड़कर ग्रामणी पुरूहूत की ओर देखा।

''पुरूधान .. तू तो कहता था कि ये तेरे पत्नी के भाई का पुत्र है और हमारे नियमों से बंधकर ग्राम में रहेगा। क्या तूने इसे ये नहीं बताया कि एक ग्रामणी किसी भी स्त्री को प्राप्त कर सकता है. उसे उस स्त्री की इच्छा या अनिच्छा जानने की कोई आवश्यकता नहीं।'' पुरूहूत ने जलते नेत्रों से पुरूधान की ओर देख कर कहा। पुरूधान उसके नेत्रों की लालिमा से यूँ भयभीत हुआ कि स्वर उसके कंठ में अटक कर रह गये।

''ले जाओ इसे भीतर..'' पुरूहूत दहाड़ा और स्त्रियां कांप कर अविका को खींच कर ले जाने लगी। निरीह अविका ने जोर लगाकर कंठ से कहा, ''सुदास रक्षा कर मेरी!''

''ठहरो छोड़ दो उसे।''

''सुदास.. सुदास.. सुदास..''

वहां उपस्थित जन कभी एक-दूसरे को और कभी सुदास की ओर अविश्वास से देखकर उसका नाम ले रहे थे। सुदास नाम सुनकर ग्रामणी उठकर बोला, ''कौन सुदास? दिवोदास का पुत्र?''

''हाँ मैं महान दिवोदास का पुत्र सुदास हूँ और तुम्हें आज्ञा देता हूँ कि इस कन्या को उसके घर जाने दो और भविष्य में कभी भी इस पर बुरी दृष्टि मत डालना।''

''हा हा हा .. सुदास और उसकी आज्ञा ..'' ग्रामणी अट्टाहस करते हुए बोला, ''वही सुदास जो अश्वनी कुमारों द्वारा दान में मिली कन्या को न संभाल सका। उसे अपने भाई के लिए छोड़कर भाग गया, वो आज एक कन्या की रक्षा करने की बात कर रहा है।''

''पुरूहूत अपनी जिह्वा को विराम दो अन्यथा ये दिवोदास पुत्र ..''

''अन्यथा क्या सुदास?.. क्या अन्यथा संभवतः तुम नहीं जानते कि मैं राजकुमार प्रतर्दन द्वारा रक्षित हूँ एवं उनके अतिरिक्त किसी की भी आज्ञा मानने को बाध्य नहीं।''

''पुरूहूत मैं तुझे महान दिवोदास के नाम पर आज्ञा देता हूँ, तू इस कन्या को जाने दे एवं फिर कभी भविष्य में इन्द्र यज्ञ के नाम पर कन्याओं को उनकी इच्छा के विरूद्ध प्राप्त न कर ..''

''सुदास तुम संभवतः नहीं जानते कि अब महाराज दिवोदास की आज्ञाओं का कोई अर्थ नहीं रहा। वे रूग्ण शय्या पर है और राजकुमार प्रतर्दन ही विशों की सम्पूर्ण व्यवस्था मुनि भारद्वाज के पुत्र गर्ग के मार्गदर्शन में संभालते हैं। .. और तुम इतना जान लो सुदास मैं जो कर रहा हूँ वो राजकुमार प्रतर्दन की आज्ञा से हो रहा है। हर ग्राम हर दिशा से निश्चित समय पर उन्हें भी भेंट स्वरूप कन्यायें भेजी जाती है।''

ग्रामणी की बात सुनकर सुदास के गाल एवं नथुने क्रोध और उत्तेजना से फूलने पिचकने लगे। उसने हवन कुण्ड के पास पड़ी वो वाशी (वसूला) उठाया जिससे हवन की लकड़ियां छीली गई थी और उसे ग्रामणी पुरूहूत पर फेंक कर मारा। वाशी सीधे जाकर पुरूहूत के मर्मस्थल पर लगा और वो तत्क्षण यमलोक वासी हो गया।

''कोई और है इस पुरूहूत का समर्थक?'' सुदास ने गर्जना करते हुए पूछा। पूरे प्रांगण में सन्नाटा छा गया। कुछ समय उपरान्त पुरूधान सुदास के समीप आकर बोला, ''राजकुमार सुदास, पुरूहूत का भले ही कोई समर्थक न हो किन्तु राजकुमार प्रतर्दन के असंख्य होंगे।

***

''क्या कर रही हो अविका रात्रि के इस पहर?'' सुदास ने अविका की झोपड़ी में घुसकर उसे नेत्र बन्द किये देखकर पूछा।

''देव सविता से प्रार्थना।'' अविका वैसे ही नेत्र बन्द किये हुए बोली।

''क्यों? क्या देवी सृष्टि रोक देना चाहती है.. क्या समय को बांध लेना चाहती है?'' सुदास, अविका के समीप बैठकर उसके नेत्रों की बन्द पलकों को अपनी अंगुलियों से सहलाकर बोला।

''हाँ सुदास मैं समय को बांध लेना चाहती हूँ।'' अविका ने अपने बड़े-बड़े नेत्रों को खोलकर कहा।

''इससे तो ये नव सृजित सृष्टि विखण्डित हो जायेगी देवी अविका।''

''किन्तु तू मेरे समीप रह जायेगा सुदास।''

''मैं भी तो यही चाहता हूँ अविका, कि उस राज प्रासाद में पुनः न जाऊं। मैंने कभी न केवल उस राज प्रासाद को छोड़ा था अपितु इस संसार को भी छोड़ना चाहता था किन्तु तूने मुझे जीवन प्रदान किया।''

''फिर तू क्यों लौट जाने की हठ किए बैठा है?''

''क्योंकि मैं नहीं चाहता कि तुझ जैसी कोई अन्य दुहिता अपनी इच्छा के बिना किसी की शय्या पर सहचरी न बनाई जाये। मैं नहीं चाहता कि कोई शक्ति या छल प्रपंच से किसी पर शासन करें।''

''किन्तु सुदास तूने उस समय पलायन क्यों किया जब तेरी प्रेयसियों जाखई एवं जुहिला को बलात् दासी बना लिया गया। .. और क्या ये भी सच है कि युद्ध में अदम्य वीरता के प्रदर्शन के लिए देव अश्वनी कुमार ने तुझे जो कन्या प्रदान की थी, उससे भी मुंह मोड़कर चला आया।''

''हाँ ये सच है..'' सुदास का उत्तर सुनकर अविका अपने स्थान से धीरे से उठी और धीमे पांव से गवाछ के समीप जाकर खड़ी हो गई।

''क्या सोचने लगी?'' सुदास भी उठकर गवाछ के पास आकर खड़ा हो गया।

''यही कि जब तू मुझे छोड़कर जायेगा, तो उसमें नया क्या है? स्त्रियों से प्रेम करके मुंह मोड़ लेना तुम्हारी आदत है।''

''ऐसा मत कहो अविका। सच कहूँ तो मैं भी चाहता हूँ कि सारी पृथ्वी पर समानता हो। जब जाखई एवं जुहिला को दासी बनाया गया तो उसे मैंने युद्ध का परिणाम मानकर स्वीकार कर लिया। सुदेवी जिसे अश्वनी कुमार ने मुझे मेरी वीरता के पुरस्कार स्वरूप दिया था, मैंने उसकी ओर एक भी दृष्टि नहीं डाली। सच तो ये है अविका, मैं एक साधारण जीवन जीने का अभिलाषी था। मैंने सोचा था कि जब एक बार आर्य यहां अनार्यों को पराजित करने में सफल हो जायेंगे और उनका राज्य स्थापित हो जायेगा, तो वे सबसे समानता का व्यवहार करेंगे। किन्तु मेरा सोचना गलत था।

अब देखो अविका! यहां तुम्हें बलात् सहचरी के लिए सज्ज किया जा रहा है। राज प्रासाद में बलात् कन्यायें भेजी जा रही है। मेरे पिता महान दिवोदास मृत्यु शय्या पर है। मुझे जाना ही होगा अविका।'' कहकर सुदास ने अविका के कंधे पर अपना हाथ रखा।

''मैं भी यही चाहती हूँ सुदास, कि तुम जाओ और अपना कर्तव्य पूर्ण करो। सुदेवी को वो सम्मान दो जिस सम्मान के साथ देव अश्वनी कुमार ने तुम्हें उसे प्रदान किया था। किन्तु क्या तुम मेरी दो इच्छाएं पूर्ण करोगे?''

''हाँ कहो अविका, मैं सम्पूर्ण प्रयास से जो तुम कहोगी उसे पूर्ण करूंगा।''

''सुदास जीवन में कभी जब अवसर मिले तो मुझे याद कर लेना और हो सके तो इस ग्राम में मुझसे मिलने पुनः आना।''

''अवश्य अविका, मैं वचन देता हूँ कि मैं लौटकर आऊँगा। अब कहो तुम्हारी दूसरी इच्छा क्या है?''

''सुदास, आज रात्रि तू सबकुछ भूलकर केवल मुझे याद रख। मुझमें खोकर मुझे अपना बना ले और मैं तुझमें खोकर तुझे पा लूं। सुदास, आज की रात्रि मुझे तुम्हारे बिना जीवन जीने की शक्ति प्रदान करेगी।''

अविका की बात सुनकर सुदास ने अविका के कंधे पकड़कर उसका मुख अपनी ओर किया। अपने पांव पर उचक कर अविका सुदास के केश संवारने लगी। अविका की देह पर पड़ी द्रापि उसके वक्ष से थोड़ी सरक गई। उसके पुष्ट स्तन दो श्वेत पर्वतों के समान चमक उठे। अविका की गठीली देह सौन्दर्य से ओत-प्रोत थी, उसके होंठों पर मनोहर मनुहार थी, आँखो में मादक चमक थी।

सुदास ने अविका को अपनी बलिष्ठ बांहों में कसा। वो उसकी बांहों में सिमट गई। अविका की देह कांप रही थी। त्वचा जल रही थी। सहसा अविका की नसें तड़प उठी मानों जन्मों से प्यासी हो। उसके स्तन, जो सुदास की देह का स्पर्श कर रहे थे, जलते कोयले के समान धधकने लगे।

''सुदास'',''सुदास'',''सुदास'' सम्पूर्ण रात्रि अविका का रोम-रोम बस यही कहता रहा। प्रभात होते-होते अविका तृप्त होकर सो गई। सुदास धीरे से उठकर एक गहरी दृष्टि से अविका को देखा। उसे महसूस हुआ - कल की तरूणी आज एक सम्पूर्ण स्त्री बन गई। उसने अंतिम बार उसे एक भरपूर दृष्टि देखा और फिर निःशब्द रहकर एवं किवाड़ खोलकर बाहर निकल गया। वो जानता था यदि अविका जग गई तो वो फिर कभी यहां से न जा सकेगा।

***

''विश्वरथ, आर्यों को आपकी सर्वाधिक आवश्यकता है। पिताजी तो आपको अपना पुत्र मानते थे। अब जबकि मैं इस प्राप्त राज्य को सुदृढ़ करना चाहता हूँ तो आप यहां से चले जाना चाहते हैं!''

''सुदास, तुम एक योग्य पिता के योग्य पुत्र हो। तुमने अपने बड़े भाई प्रतर्दन को प्राणदान देकर काशी की देख-रेख हेतु भेजा एवं सुदेवी को ग्रहण कर लिया, ये मेरे लिए अति सम्मान की बात है।'' अपनी बात कहकर विश्वरथ कुछ

देर ठहरे और फिर गवाछ के समीप जाकर खड़े हो गये। सोम का चषक हाथ में लिए सुदास भी वहां आकर खड़ा हो गया। और फिर गवाछ से बाहर पीपल के वृक्ष को देखते हुए बोला, ''विश्वरथ अब जब मैंने तुम्हारी इतनी बातें मानी है तो तुम क्या मेरी एक बात नहीं मान सकते!''

''मान सकता था सुदास, किन्तु नियति ने मेरे लिए कुछ और चुन रखा है। मुझे कुछ अन्य कार्य करने हैं। सच कहूँ सुदास तो मुझे विश्वरथ नहीं बने रहना। मुझे विश्वामित्र बनना है।''

''तुम विश्वामित्र बनो, मैं स्वयं चाहता हूँ कि तुम्हारा यश तुम्हारे द्वारा कहे गायत्री मन्त्र के समान ही चारों दिशाओं में फैले या उससे भी बढ़कर। किन्तु विश्वरथ मैं तुम्हारे बिना स्वयं को निःसहाय पाता हूँ। यद्यपि महामुनि भारद्वाज एवं मुनि वशिष्ठ मेरे एवं मेरे पिता के सहायक रहे हैं फिर भी न जाने क्यों सदैव से महामुनि अगस्त्य एवं आप पर ही अत्याधिक विश्वास करता हूँ। अब जबकि महामुनि अगस्त्य दक्षिण में आर्य संस्कृति के विकास के लिए प्रस्थान कर चुके हैं तो अब एक आप ही है जो मेरा हित चाहते हैं। अतः आपसे मेरा हाथ जोड़कर निवेदन है कि आप पुरोहित पद ग्रहण करके हमारा मार्गदर्शन करें।'' कहकर सुदास ने हाथ का चषक दीवार पर बने आले में रखकर विश्वरथ के सम्मुख हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

सुदास के जुड़े हाथ अपने दोनों हाथों में लेकर विश्वरथ बोले, ''सुदास, जिस प्रकार महामुनि अगस्त्य दक्षिण के विशेष कार्य हेतु गये हैं उसी प्रकार मुझे भी कुछ विशेष कार्य करने हैं। मुझे राजा त्रिशंकु, राजा हरिशचन्द्र एवं राजा दशरथ के अतिरिक्त राजा जनक के राज्यों में भी विचरना है। सुदास तुम महा प्रतापी हो और मुझे आशा है कि तुम सामर्थ्य पूर्वक राज्य करोगे। बस मेरी एक बात का ध्यान रखना .. सदैव अपने मन की सुनकर न्याय के पथ पर चलना। जब कभी अवसर मिला तो मैं अवश्य आकर तुमसे भेंट करूंगा।''

विश्वरथ की बात सुनकर कुछ क्षण मौन रहने के पश्चात सुदास बोला, ''तो ठीक है विश्वरथ .. मैं सदैव अपने मन के अनुसार न्याय के पथ पर चलूंगा और यदि कभी उस मार्ग में तुम आ गये, तो मैं तुम्हारा भी विरोध करूंगा।'' कहकर सुदास हंस पड़ा और विश्वरथ गवाछ के बाहर न जाने क्या तकने लगे।

***

''यदि पिता-पुत्र का युद्धाभ्यास समाप्त हो गया हो तो जलपान कर लिया जाये।'' सुदेवी ने युद्धाभ्यास के लिए बने विशाल कक्ष में प्रवेश करते हुए कहा। जहां सुदास अपने पुत्र सोमक के साथ युद्धाभ्यास कर रहा था।

''हाँ हाँ, बस हम आ ही रहे थे!'' सुदास ने अपनी तलवार अस्त्र रखने के स्थान पर रखी और उसका अनुसरण करते हुए सोमक ने भी अपनी तलवार सुदास की तलवार की साथ रख दी।

''क्या आप सब कुछ समय और बिना जलपान के नहीं रह सकते।''

सुदास, सुदेवी एवं सोमक ने स्वर की दिशा में देखा। वहां एक चार-पांच वर्ष की कन्या खड़ी थी। ऊनी द्रापि उसकी देह से लिपटी थी।

''क्यों पुत्री, क्या तुम्हें अभी जलपान की इच्छा नहीं?'' सुदास ने होंठ खोल कर वहीं दूर से उसे चुम्बन करने का अभिनय करते हुए कहा।

''नहीं पिताजी, अभी नहीं। मैं तो आपके साथ युद्ध अभ्यास करना चाहती हूँ।'' कन्या ने अपने नन्हें-नन्हें हाथ कमर पर रखते हुए कहा।

''न-न ना अब कोई युद्ध अभ्यास नहीं होगा। संस्कृति चलो जलपान करना है।'' कहकर सुदेवी ने कन्या को बलात अपनी बाहों में उठाकर वहां से ले चली।

''न..ना.. माँ मुझे नीचे उतारो, मुझे पिताजी से युद्ध अभ्यास करना है, भइया के समान।'' कन्या सुदेवी की गोद से उतरने का असफल प्रयास करते हुए बोली। परन्तु सुदेवी उसे नीचे नहीं उतारती, अपितु उसे लेकर एक कक्ष में आ गई जहां एक मेज पर जलपान सज्ज है। उनके पीछे-पीछे सुदास एवं सोमक भी आ गये।

सुदेवी कन्या को एक आसन पर बिठाते हुए बोली, ''चलो अब मौन होकर जलपान करो।''

''मैं जानती हूँ आप मुझे वहां से क्यों ले आई हैं एवं अब मौन रहने को क्यों कह रही है!'' अपने पिता सुदास एवं भाई सोमक पर दृष्टि डालते हुए वह चंचलता से बोली, जो अब उसके सामने आसन पर बैठ चुके थे।

''ठीक है, तो मैंने ऐसा क्यों किया? कृपया बता भी दीजिए भगवती।'' सुदेवी ने मुख पर हंसी लाकर संस्कृति के सामने रखे पात्र में गवाशिर डालते हुए कहा।

''उं.ऊं.हूँऽ .. पुनः वही गवाशिर..!'' संस्कृति नाक सिकोड़कर बोली।

''ओह, तो मेरी पुत्री को क्या चाहिये था?'' सुदास ने स्नेह से पूछा।

''दध्याशिर'' संस्कृति मुंह फुलाकर बोली।

''ठीक है, मैं लेकर आती हूँ।'' सुदेवी अपने स्थान से उठते हुए बोली।

''मैं जानती हूँ माँ इस समय दध्याशिर क्यों लेने जाना चाहती है?'' संस्कृति सुदेवी को उपहास की दृष्टि से देखकर बोली।

''अच्छाऽ तो ये भी बताने की कृपा करे भगवती।'' कहकर सुदेवी पुनः अपने आसन पर बैठ गई।

''यही कि जिससे मुझे ये विस्मरण हो जाये कि मैं ये जानती हूँ कि आपने मुझे युद्ध अभ्यास क्यों नहीं करने दिया।''

''भगवती संस्कृति यदि अब ये बात भी आप बता देंगी तो हम पर बड़ी कृपा होगी।'' सुदेवी ने संस्कृति के सामने हाथ जोड़कर कहा।

''यही कि मैं भईया सोमक के समान पिताजी से पराजित नहीं होती अपितु उन्हें पराजित कर देती हूँ।''

''हाँ क्यों नहीं! भगवती सामर्थ्यवान जो है.. क्या अब मुझे दध्याशिर लाने की अनुमति हैं?'' सुदेवी ने संस्कृति के हल्के घुंघराले बालों को सहलाकर कहा।

''हूँ..'' संस्कृति ने भोलेपन से कहा और सुदेवी के साथ सुदास एवं सोमक भी हंस पड़े।

सुदेवी, संस्कृति के लिए दध्याशिर लेने चली गई एवं सुदास अपने आसन से उठकर संस्कृति के आसन के समीप वाले आसन पर बैठते हुए बोला, ''चलो जब तक माँ संस्कृति लिए दध्याशिर लेकर आती है, तब तक मैं संस्कृति के गवाशिर का भोग लगाता हूँ।'' कहकर सुदास ने गवाशिर अपनी अंगुलियों से उठाकर संस्कृति के मुंह में रखा और फिर सोमक से कहा, ''पुत्र तुम भी ग्रहण करो।''

''क्या पिता जी, मुझे अपने हाथ से भोजन न करायेंगे।'' सोमक ने भोलेपन से पूछा।

''अवश्य पुत्र'' .. कहकर सुदास ने अभी सोमक को खिलाने के लिए गवाशिर का कौर उठाना ही चाहता था कि प्रहरी ने आकर कहा, ''हे पतिराजा महामुनि वशिष्ठ पधारे हैं।''

''ठीक है, चलो उनसे कहो मैं आता हूँ।'' सुदास ने प्रहरी से कहा और फिर सोमक से बोला, ''पुत्र सोमक तुम माँ के हाथ से भोजन कर लेना, मैं महामुनि से मिलकर आता हूँ।''

***

महामुनि वशिष्ठ के साथ उनकी पत्नी के अतिरिक्त एवं उनका एक पुत्र शक्ति एवं एक कन्या भी थी। सुदास ने मुनि एवं मुनि की पत्नी के चरण छूकर प्राणिपात करके कहा, ''मैं धन्य हुआ जो आप यहां पधारें ..''

वशिष्ठ, सुदास को कुछ कह पाते उससे पूर्व ही बालक शक्ति ने कहा, ''राजन सुदास, क्या आप मेरे चरण स्पर्श न करेंगे? मैं यहां खड़ा हूँ ये आपकी दृष्टि में नहीं आया?'' बालक शक्ति की बात सुनकर सुदास हंसकर बोला, ''बालकों के चरण नहीं स्पर्श किये जाते अपितु उन्हें आशीर्वाद दिया जाता है।''

''किन्तु हम ब्राह्मण हैं, ब्राह्मण पुत्र हैं, अतः अन्य समस्त जनों को हमारे चरण स्पर्श करने ही चाहिए।''

शक्ति की बात सुनकर सुदास थोड़ा मौन हो गया। उसे समझ नहीं आया कि वो बालक शक्ति को किस भांति समझाये! इसलिए वो विषय परिवर्तित करते हुए बोला, ''महामुनि वशिष्ठ आप तो सत्यव्रत के राज्य में पुरोहित थे। फिर यूँ अचानक ..'' कहते-कहते सुदास ने वशिष्ठ, उनकी पत्नी, बालक शक्ति एवं कन्या पर दृष्टि डाली। उन सबके अंग वस्त्र फटे हुए थे एवं वे सब के सब दुर्बल दिख रहे थे।

''कैसे राजन हो आप जो द्वार पर आये ब्राह्मण को भीतर ले जाकर उन्हें जलपान कराने के स्थान पर उनसे प्रश्न किये जा रहे हो?'' शक्ति की कही इस धृष्टतापूर्ण बात को सुदास ने हंसकर टालते हुए कहा, ''ओह हाँ, मुझे तो स्मरण ही नहीं रहा कि छोटे ब्राह्मण को भूख लगी होगी, चलिये महामुनि भीतर प्रस्थान करते हैं।'' कहकर सुदास ने हाथ के संकेत से सभी को भीतर चलने को कहा। सभी उस दिशा में चल दिये।

स्नान, ध्यान, जलपान करके जब वशिष्ठ का चित्त शांत हुआ तो सुदास ने उनसे एकांत में भेंट की।

एक बार पुनः प्रणाम करते हुए सुदास ने पूछा, ''महामुनि आपका सत्यव्रत के राज्य से आना एवं इस दशा का कारण क्या है?''

मुनि वशिष्ठ धम्म से आसन पर बैठकर माथे पर हाथ रखकर बोले, ''विश्वरथ न जाने कौन से जन्म का बैर पाले है हमसे। सत्यव्रत की पुरोहिताई करते हुए हम अपने परिवार के वर्तमान और भविष्य के प्रति निश्चिंत थे। किन्तु विश्वरथ के हस्तक्षेप से हमें वहां का पुरोहित पद छोड़ना पड़ा।

''विश्वरथ का हस्तक्षेप?'' सुदास ने तनिक अविश्वास से कहा।

''विश्वरथ तुम्हारा मित्र एवं मैत्रावरूण अगस्त्य का प्रिय जो है। संभवतः इसलिए तुम्हें इस बात को लेकर अविश्वास है कि उसने उत्तर कोशल से हमारे पुरोहित पद पर घात किया।''

''न..ना महामुनि मैं आप पर अविश्वास नहीं कर रहा।'' सुदास हाथ जोड़कर विनीत भाव से बोला, ''हे वशिष्ठ! आपने ही तो मेरा ऐन्द्राभिषेक किया था। मैं तो बस ये जानने की अभिलाषा रखता था कि उत्तर कोशल में ऐसा हुआ क्या था?''

''सुनो सुदास'' वशिष्ठ ने विस्तार से बताना आरम्भ किया, ''तैयारूण का पुत्र सत्यव्रत आरम्भ में धार्मिक प्रवृत्ति का था, किन्तु वह एक नव परिणीता ब्राह्मणी से बलात्कार करके एवं मेरी एक गाय को मारकर उसका भोजन करके चाण्डालों से कार्य करने लगा। मैंने क्रुद्ध होकर उसका नामकरण सत्यव्रत के स्थान पर त्रिशंकु कर दिया। मेरे कहने पर त्रैयारूण ने उसने युवराज पद से हटा दिया।

तैयारूण की मृत्यु होने के पश्चात मैंने उस राज्य के मंत्री एवं राजा दोनों का पद संभालकर त्रिशंकु को वन में निष्कासित कर दिया। किन्तु वन में उसकी भेंट विश्वामित्र से हुई और उसकी सहायता से त्रिशंकु ने मुझे वहां से हटा दिया।''

वशिष्ठ की बात सुनकर सुदास ने चिंतन-मनन किया यद्यपि त्रिशंकु के साथ वशिष्ठ का व्यवहार पूर्णतः न्यायोचित नहीं था। क्योंकि कुछ भी हो सत्यव्रत अपने पिता का उत्तराधिकारी था। उसका उत्तर कोशल राज्य पर पूर्णतः अधिकार था। किन्तु वशिष्ठ ने उसकी और उसके मित्र की सहायता की थी, ऊपर से सुदास अत्यन्त सहृदय था। अतः वो प्रकट में बोला, ''हे वशिष्ठ! जो हुआ सो हुआ, अब आप हमारा पुरोहित पद स्वीकार करके हमारा मार्गदर्शन करें।''

वशिष्ठ तो यही चाहते थे। सुदास का पुरोहित पद स्वीकार करके वो बोले, ''सुदास मेरे साथ जो कन्या है वो एक ब्राह्मण आर्य की है उसका नाम मदयन्ती है। उसके माता-पिता यमलोक वासी हो चुके हैं। वो भी हमारे साथ यहीं रहेगी।''

''जैसी आपकी अभिलाषा मुनि वशिष्ठ, अब आप पुरोहित पद पर हैं। अतः ऐसे निर्णय लेने के अधिकार आपके पास सुरक्षित है।''

सुदास की बात सुनकर वशिष्ठ बोले, ''स्वस्तु सुदास इन्द्र एवं वरूण तुम पर अपनी कृपा बनाये रखे।''

***

जिस तृत्सुग्राम को राजधानी बनाकर सुदास परूष्णी के कधारों पर शासन कर रहा था, उसी तृत्सुग्राम के समीप असुरों का छोटा सा ग्राम भी था। यद्यपि वशिष्ठ जैसे पुरोहित असुरों को देखना भी पसंद नहीं करते थे फिर भी वे उनके उस ग्राम को उजाड़ना नहीं चाहते थे क्योंकि उनकी सेवा के लिए दास-दासी उसी असुरग्राम से आते थे।

कभी-कभार तृत्सुग्राम के बालक-बालिका असुरग्राम पहुँच जाते और कभी-कभार असुरग्राम के बालक-बालिका तृत्सग्राम आ जाते। फिर ये सब आपस में मिलकर क्रीड़ा करते। ये देखकर महामुनि वशिष्ठ को अच्छा नहीं लगता था और वे कठोरता से इसका निषेध करते किन्तु बाल चेष्टाओं पर अंकुश लगा पाना उनकी निषेधाज्ञा से पूर्ण नहीं हो पाता था।

जब आर्यों ने दिवोदास के नेतृत्व में असुर किरातों को पराजित किया तो उसके उपरांत असुरों की सम्पत्ति के साथ-साथ उनकी स्त्रियों एवं बच्चों में भी आर्यों का अधिकार स्थापित हो गया। यद्यपि उस समय सुदास को ये उचित नहीं लगा कि स्त्रियों, पुरूषों एवं बच्चों पर गौओं, अज-अवि के समान अधिकार स्थापित किया जाये। किन्तु वो पिता दिवोदास एवं वशिष्ठ और भारद्वाज की आज्ञाओं के आगे निर्बल पड़ गया। सुदास का वैसे भी राजसी वैभव में मन नहीं रमता था। इसीलिए वो अमृताश्व के वेश में सादे जीवन हेतु पलायन कर गया था। किन्तु जब उसे अपने पिता की मृत्यु एवं अग्रज प्रतर्दन के अत्याचारों का समाचार मिला तो लौट आया और उसने वशिष्ठ एवं विश्वरथ की सहायता से राज्य प्राप्त किया।

जब सुदास राज्य से विमुख हो पलायन कर गया, तो दिवोदास की अस्वस्थता का लाभ उठाकर भारद्वाज, उनके पुत्र गर्ग एवं वशिष्ठ आदि मुनियों ने मनमानी करके लाखई एवं जुहिला को अन्य असुर कन्याओं के समान दासी

बना लिया। लाखई तो सुदास के वियोग में शीघ्र ही रूग्ण होकर मृत्यु की प्राप्त हो गई। किन्तु जुहिला ने उचित समय आने पर सुदास के पुत्र को जन्म दिया। आर्य इस नवजात को हानि न पहुँचाये इस कारण जुहिला उसे लेकर असुरग्राम चली गई। जब सुदास वापस आया तो जुहिला ने उससे मिलने से मना कर दिया किन्तु उसने ये कहलवाया यदि सुदास राजाज्ञा देंगे तो मिलने से मना न करेगी। किन्तु सुदास ने उसे राजाज्ञा नहीं दी जो उसकी एक रात की प्रेयसी रही थी और उसके पुत्र की माँ थी।

सुदास का पुत्र तृत्सुग्राम में आता और कई बार अपने पिता के पास रूक जाता। सुदेवी उसे भी अपने पुत्र सोमक के समान प्रेम करती। इस पुत्र का नाम सुदास ने मित्रसह रखा और ये बिल्कुल सुदास के समान दिखता था इसलिए सुदेवी उसे सौदास पुकारती।

शंबर युद्ध में सुदास के समान ही विश्पला ने भी असुरों से मित्रता का स्वांग करके उनसे छल करके आर्यों की विजय में सहायता की थी। इस युद्ध में विश्पला का एक पैर भी कट गया था जिसे अश्वनी कुमारों ने शल्य क्रिया द्वारा एक कृत्रिम पैर विश्पला को लगा दिया था।

शंबर से प्रेम के स्वांग स्वरूप हुई रति क्रिया के परिणाम स्वरूप विश्पला ने भी एक पुत्र को जन्म दिया। एक असुर का पुत्र जन्मने के कारण इन्द्र ने विश्पला को अमरावती से बाहर न निकलने की निषेधाज्ञा दी। इन्द्र एवं वशिष्ठ आदि इस नवजात शिशु का वध कर देना चाहते थे किन्तु विश्वामित्र के हस्तक्षेप से शिशु के प्राण बच गये। शंबर से युद्ध के पश्चात विश्वरथ ने शंबर की एक पुत्री से विवाह कर लिया था। इसलिए विश्पला ने शंबर के पुत्र को जब जन्म दिया तो शंबर पुत्री ने विश्वरथ से अपने इस भाई के प्राण रक्षा की प्रार्थना की थी। शंबर का ये पुत्र भी असुरग्राम में रहता था और कभी-कभी सौदास के साथ तृत्सुग्राम में बाल क्रीड़ा करने आता रहता था। इस बालक का नाम इन्द्रौत था।

सुदास एवं सुदेवी की दो संताने थी - पुत्र सोमक एवं कन्या संस्कृति।

जब ये सारे बालक आपस में क्रीड़ा करते तो उसमें वशिष्ठ का पुत्र शक्ति एवं उनके साथ आई कन्या मदयन्ती भी सम्मिलित हो जाती। उन्हें यूँ साथ में क्रीड़ा करते देख मुनि वशिष्ठ के नेत्र विचित्र मुद्रा में सिकुड़ते रहते।

***

समय सविता की किरणों में सवार हो सप्त-सैंधव में दिवस एवं रात्रि का चक्र चलाता रहा।

वशिष्ठ को पुरोहित का पद देने से कई आर्य एवं अनार्य जातियां सुदास से बैर रखने लगी। इन आर्य जातियों में मुख्यतः नहुष के वंशज थे।

स्मरण होगा नहुष ने अपने प्रताप से इन्द्र पद प्राप्त कर लिया था किन्तु भारद्वाज, अगस्त्य एवं वशिष्ठ के षड्यन्त्रों से उसे पद छोड़ना पड़ा। न केवल इन्द्र पद छोड़ना पड़ा अपितु नहुष की देह कुछ औषधियों के प्रभाव से यूँ निष्क्रिय कर दी गई कि वो भूमि पर नाग के समान पड़ा रहता, घिसटता रहता। भारद्वाज परलोक वासी हो गये थे और अगस्त्य दक्षिण वासी। अब वशिष्ठ ही शेष थे जो सुदास के माध्यम से आर्य-अनार्यों में ही नहीं अपितु आर्यों के बीच भेद कर रहे थे। यद्यपि सुदास ये नहीं चाहता था किन्तु फिर भी वशिष्ठ के किये उपकारों के बदले वो उनकी अधिकतर आज्ञायें मानता था।

वास्तव में नहुष के वंशज वशिष्ठ के साथ-साथ इन्द्र से भी प्रतिशोध लेना चाहते थे क्योंकि इन्द्र ने नहुष को इन्हीं मुनियों की सहायता से अपदस्त करके पुनः इन्द्र पद प्राप्त किया था। नहुष के भाई रजि ने देवों से प्रतिशोघ लेने के लिए युद्ध भी किया किन्तु असफल रहा।

अब नहुष वशंजों ने संगठित होकर इन्द्र से प्रतिशोध लेने की सोची। इन्द्र ने भी वशिष्ठ एवं सुदास के साथ संगठित होकर नहुषों का विनाश कर देने की योजना बनाई। सुदास पर इन्द्र के उपकार थे। वशिष्ठ ने भी सुदास को इन्द्र की सहायता करने के लिए ये कहकर फुसलाया कि यदि नहुष के वंशजों को अभी न रोका गया तो सुदास का राज्य भी हस्तगत कर लेंगे।

इन्द्र एवं वशिष्ठ अपने-अपने हितों के लिए एक-दूसरे का हित साधने में लगे हुऐ थे। अतः इनके षड्यंत्रों के चलते सप्त-सैंधव में एक ऐसे युद्ध की नींव पड़ी जिसे 'दशराजन युद्ध' कहा गया।

जब वशिष्ठ का त्रैयारूण के पुत्र सत्यव्रत जिसे वशिष्ठ ने त्रिशंकु नाम दिया था, से विग्रह हो गया तो त्रिशंकु विश्वरथ की शरण में गया। कुछ समय उपरान्त त्रिशंकु ने सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा जताई जिसके निमिति विश्वरथ ने यज्ञ किया।

इन्द्र ने इस यज्ञ में घोर विध्न उत्पन्न किया जिस कारण त्रिशंकु सदेह स्वर्ग न जा सका। इस कारण से इन्द्र एवं विश्वरथ में उस समय बैर चल रहा था।

नहुष के वशंजों ने इस युद्ध में विश्वरथ जो अब तक अपने परोपकारों के कारण विश्वामित्र बन चुके थे, उनसे सहायता मांगी। जिसे विश्वामित्र ने स्वीकार कर लिया।

नहुष के पुत्र ययाति ने दो विवाह किये थे। एक दैत्यगुरू शुक्र की पुत्री देवयानी से एवं दूसरा दैत्यराज वशपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा से। ययाति की देवायानी से दो पुत्र युद्ध और तुर्वश तथा शर्मिष्ठा से तीन पुत्र अनु, दध्यु एवं पुरू कहलाये।

जिस समय सप्त-सैंधव में दशराजन युद्ध की भूमिका बन रही थी, उस समय पुरू के वंश में कई शाखायें हो चुकी थी। सुदास भी वास्तव में एक पुरू ही था। पुरूजन, पुरूकुत्स, तसदस्यु आदि ने कई युद्धों में सुदास के पिता दिवोदास की सहायता भी की थी। किन्तु इस समय सुदास इन्द्र एवं वशिष्ठ की सहायता कर रहा था। अतः पुरूजन ने सुदास को अपना शत्रु मान लिया। इस समय पुरूओं का नायक अजीमढ़ के पुत्र ऋक्ष का पुत्र संवरण था। पुरूओं की एक शाखा कुशिक थी। विश्वामित्र कुशिक शाखा से थे। अतः जब पुरूओं ने इन्द्र के विरूद्ध विश्वामित्र से सहायता मांगी तो विश्वामित्र तैयार हो गये। दूसरा आर्यजन यदु के वशंज थे।

पुरूजन के अतिरिक्त यदु, तुर्वश, दुह्य एवं अनु आर्यजन ने जो इन्द्र एवं वशिष्ठ के विरूद्ध संगठित हो उठे जिनकी सहायता सुदास कर रहा था। ये पांचों आर्यजन नहुष-ययाति के वंशज थे।

ये सारे आर्यजन भली-भांति जानते थे कि सुदास की सहायता प्राप्त करके इन्द्र अजेय बन जायेगा। अतः इन लोगों ने सर्व सम्मति से निर्णय लिया कि परूष्णी के किनारे पहले सुदास से युद्ध करके उसे पराजित कर दिया जाये तो इससे इन्द्र की शक्ति अत्यन्त क्षीण हो जायेगी। और फिर इन्द्र को पराजित करना एक सरल कार्य रह जायेगा।

किन्तु सुदास एक महान योद्धा था। उसने कई बार युद्धों में अपने शौर्य का सफल प्रदर्शन किया था। अतः इन पांच आर्यजनों ने सुदास के विरूद्ध अन्य कबीले भी संगठित करने आरम्भ कर दिये थे। इन कबीलों में आर्य एवं अनार्य दोनों ही थे। इस युद्ध में विजय के फलस्वरूप पांचों आर्यजनों को सुदास शासित समस्त भूभाग भी मिलने वाला था जो अत्यधिक उपजाऊ एवं समृद्ध था और जिसमें सुदास अपनी योग्यता से उत्तरोतर वृद्धि कर रहा था।

***

विश्वामित्र के मार्गदर्शन में पांच आर्यजनों ने तीस कबीलों का एक विशाल संगठन बना लिया था। इन तीस कबीलों में दस तो उस समय सप्त-सैंधव के सर्वाधिक बड़े एवं शक्तिशाली थे। इनकी संख्या दस होने कारण इस युद्ध का नाम दशराज्ञ या दशराजन युद्ध पड़ा।

इस संगठन में जो तीस कबीले सम्मिलित थे उनमें से दस मुख्य कबीले कुछ इस प्रकार थे -

१. तुर्वष, २. यदु, ३. अनु, ४. द्रध्यु, ५. पुरू, ६. शिम्यु, ७. कवष ८. भेद, ९. वैकर्ण, १०. एक अन्य वैकर्ण।

कवश, कुरूश्रवण के पुरोहित थे। तुर्वश एवं युदु के पुरोहित कण्व थे। द्रध्यु के भृगु जिनका एक अन्य नाम ग्रासमद है, पुरोहित थे। और पुरू के पुरोहित अत्रि थे।

भेद एक अनार्य, असुर था। वो शंबर का एक मुख्य सेनापति रहा था। अभी तरूण था एवं अपने स्वामी शंबर की पराजय एवं उसकी मृत्यु का प्रतिकार करने के लिये सुदास के विरूद्ध संगठन में सम्मिलित हुआ था।

इन दस मुख्य जनों के अतिरिक्त मत्स्य, पक्थ, भूलानस, अलिन, विषली, ऊज, शिव, शिग्रु, यक्ष इत्यादि सुदास के विरूद्ध संगठन में सम्मिलित थे।

इस संगठन का नेतृत्व संवरण कर रहा था एवं मुख्य पुरोहित विश्वामित्र थे।

ऐसा नहीं था कि सुदास को अपने विरूद्ध बने इस 'समिता' के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। इसके परिचारक उसे कबीलों के यूँ समिता बनाने की समय-समय पर सूचना देते रहते थे। जब सुदास को ज्ञात हुआ कि विश्वामित्र उसके विरूद्ध बने समिता का मार्गदर्शन कर रहे हैं तो उसके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। विश्वामित्र उसका बचपन का मित्र था। मुनि अगस्त्य के पास दोनों ने एक साथ शिक्षा प्राप्त की थी। सुदास ने विश्वरथ के लिए रोहणी का परित्याग किया था। सुदास को ज्ञात था कि विश्वरथ रोहिणी से प्रेम करता था, इसलिए जब महामुनि अगस्त्य ने सुदास के समक्ष रोहिणी के विवाह का प्रस्ताव रखा तो उसने बड़ी विनम्रता से इंकार कर दिया। जबकि रोहिणी सी अदभुत सुंदरी से विवाह का प्रस्ताव तो स्वयं इन्द्र भी नहीं ठुकरा सकते थे।

अब तो विश्वरथ विश्वामित्र बन चुका है। विश्वामित्र जिसका अर्थ होता है - विश्व का मित्र।

सुदास व्यग्रता से कक्ष में विचरण करके सोचता है - ''विश्वामित्र तू न केवल मुझसे घात कर रहा है अपितु अपने नाम के साथ भी तू घात कर रहा है। तुझे इतना भी स्मरण न रहा कि मैं सुदास हूँ जिसके पिता महान दिवोदास तुझे अपना पुत्र मानते थे। मुझसे कहीं अधिक तुझे प्रेम करते थे और आज तू आर्यवर्त के उन कबीलों का अगुवा बन गया है जो अकारण ही परूष्णी के कधारों को रक्त रंजित कर देना चाहते हैं।'' इन बातों को सोचते-सोचते सुदास ने आवेश में आकर मुठ्ठी का प्रहार दीवार पर किया। प्रहार शक्तिशाली था, दीवार से थोड़ी मिट्टी छूटकर भूमि पर गिर गई।

''ऐसे यूँ किसका क्रोध बेचारी दीवार पर उतारा जा रहा है?'' निष्क से खनकते स्वर को सुनकर सुदास का क्रोध आधा कम हो गया और आधा स्वर की दिशा में देखकर कम हो गया। कक्ष के द्वार पर सुदेवी खड़ी थी। कंधे पर द्रापि लपेटे हुए। उसके नेत्रों में अब भी निंद्रा झलक रही थी। सुदेवी ने अपना सिर द्वार पर टिका रखा था।

सुदास ने अपनी पत्नी पर प्रसन्नतापूर्वक दृष्टि डाल कर कहा, ''देवी, आज सविता उदय से पूर्व ही उठ गई। अभी तो भोर की लालिमा भी नहीं दिख रही।

''वही तो मैं पूछ रही हूँ'' सुदेवी अपने हल्के घुघंराले बालों को अपने गालों से हटाकर कंधें के पीछे पीठ पर डालते हुए बोली, ''अधिराज, आज यहां दीपक के प्रकाश में यूँ इतनी व्यग्रता से टहलकर किस पर क्रोध प्रकट कर रहे हैं?''

''कुछ नहीं सुदेवी, बस यूँ ही थोड़ी सी समस्या है। अब जाओ सुदेवी, जाकर थोड़ी निंद्रा और ले लो, अभी सविता उदय में समय शेष है।'' सुदास आसन पर निढाल होते हुए बोला।

''आपकी पत्नी हूँ सुदास, अब आपकी समस्या जानने का मुझे पूर्ण अधिकार है।'' सुदेवी यूँ ही द्वार से सिर टिकाये हुए बोली।

सुदास ने मुस्कुराकर सुदेवी को देखा और कहा, ''अवश्य देवी, आपको पत्नी होने के नाते अधिकार है। किन्तु ..''

''किन्तु क्या अधिराज?'' सुदेवी ने अपनी बोझल पलकें झपकाई।

सुदास अपने स्थान उठकर द्वार पर खड़ी सुदेवी के समीप आया एवं द्वार के सहारे खड़ी सुदेवी को झटके से अपने गोद में उठा लिया।

''ओह, ये क्या करते हो?'' सुदेवी चिहुंकी।

''अपने पति होने के अधिकार का प्रयोग कर रहा हूँ।'' सुदास ने सुदेवी को गोद में उठाये हुए अपने व्यक्तिगत कक्ष की ओर जाते हुए बोला।

''वहां सोमक एवं संस्कृति हैं।'' सुदेवी ने अपनी श्वेत बांहें सुदास के कंठ में डाल दी।

''रहने दो, कक्ष एवं शय्या काफी बड़ी है।'' सुदास ने अपनी पद चाप बढ़ाई।

''उ.उ.म.म.म..अह'' सुदेवी के होंठों से अस्फूट स्वर फूटे और उसने अपने नेत्र बन्द कर लिये।

''यदि अधिराजा युद्ध में विजयी हो चुके हो तो अब अपनी समस्या के बारे में बता सकते हैं।'' सुदेवी ने अपनी फूली श्वांस संयत करके अपने ऊपर से सुदास को बिस्तर पर एक ओर खिसकाने का प्रयास करते हुए कहा।

''ये मुझ पर झूठा आरोप है। जबकि सत्य तो ये है कि युद्ध में विजयी प्रत्येक बार के समान देवी हुई हैं।'' सुदास ने सुदेवी के ऊपर से हटते हुए बगल में लेटकर उसके पुष्ट वक्षों पर अपना सिर रखते हुए बोला।

''तो इससे पहले कि आपके पुत्र-पुत्री उठ जाये। आप अपनी समस्या को अपनी पत्नी के सामने प्रस्तुत करें।'' सुदेवी ने अपनी नर्म अंगुलियों से अभी-अभी हुए रति युद्ध में उलझे सुदास के केश को सुलझाने का प्रयास करते हुए बोली।

सुदेवी की बात सुनकर सुदास उसे सब बताता चला गया। - 'पंच आर्य जनों की समिता। तीस कबीलों की युद्ध की तैयारी। और फिर विश्वामित्र की बात करते-करते वो पुनः आवेशित हो गया।

अपने अधरों से सुदास के अधरों पर एक लम्बा चुम्बन लेकर सुदेवी ने सुदास के आवेश को कम करते हुए बोली, ''सुदास, विश्वामित्र आपके मित्र हैं। आपके भ्राता समान हैं। आपको एक बार उनसे मिलकर बात करनी चाहिए। आशा है कुछ न कुछ हल अवश्य निकलेगा।''

सुदेवी की बात सुनकर सुदास कुछ समय तक विचार मग्न मौन रहकर बोला, ''तुम ठीक कहती हो सुदेवी। मैं शीघ्र ही विश्वामित्र से भेंट करूंगा।''

सुदास की बात सुनकर सुदेवी के होंठों पर मुस्कान खिल उठी और वो सुदास के बगल से उठकर उसके ऊपर लेट गई।

''ये क.या..?'' सुदास ने अपनी आँखों में झांकती सुदेवी की आँखों में झांक कर कहा।

''अब आक्रमण की बारी मेरी है।'' सुदेवी के होंठ अब सुदास के होंठों के एकदम समीप थे।

''और जबकि महामुनि अगस्त्य कहते थे, स्त्री लज्जाशील होती है।'' सुदास फुसफसाया।

''और जब यमी अपने भाई यम से रति युद्ध की याचना करती है, तो फिर तो आप मेरे पति है।'' सुदेवी ने अपनी बांह पीछे डाल कर सुदास का सिर तनिक ऊपर उठाया। सुदास ने भी अपनी बांहें सुदेवी की पीठ पर कसी। तभी सुदेवी चिहुंकी ''छोड़ो मुझे'' और फिर शक्ति लगाकर सुदास की पकड़ से छूटकर शय्या पर एक ओर बैठ गई।

''क्या हुआ?'' कहकर सुदास उठा तो सोमक उठकर शय्या पर बैठा अपनी नींद भरी आँखों को अपनी नन्हीं हथेलियों से मसल रहा था।

सोमक को देखकर सुदास ने सुदेवी पर दृष्टि डाली, तब सुदेवी धीरे से बोली, ''अधिराज को पराजय से बचाने के लिये उनका सेनापति सही समय पर उपस्थित हो गया।''

सुदेवी की बात सुनकर सुदास कुछ समय मौन रहा और फिर वो अपनी अंगुली से सोमक का नन्हा पैर सहलाने लगा।

पिता के स्पर्श से हुई गुदगुदी से सोमक शय्या पर एक तरफ भागा तो संस्कृति उठकर रोने लगी और सुदेवी ने किसी चौपाये की तरह चलकर संस्कृति को अपनी गोद में भींच लिया।

***

''विश्वरथ, तुम विश्वरथ से विश्वामित्र बनते ही इतने परिवर्तित हो जाओगे इसकी आशा मुझे कतई नहीं थी।'' सुदास की बात सुनकर विश्वामित्र ने उस पर आग्नेय दृष्टि डाली और फिर गवाछ के समीप जाकर खड़े हो गये।

''तुम मौन होकर खड़े नहीं रह सकते विश्वामित्र। जिस युद्ध का सृजन तुम कर रहे हो उसमें असंख्य जनों की हानि होगी। परूष्णी का कछार रक्त से लाल हो उठेगा। असंख्य बालकों को अनाथ करने का ये अपराध होगा और इस अपराध का उत्तरदायित्व तुम पर होगा विश्वामित्र।''

''अपराध..!'' विश्वामित्र ने पलटकर पुनः आग्नेय दृष्टि से सुदास को देखते हुए कहा, ''अपराध तो वो है जो तुम कर रहे हो।'' विश्वामित्र की बात सुनकर सुदास उसे मुस्कुराकर व्यंग्य से देखकर बोला, ''अच्छा मार्ग अपनाया है विश्वरथ तुमने। अपने अपराध पर द्रापि डालने के लिए दूसरे को अपराधी सिद्ध कर दो।''

''सुदास जो अपराधी होते हैं उन्हें सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं होती।'' विश्वामित्र के मुख पर अब व्यग्रता के स्थान पर शांति लौट आई थी।

''विश्वरथ यदि तुम मुझे अपराधी मानते हो तो अब कृपा करके ये भी बता दो कि मैंने अपराध क्या किया है?''

''जाओ सुदास अपने ग्राम लौट जाओ और वहां अपने हर्म्य में नर्म शय्या पर लेटकर स्वयं विचार करों। संभवतः देव वरूण की कृपा से तुम्हें ज्ञात हो जाये कि तुम क्या अपराध कर रहे हो?''

''विश्वरथ, क्या ही अच्छा होता जो ये विचार एकांत में तुम करते तो तुम्हें ज्ञात हो जाता कि तुम किस प्रकार सप्त-सैंधव की पुरोहिताई प्राप्त करने के लिये यह पवित्र नदियों के जल में रक्त के मिश्रण करने का अपराध करने जा रहे हो। अरे विश्वरथ! मैंने तो स्वयं तुम्हें तृत्सुकुल का पुरोहित पद देना चाहा था।''

अचानक सुदास कहते-कहते मौन हो गया। टहलकर विचार करते हुए वह पुनः बोला, ''ओह, विश्वरथ अब मैं समझा। उस समय तुमने तृत्सुकुल का पुरोहित पद इस कारण अस्वीकार किया था क्योंकि तब मैं आज के प्रकार समृद्ध नहीं था और तुम्हें मुझसे अधिक उत्तर कोशल के सत्यव्रत का समृद्ध कुल भाया और तुम उसके यहां जाकर पुरोहित पद पर आसीन हो गये। और आज जब हमने महामुनि वशिष्ठ के मार्ग में समृद्धि को प्राप्त कर लिया है तो तुम हमारे विरूद्ध समिता बनाकर इन समृद्ध कछारों का पुरोहित बनकर भोग करना चाहते हो।'' श्वास लेने के लिए सुदास एक क्षण रूका और पुनः बोला, ''विश्वामित्र तुम्हारी इस लालसा की प्राप्ति के लिए जो रक्त बहेगा उसका अपराध तुम्हारे सिर होगा।''

यद्यपि सुदास आवेशित था किन्तु विश्वामित्र अब भी शांत थे।

''ये तुम्हारा पुत्र सोमक है न?'' विश्वामित्र ने सुदास के साथ आये एक बालक की ओर संकेत करके पूछा।

''हाँ विश्वरथ ये सोमक है। मेरा पुत्र। मैंने इसे तुम्हारे विश्वरथ से विश्वामित्र बनने की कथायें सुनाई है। मुझे लगा कि ये तुमसे मिलकर कुछ सीखेगा किन्तु अब मुझे लग रहा है, सोमक को अपने साथ यहां लाकर मैंने भूल की है। न जाने इसका बालमन ये जान कर क्या सोच रहा होगा कि विश्वामित्र पुरोहित पद की लालसा में रूधिर से परूष्णी लाल करने वाले है।''

''तुम्हारा एक ओर पुत्र है न सुदास?'' विश्वामित्र ने शांति से पूछा।

''हाँ है।'' सुदास ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

''उसका क्या नाम है?''

''सौदास .. किन्तु विश्वामित्र तुम इन पारिवारिक प्रश्नों से अब मेरा हृदय नहीं जीत सकते।''

''सौदास को साथ नहीं लाये।'' विश्वामित्र अब भी शांत थे।

''वो अपनी माँ के पास असुरग्राम में है।'' सुदास विश्वामित्र के सामने खड़े होकर बोला, ''विश्वरथ तुम पुनः निरर्थक प्रश्न कर रहे हो।''

''नहीं सुदास ये निरर्थक प्रश्न नहीं है।'' अचानक विश्वामित्र के स्वर में शांति का स्थान क्रोध ने ले लिया, ''सुनो सुदास, आज यहां तुम्हारे साथ सोमक तो है किन्तु सौदास नहीं, जानते हो यह अपराध है।''

''बालको सी बातें मत करो विश्वरथ ..''

''ये बालकों सी बात नहीं है सुदास।'' विश्वरथ चीखते हुए बोले, ''तुम सौदास को साथ इसलिए नहीं लाये क्योंकि उसकी माता एक आर्या न होकर असुर कन्या है। सुदास तुम जनों में असमानता का व्यवहार करके अपराध कर रहे हो।

तुम अपराध कर रहे हो सुदास, अपने साथ जुहिला को न रख पाने का अपराध। विश्पला के पुत्र को तृत्सुग्राम में सम्मान सहित न रख पाने का अपराध। आज आर्य स्त्रियों से प्रेम करने वाले अनार्य दण्डित किये जाते हैं और दस्यु कन्याओं से बलात यौन सम्बन्ध एवं दासी बनाने वाले पुरस्कृत होते हैं। सुदास तुम न केवल भरत कुल अधिराजा हो अपितु समस्त सैंधव के अधिराजा हो और तुम अनार्य स्त्रियों एवं बालकों का शोषण रोक पाने में असमर्थ रहे हो।''

''अरे जो उपहार में मिली देव कन्या सुदेवी की रक्षा न करके पलायन कर गया हो। जिसने असमर्थता के चलते अपने लिए निधि कन्या को प्रतर्दन की शय्या को सौंप दिया हो इससे आप अब भी कोई आशा रखते हैं मुझे इस पर घोर आश्चर्य है महामुनि विश्वामित्र।''

तभी सुदास एवं विश्वरथ ने देखा द्वार पर तुर्वीत खड़ा था। क्रोध एवं घृणा से कांपते हुए।

तुर्वीत को देखते ही सुदास की देह क्रोध से कांपने लगी। वो उसके समीप जाकर बोला, ''दुष्ट तुर्वीत तुम्हारे इन दुवर्चनों का प्रति उत्तर अब मेरे इषु एवं निषंग ही देंगे।'' तत्पश्चात सुदास ने एक दृष्टि विश्वरथ पर डाली और कहा, ''स्मरण रखना तुर्वीत मेरे इषुओं से तुम्हारी रक्षा कोई भी न कर सकेगा। कोई भी नहीं।''

उसके बाद सुदास वहां नहीं रूका, तीव्रता से निकल गया। विश्वरथ विचार मग्न उसे जाते हुए देखते रहे।

***

संवरण, चतुरंग एवं विश्वामित्र के नेतृत्व में छियासठ सेना नायकों से सुसज्जित अनु एवं द्रध्यु समेत साठ हजार छः सौ जन सुदास को सप्त-सैंधव से हटाने के लिए परूष्णी की ओर बढ़े।

इन आर्यजनों का साथ महान अनार्य शंबर का सेनापति भी साथ दे रहा था जिसके सानिध्य में असंख्य कृष्णवर्णी योद्धा थे और जो शंबर की मृत्यु का प्रतिशोध दिवोदास पुत्र सुदास से लेना चाहते थे।

भेद से वशिष्ठ के एक सम्बन्धी की पुत्री शसा प्रेम करती थी। भेद इस युद्ध में सुदास को पराजित करके शसा से विवाह की अभिलाषा रखता था।

इस समय पुरूओं का नायक संवरण, तुर्वशों का तुर्वीत, यदु का कुरूयाण, अनुओं का चतुरंग एवं द्रध्यु का दुर्भीत था। इन सबकी दृष्टि परूष्णी के उन कधारों पर थी, जिन्हें सुदास ने अपने परिश्रम से उपजाऊ बनाया था।

जहां एक ओर ये पंचजन कई अन्य आर्य एवं अनार्य कबीलों की समिता बनाकर अपने स्वार्थ के लिए सुदास से युद्ध करने को तत्पर थे। वहीं दूसरी ओर वशिष्ठ एवं इन्द्र भी अपने स्वार्थ के लिए ये युद्ध करना चाहते थे।

इन्द्र एवं वशिष्ठ, सुदास के माध्यम से अपने समस्त शत्रुओं का विनाश करके अपना मार्ग निष्कंटक बनाना चाहते थे।

विश्वामित्र का अपने शत्रुओं का साथ देने से क्रोधित सुदास वशिष्ठ एवं इन्द्र के इन षड्यंत्रों को समझ पाने में असमर्थ था। सच तो ये था कि वशिष्ठ अभी अपने किसी भी कृत्यों से सुदास को अपने षड्यंत्रों का पता नहीं चलने देना

चाहते थे। अतः वशिष्ठ की कुटिल चालों के वशीभूत होकर सुदास अपने कुछ वीर सहायकों के साथ पंचजनों का प्रति उत्तर देने हेतु कटिबद्ध हो उठा।

***

सुदास के विरूद्ध बनी पंच जनों की समिता की अग्रिम पंक्ति में तुर्वश, मत्स्य, भृगु एवं द्रध्य थे। जबकि इनके पीछे पक्थ, अलिन, विषाणी एवं शिव सज्जित थे।

अनु, पुरू एवं द्रध्यु के साथ भेद इनकी सहायता हेतु एक अलग समिता में थे।

जब सुदास को अपने शत्रुओं के आक्रमण की गतिविधि की सूचना मिली तो उसकी वीर भुजाएं फड़क उठी। उसने परूष्णी पार कर शत्रुओं की समिता को पराजित करने का निश्चय किया। जबकि सुदास ये स्वयं जानता था कि यह कार्य असंभव के समान था।

सुदास ने जब वशिष्ठ से कहा कि परूष्णी पार कर पंचजनों को वह वहीं पर तृत्सुग्राम में प्रवेश करने से रोक देगा तो वशिष्ठ को सुदास का ये कदम आत्मघाती लगा। किन्तु जब सुदास ने उन्हें अपनी पूर्ण योजनायें बताई तो महामुनि की आँखें सुखद आश्चर्य से खुलती चली गई।

जब पंचजन सुदास के विरूद्ध समिता बना रहे थे तब सुदास भी शांत नहीं बैठा था। भले ही सुदास एवं उसकी सैनिक शक्ति संख्या में पंचजनों से दशांश से भी कम हो किन्तु वह पंचजनों को युक्ति से हराने की योजना बना रहा था।

वर्षा ऋतु अपने चरम पर थी। सुदास ने मन में संकल्प कर लिया था कि जिस प्रकार उसके पिता महान दिवोदास ने चालीसवें शरद में शंबर को परास्त किया था। वो वैसे ही इस वर्षा में पंचजनों को पराजित करेगा।

सुदास ने बड़े-बड़े वृक्षो के तनों एवं पाषाण खण्ड एवं मोटी द्रापि में मिट्टी बांधकर परूष्णी का बहाव उस स्थान पर रोक दिया जिसके पास जनों की ऊंचाई से अधिक घास के मैदान थे जिनके किनारे-किनारे पंचजन तृत्सुग्राम की ओर बढ़ रहे थे।

सुदास ने एक ऐसा बांध परूष्णी पर बांध दिया, जो वृषभ गाड़ी में प्रयोग होने वाले पहियों को घुमाकर रस्सी से वृषभ द्वारा खींचने पर तनिक शक्ति

लगाकर तोड़ा जा सकता था। ये रस्सियां उन तनों को खिसकाने का काम करती, जिनके ऊपर अन्य तनों, पाषाण खण्डों एवं द्रापियों में बंधी मिट्टी रखकर ये अल्पकालिक बांध बनाया गया था।

पंचजनों की विभिन्न भागों में विभक्त सेना जब तृत्सुग्राम के पार परूष्णी के समीप पहुंची तो सुदास वहां घास के मैदानों में छिपकर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

सम्मिलित पंचजनों की सेना जब घास के मैदानों के मध्य बने मार्ग से निकली तो सुदास के एक तनिक अधिक उत्साही तरूण सेनापति ने सुदास के संकेत से पहले ही एक इषु छोड़ दिया। पवन के वेग से वो इषु कवि चायमान के कंठ को फाड़ता हुआ निकल गया। वह बिना स्वर किये अश्व से गिर पड़ा।

''तृत्सुओं ने छल से आक्रमण किया है।'' कहकर तुर्वीत ने अपने अश्व का मुख इषु आने वाली दिशा की ओर घास की ओर मोड़ा। ठीक उसी समय सुदास ने अपनी ज्यां से इषु को उसके कंठ की ओर फेंका। तुर्वीत का भी वही परिणाम हुआ जो कवि चायमान का हुआ था।

''तुर्वीत के गिरते ही पंचजनों की सेना में भगदड़ एवं कोलाहल मच गया और उधर घास के मैदानों में छिपे हुये तृत्सुजन उन पर इषु बरसाने लगें।

संवरण एवं चतुरंग ने साहस करके घास के मैदानों के भीतर घुसकर तृत्सुओं से युद्ध करने के लिये अपने सैनिकों को उत्साहित किया।

सुदास जानता था। संख्या में कम तृत्सु तब तक ही सुरक्षित है, जब तक पंचजनों की असंख्य सेना घास के मैदानों में प्रवेश नहीं करती। अब जबकि पंचजन धीरे-धीरे घास के मैदान में प्रवेश कर पाने में सफल हो रहे थे, तो सुदास ने अपनी योजना के दूसरे भाग पर काम करने की सोची। क्योंकि तृत्सुजनों के कंधों पर लटकी तुणीर में इषु की संख्या भी कम होती जा रही थी।

सुदास ने सुश्रवा को पीछे से नवनिर्मित अल्पकालिक बांध पर जाने को कहा, जहां उसके कुछ सैनिक उसके संकेत की प्रतीक्षा में थे। सुश्रवा के जाने के पश्चात सुदास ने बाकी जनों को घोडे पर सवार होने को कहा। प्रत्येक जन अपने साथ अपना घोड़ा भी लम्बी घास के मध्य छुपाया हुआ था।

सविता की किरणों से बनी परछाई की लम्बाई देखकर सुदास ने अपने घोड़े की पीठ थपथपाई और उसका घोड़ा पवन के वेग घास को चीरते हुऐ आगे बढ़ा। उसके साथियों ने उसका अनुसरण किया।

पंचजन समिता के जो जन घास में घुसने का प्रयास कर रहे थे वो अचनाक अपनी ओर आते अश्वों को देखकर घबराये। वे जब तक कुछ समझ पाते उनके पास पहुँचे अश्वों पर सवार तृत्सुजनों के हाथों की ताम्र आयसी उनके कंधों से कंठ काट चुकी थी।

घास में घुसे दशराजन जनों के कंठ काट कर सुदास के नेतृत्व में उसकी सेना मैदान में ऐसे प्रकट हुए जैसे वर्षा ऋतु में मेघ के मध्य अशनि (बिजली) प्रकट होती है। तृत्सुजनों के अश्व द्रुतगति से परूष्णी नदी की ओर बढ़े। पंचजन तृत्सुओं के यूँ प्रकट होने से हतप्रभ खड़े थे और सुदास एवं उनके जन परूष्णी की ओर बढ़ रहे थे।

''पीछा करो उनका।'' संवरण संभल कर जोर से चिल्लाया। समस्त दशराजन समिता सुदास के पीछे झपटी।

''शीघ्रता करो!'' सुदास अपने अश्व की पीठ थपथपाकर चिल्लाया। उसके पीछे-पीछे उसके साथियों ने भी अपने अश्वों की गति बढ़ाने के लिये उनकी पीठ थपथपाई।

परूष्णी की ओर बढ़ते तृत्सुजनों पर पंचजन ने अश्व के ऊपर से ही ज्यां से इषु छोड़ा। इषु के प्रहार से कई तृत्सु योद्धा पीठ पर घाव खाकर नीचे गिरने लगे।

अपने जनों को यूँ गिरता देखकर सुदास ने एक वृक्ष की ओट ली एवं तुर्वशों, यदुओं पर इषु बरसाने लगा। साथ ही वो तृत्सुओं को शीघ्र से शीघ्र परूष्णी पार करने के लिए प्रेरित कर रहा था। सुदास को यूँ अकेले दशराजन को रोकता देख कुछ साहसी तृत्सु तरूण भी वृक्ष की ओट से शत्रुओं पर इषु वर्षा करके उनका मार्ग अवरूद्ध करने लगे।

तृत्सुजन जब परूष्णी के समीप पहुँचे तो सुदास भी अपने साथियों के साथ पलटकर परूष्णी की ओर बढ़ा और उसके पीछे उसके शत्रु भी बढ़े।

सुश्रवा तीव्रता से बांध के समीप पहुँचा और वहां घास पर एक वृक्ष के तने पर सविता के किरणों की परछाई को गहरी दृष्टि से देखने लगा। जब वृक्ष के तनों पर एक निश्चित लम्बाई पर परछाई पहुँची तो सुश्रवा चिल्लाया ''वृषभों को छोड़ो।''

सुश्रवा का आदेश पाकर वृषभ छोड़ने वालों ने वृषभ को आगे बढ़ाया। वृषभ के गर्दन में पड़ी रस्सी ने बांध के किनारे लगे चक्र को घुमाया एवं चक्र ने

अपने से बंधी रस्सी को लिपटाना आरम्भ कर दिया। चक्र में रस्सी के लिपटने के साथ ही उस रस्सी के अन्तिम छोर पर बंधे वृक्ष का तना खिसका। ठीक उसी समय मेघ गरजे, बिजली कड़की एवं वर्षा की तीव्रता इतनी बढ़ गई कि मानो इन्द्र देव आज समस्त सप्त-सैंधव को जलमग्न करने पर उतारू हो।

तने के खिसकने से उस पर रखे पाषाण खण्ड एवं मिट्टी के ढेले पानी के बहाव में बहने लगे एवं देखते ही देखते सारा का सारा बांध परूष्णी की धारा के साथ बहने लगा। बांध के टूटते ही परूष्णी की जल धारा प्रलय का रूप धर कर आगे बढ़ी।

''तीव्रता करो!'' परूष्णी के मध्य में सुदास चिल्लाया। बांध टूटने के फलस्वरूप जमा हुए जल की धारा एकदम समीप थी। सुदास के पीछे-पीछे उसके शत्रु भी परूष्णी के जल में प्रवेश कर चुके थे।

इधर सुदास ने जब अंतिम तृत्सुजन के रूप में परूष्णी को पार किया तो उसके शत्रु परूष्णी के मध्य में थे। ठीक उसी समय बांध से छूटे जल की प्रलय धार सीधे वहां पहुँची।

परूष्णी के किनारे छोटे पर्वत पर पहुँच कर सुदास ने अश्व का मुख मोड़ा एवं परूष्णी की ओर निहारा। उसके शत्रु उस तेज प्रवाह में तिनके के समान बह रहे थे।

युद्ध अभी समाप्त नहीं हुआ था। सुदास के कुछ शत्रु उसके पीछे परूष्णी को पार करने में सफल रहे थे।

परूष्णी की वेगवती धारा ने सुदास के असंख्य शत्रु लील लिये थे। किन्तु परूष्णी के इस पार व उस पार उसके कुछ शत्रु अभी जीवित थे।

संवरण ने जब बांध टूटने एवं अधिक वर्षा से परूष्णी को उफान पर देखा, तो वह सचेत हो उठा। उसे देखकर असुर भेद ने भी अपने अश्व को परूष्णी पर उतरने से रोक लिया। अपने अधिकांश जनों को घास के मैदान में मरता एवं परूष्णी में बहता देखकर संवरण का उत्साह क्षीण हो गया।

''इन्द्र एवं वरूण की आज सुदास पर कृपा है। हमें लौटना होगा।'' संवरण ने अपने नेत्रों पर हाथ से छाया बनाकर परूष्णी के पार देखने का प्रयास करते हुए भेद से कहा।

भेद ने परूष्णी के पार देखने का प्रयास किया, जहां सुदास एवं उसके अपने जन पीछे से आये पंचजन समिता के जनों से युद्ध कर रहे थे। ज्यों ही

सुदास के प्रहार से कवश भूमिसात हुआ संवरण ने अपने अश्व का मुख मोड़कर भेद से कहा, ''चलो भेद, अभी सुअवसर नहीं आया है।''

''हाँ सत्य कहा आपने, सुदास को पराजित करने का अभी अवसर नहीं आया है किन्तु एक कार्य को पूर्ण करने का यही सुअवसर है।'' भेद ने अपने अश्व का मुख मोड़कर संवरण के समीप आकर बोला।

''कैसा कार्य, कौन सा सुअवसर?'' संवरण ने प्रश्नवाचक दृष्टि भेद पर डाली।

''तुम मेरी प्रतीक्षा अपने ग्राम जाने वाले मार्ग पर करना। मैं एक पहर के लिए वहां आऊँगा।'' यह कहकर भेद ने अपने अश्व की पीठ थपथपाई और उसका अश्व वर्षा से हुए कीचड़ में भी पवन के वेग से दौड़ पड़ा।

संवरण की प्रश्नवाचक दृष्टि भेद का पीछा कर रही थी।

***

इधर जब आज प्रातः सुदास अपनी योजनानुसार परूष्णी के किनारे पहुँचा तब मुनि वशिष्ठ ने अपने आश्रम में सुदास की विजय के साथ इन्द्र एवं वरूण के लिये भी यज्ञ आरम्भ किया।

इस यज्ञ में आश्रम में उपस्थित सभी छोटे बड़े मुनि के अतिरिक्त सुदास का परिवार भी सम्मिलित था। सुदेवी, सोमक, संस्कृति के अतिरिक्त वशिष्ठ के सम्बन्धी की पुत्री सशा भी थी।

मुनि वशिष्ठ की मुखमुद्रा में इस समय रोष था और वे हवि देने के समय क्रोधित प्रतीत हो रहे थे। निश्चय ही उनका ये क्रोध उन आर्यों पर था जो अनार्यों से मिलकर उनकी एवं इन्द्र की सत्ता को चुनौती दे रहे थे।

महामुनि वशिष्ठ का आश्रम देखकर भेद उग्र हो उठा। उसके सब दुखों की जड़ आर्यजनों के यही मुनि थे। ये मुनि ऐसे 'दण्ड विधान' बना रहे थे जिनसे अनार्यों का जीवन अत्यन्त कठिन होता जा रहा था। इन कठोर दण्ड विधानों को लागू करने के लिए वशिष्ठ, सुदास को माध्यम बना रहे थे। अपने अश्व को पहाड़ की एक चोटी पर ले जाकर भेद ने आश्रम के भीतर दृष्टिपात किया।

हवन समाप्त हो चुका था। वशिष्ठ के सामने सुदेवी बैठी थी एवं उसके साथ सशा। वशिष्ठ दोनों से कुछ कह रहे थे। भेद सुन न सका। सशा के केशों पर सविता की किरण नृत्य कर रही थी। उसके केशों के साथ उसके हाथ की

अंगुलियां क्रीड़ा कर रही थी। सशा आर्य ब्राह्मण थी किन्तु वो रंगद्वेष नहीं मानती थी। वह भेद से प्रेम करती थी किन्तु वशिष्ठ के दण्ड विधान के अनुसार कोई आर्य कन्या किसी अनार्य से विवाह नहीं कर सकती थी।

भेद ने एक गहरी दृष्टि लावण्यमयी सशा पर डाली एवं होंठों से उसका नाम लिया ''सशा'',''सशा'' नाम लेते ही उसका कंठ अवरूद्ध हो गया और नेत्रों में अश्रु झिलमिला उठे। भेद शंबर का पुत्र था। सौ पुरों का स्वामी रहा था, यदि आज शंबर जीवित होते तो सशा उसके समीप होती किन्तु आज वो उसे समीप से देख भी नहीं सकता। भेद ने एक घृणा भरी दृष्टि सशा के सामने बैठे वशिष्ठ पर डाली एवं अपने अश्व को पहाड़ की टेकड़ी से वशिष्ठ के आश्रम की ओर दौड़ा दिया।

वशिष्ठ, भेद का कट्टर शत्रु था। उसके कारण भेद का सर्वनाश हो चुका था। आज उसने वशिष्ठ पर चोट करने का निर्णय लिया। आज वो अपनी प्रेयसी, वशिष्ठ के सम्बन्धी की पुत्री सशा का वशिष्ठ के सामने से हरण करने वाला था।

भेद जानता था, आर्य मुनि अपने आश्रम में अस्त्र-शस्त्र नहीं रखते। यद्यपि आश्रम में रक्षक थे, किन्तु भेद को अपने भुजबल एवं सामर्थ्य पर पूर्ण विश्वास था।

भेद के साथ उसके कुछ चुने हुए कृष्णवर्णी जन भी थे। उनके साथ हाथों में कुलिश लिये ''जय शिश्नदेव'' की पुकार करते हुए भेद ने वशिष्ठ के आश्रम में प्रवेश किया।

भेद को यूँ आश्रम में देखकर सब स्तब्ध रह गये। केवल सशा के मुख पर प्रसन्नता थी। भेद अश्व पर सवार सशा के समीप पहुँचा एवं उसके कटि प्रदेश में हाथ डालकर उसे अपने साथ घोड़े पर बिठा लिया। जब तक आश्रम में उपस्थित रक्षक एवं मुनि वशिष्ठ कुछ समझते तब तक भेद आश्रम के बाहर जा चुका था।

भेद के साथ अश्व पर सशा को देखकर कृष्णवर्णियों ने ''जय शिश्नदेव'' का उद्घोष किया और भेद के पीछे-पीछे अपने अश्व दौड़ा दिये।

***

''जब तक वो दस्यु भेद जीवित है, ये विजय तब तक अपूर्ण है सुदास।'' क्रोध से वशिष्ठ के नेत्र रक्तिम हो रहे थे।

''किन्तु महामुनि भेद अब निश्चय ही हम पर कुदृष्टि नहीं डालेगा। अब हमें उससे शंकित होने की आवश्यकता नहीं।'' सुदास ने सोम का पात्र होंठों से लगाते हुए कहा।

''कुदृष्टि नहीं डालेगा! क्या कह रहे हो सुदास?.. वो दास कृष्णवर्णी मेरे नेत्रों के सामने से एक आर्य कन्या को उठा ले गया। क्या इससे भी बढ़कर कुदृष्टि होगी?''

वशिष्ठ की बात सुनकर सुदास कुछ देर तक मौन रहने के पश्चात बोला, ''महामुनि ये तो सर्वविदित है कि सशा एवं भेद एक दूसरे से प्रेम करते हैं। मुझे तो लगता है, सशा स्वयं ही भेद के साथ जाने के लिए हृदय से सज्ज थी। और यदि भेद के मन में कोई अन्य दूषित विचार होता तो आश्रम में अन्य स्त्रियां भी उपस्थित थी। वो उन पर कुदृष्टि डाल सकता था।''

''सुदास'' वशिष्ठ क्रोध से फुंफकारते हुए बोले, ''एक कृष्णवर्णी एक आर्या से यौन सम्बन्ध बनाये ये वशिष्ठ को स्वीकार नहीं। तुम्हें उस भेद को समाप्त करना ही होगा। ऐसा करके तुम तृत्सुग्राम को पूर्णतः सुरक्षित भी कर पाओगे।''

''यदि ये बात तृत्सुग्राम की है तो मैं अवश्य ही भेद को समाप्त करूंगा। आप निश्चिंत रहिये। मैं शीघ्र ही संवरण के विरूद्ध अभियान करूंगा जिसने भेद को शरण दे रखी है।''

सुदास की बात सुनकर वशिष्ठ प्रफुल्लित मन से बोले, ''स्वस्तु सुदास स्वस्तु इन्द्र एवं वरूण तुम पर कृपा बनाये रखे।''

***

''तृत्सुग्राम ही नहीं अपितु आर्यवर्त को सुरक्षित करने के उद्देश्य से सुदास ने भेद एवं संवरण के विरूद्ध अभियान किया।''

भेद एवं संवरण भी एक वीर योद्धा थे। ऊपर से विश्वामित्र का परामर्श भी उन्हें समय-समय पर मिलता रहता था। अतः संवरण एवं भेद को पराजित कर पाने में सुदास को दो वर्ष से भी अधिक समय लग गया।

अन्ततः एक दिवस सुदास अपने पराक्रम एवं सामर्थ्य के बल पर यमुना के किनारे भेद को मारने में सफल रहा। संवरण डर कर हिमालय की गुफाओं

में जाकर छुप गया। रोती-बिलखती सशा को पकड़कर तृत्सुग्राम लाया गया। भेद से बने यौन सम्बन्ध के परिणामस्वरूप उसकी गोद में एक बालक भी था।

भेद की मृत्यु से वशिष्ठ ने चैन की सांस ली। वो तो भेद के बालक का भी वध कर देना चाहते थे। किन्तु सुदास इसके विरूद्ध था। उसने विश्पला से शंबर द्वारा उत्पन्न पुत्र एवं स्वंय द्वारा जुहिला से उत्पन्न पुत्र की भांति इस बालक का भी पालन-पोषण करने की आज्ञा दे दी।

यद्यपि वशिष्ठ को सुदास का ये कृत्य कतई नहीं भाया था, किन्तु वे सुदास को ऐसा करने से रोक भी नहीं पा रहे थे। वशिष्ठ ने अपना ये विरोध समय पर छोड़ दिया और वे हृदय से उस समय की प्रतीक्षा में थे जब आर्यों के रक्त मिश्रण के लिये सुदास को सबक सिखाया जा सके। वशिष्ठ ये जानते थे कि वे भले ही सुदास के पुरोहित है किन्तु सुदास पर विश्वामित्र का प्रभाव अधिक है। आर्य-अनार्यों के रक्त मिश्रण से विश्वामित्र का कोई विशेष विरोध नहीं था। अपितु वे तो गायत्री मंत्र के प्रभाव से अनार्यों को आर्यों में परिवर्तित कर देने के पक्षधर थे।

यद्यपि वशिष्ठ हृदय में सुदास के लिये अच्छे विचार नहीं रखते थे किन्तु प्रत्यक्षतः उन्होंने ये प्रकट नहीं किया क्योंकि सुदास से उन्हें दान स्वरूप गो एवं धन आदि की प्राप्ति होती रहती थी। किन्तु वशिष्ठ इतने दान अर्जन से सन्तुष्ट नहीं थे। भविष्य में वे शक्ति को सुदास का पुरोहित बनाना चाहते थे और इसलिए उन्होंने स्वयं को किसी अन्य का पुरोहित बनने की योजना बना ली।

वशिष्ठ ने कोशल जाने का निश्चय किया जहां दशरथ का अवध राज्य था और उनके चार पुत्र अब तरूण हो रहे थे।

शक्ति एवं मदयंती को सुदास के पास छोड़कर मुनि वशिष्ठ एक दिवस अरून्धती के साथ कोशल प्रस्थान कर गये। सुदास बिना भेदभाव के अपने जनों की सेवा में जुट गया। इन्द्रौत, सौदास, सोमक, शक्ति, संस्कृति एवं मदयंती साथ-साथ क्रीड़ा करके बड़े होने लगे।

***

सविता एवं चन्द्र की किरणों पर सवार होकर समय, दिवस रात्रि के माध्यम से आगे बढ़ता रहा। वृद्ध, काल कलवित हो गये। तरूण प्रौढ़ हो गये एवं बालक तरूण बन गये। सुदास के संरक्षण में पल बढ़ रहे इन्द्रौत, सौदास, सोमक

एवं शक्ति तरूणाई पा चुके थे एवं मदयंती व संस्कृति लावण्यमयी तरूणी बन चुकी थी।

मदयंती एक ब्राह्मण आर्य कन्या थी जिसके लावण्य की खुशबू न सिर्फ तृत्सुग्राम अपितु आर्यवर्त में भी फैल रही थी। न जाने कितने तरूण उसके सामीप्य एवं सानिध्य प्राप्त करने को लालयित थे। मदयंती तृत्सु कुल के पुरोहित वशिष्ठ के किसी सम्बन्धी की पुत्री थी इसलिए उसके पालन-पोषण में सुदास ने विशेष ध्यान रखा था।

मदयंती की ओर जुहिला का पुत्र सौदास आकर्षित था। वह उससे प्रेम करता था। मदयंती भी कई अवसरों पर सौदास के प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित कर चुकी थी।

सौदास एवं मदयंती का प्रेम सुदेवी की दृष्टि से छुपा न रह सका। वो इनके विवाह हेतु सुदास से बात करना चाहती थी। फिर उसके मन में विचार आया कि सौदास की माता जुहिला है अतः उसके विवाह हेतु उसकी अनुमति आवश्यक है।

जुहिला कभी भी तृत्सुग्राम नहीं आती थी अतः उससे भेंट के लिये सुदेवी ने असुरग्राम जाने का निश्चय किया किन्तु इसके लिये सुदास की सहमति की आवश्यकता थी।

सुदेवी आज अपनी कुछ व्यक्तिगत दासियों एवं रक्षकों के साथ असुरग्राम जा रही थी। सुदेवी के असुरग्राम जाने की सूचना बहती पवन की भांति तृत्सुग्राम एवं असुरग्राम में पहुँच चुकी थी। समस्त जनों के लिए ये एक विचित्र घटना थी। कोई भी आर्य या आर्या असुरग्राम जाने के बारे में सोचते तक नहीं थे और आज आर्यों की रानी एवम् देवों की दुहिता असुरग्राम जा रही थी। वह न केवल असुरग्राम जा रही थी अपितु वहां जाकर अन्न-जल भी ग्रहण करने वाली थी।

सुदेवी ने रात्रि में ही सुदास के नग्न रोमिल सीने पर अपने होंठों से प्रेम प्रदर्शित करके असुरग्राम जाने की सहमति प्राप्त कर ली थी। सुदास ने सुदेवी की नग्न रोम हीन पीठ पर अपनी हथेलियां रगड़ते हुए सहमति देते हुए कहा, ''किसी स्त्री को अपने पति की किसी उपपत्नी से मिलने जाना उसके लिए अत्यन्त सुखद स्थिति है। वो भी इसलिए कि वो उसके पुत्र का अपने पुत्र के समान विवाह करने की सहमति प्राप्त करने के लिए।

अपने घर के सामने आर्यवर्त की सर्वाधिक प्रतिष्ठित स्त्री एवं अपने प्रेमी की पत्नी को देखकर जुहिला ने अश्रुपूर्ण नेत्रों से उसका स्वागत किया। जब सुदेवी ने जुहिला को कंठ से लगाया तो उसके नेत्रों के अश्रु हर्ष से उसके गाल पर ढलक पड़े।

जुहिला की झोपड़ी में सुदेवी ने दो पहर बिताये। सौदास आज अपनी विमाता सुदेवी के साथ तृत्सुग्राम से असुरग्राम आया था। जुहिला ने सुदेवी के लिए पुरोडाश, गवाशिर, दध्याशिर इत्यादि व्यंजन बनाये। भोजन करते समय जब सुदेवी ने जुहिला से सौदास के मदयंती के साथ विवाह की अनुमति मांगी तो जुहिला ने सौदास का हाथ सुदेवी के हाथ में देकर कहा, ''ये आपका ही पुत्र है, आप जो चाहे निर्णय ले सकती है।''

सुदेवी ने हंसकर जुहिला से कहा, ''बहन, सौदास के विवाह की कई रीत तुम्हें स्वयं पूरी करनी होगी। तुम समय से तृत्सुग्राम पहुँच जाना।'' जुहिला सुदेवी की बात का कुछ उत्तर दे पाती उससे पूर्व ही सुदेवी पुनः बोल उठी, ''तुम मेरी बात को मना नहीं कर सकती। ये आर्यवर्त की महरानी की आज्ञा है।'' कहकर सुदेवी स्वयं पर हंस पड़ी और उसकी निष्क सी खनकती हंसी में जुहिला की हंसी भी सम्मिलित हो गई।

***

समस्त तृत्सुग्राम में आज उत्सव था। हर ओर प्रसन्नता थी। यह प्रसन्नता तब और बढ़ गई जब समस्त बैर भाव भूलकर सौदास एवं मदयंती को आशीष देने विश्वामित्र तृत्सुग्राम में पधारे।

सौदास एवं मदमंती के विवाह में विश्वामित्र के तृत्सुग्राम में पधारने से सम्पूर्ण तृत्सुग्राम प्रसन्न था सिवाय एक के। केवल वशिष्ठ पुत्र शक्ति के मुख पर घोर अप्रसन्नता थी। कारण भी स्पष्ट था - एक आर्य ब्राह्मण कन्या का विवाह एक ऐसे तरूण से जो सम्पन्न हो गया था एवं जिसकी माता दस्यु थी। दूसरा - विश्वामित्र तृत्सुग्राम आ धमके थे। शक्ति भले ही तृत्सुओं का अभी अधिकारिक पुरोहित नहीं था किन्तु उसे वशिष्ठ पुत्र होने के आधार पर पुरोहित वाली सारी सुख-सुविधायें उपलब्ध थी। विश्वामित्र के तृत्सुग्राम में आ जाने से शक्ति के मन में ये भय बैठ गया कि कहीं सुदास तृत्सुओं का पुरोहित पद विश्वामित्र को न दे दे।

यद्यपि सौदास एवं मदयंती के परिणय का विरोध शक्ति ने ये कहकर किया था कि पिता वशिष्ठ की अनुपस्थिति एवं अनुमति के बिना ये विवाह नहीं

होना चाहिये। तब सुदास ने उसे समझाया कि विश्वामित्र भी वशिष्ठ के समान ही महामुनि है अतः उनका आशीर्वाद भी मुनि वशिष्ठ के आशीर्वाद के ही समान है। और फिर अभी वर्ष भर पूर्व ही शक्ति तृत्सुग्राम में रहने वाले एक मुनि की कन्या अदृश्यंती पर आसक्त हो गया था। उस कन्या के प्रति शक्ति की आसक्ति इतनी प्रबल थी कि उसने सुदास के उस सुझाव को भी नहीं माना जब उसने कहा था कि - 'शक्ति मैं आपके पिता को बुलवाये देता हूँ उनके आशीर्वाद से विवाह कर लेना।' परन्तु शक्ति के हठ पर सुदास ने उसका विवाह अदृश्यंती से करा दिया।

अब जब सुदास ने शक्ति से कहा कि 'जब उसका विवाह बिना उसके पिता के आशीर्वाद से हो सकता है तो मदयंती का क्यों नहीं?' सुदास के तर्क के आगे शक्ति चुप हो गया।

मदयंती एवं सौदास को परिणय जीवन के लिए आशीष देकर विश्वामित्र, हरिश्चन्द्र के ग्राम की ओर निकल गये जहां हरिश्चन्द्र, वरूण देव के कोप से बचने के लिए नरमेघ यज्ञ करने जा रहे थे।

सुदास ने जब जाते हुए अपने मित्र विश्वामित्र को अश्रपूरित नेत्रों से देखा तो विश्वामित्र ने कहा, ''वो शीघ्र ही तृत्सुग्राम पधारेंगे।''

***

उधर विश्वामित्र हरिश्चन्द्र के ग्राम की ओर पधारे इधर तृत्सुग्राम में मदयंती-सौदास के समान एक और प्रेम-प्रसंग सामने आया।

इस प्रेम-प्रसंग का पता केवल सुदास को था। वह ये सब जानकर बेहद चिंतित हो उठा। ये प्रेम-प्रसंग और किसी का नहीं अपितु उसकी पुत्री संस्कृति का था।

सुदास इसलिए चिंतित नहीं था कि उसकी पुत्री प्रेम मार्ग पर थी अपितु वो चिंतित इसलिए था कि संस्कृति जिससे विवाह करना चाहती थी उसके कारण आर्यवर्त में प्रलय आ सकती थी।

संस्कृति, विश्पला के पुत्र इन्द्रौत से प्रेम करती थी। विश्पला देव कन्या थी फिर उसके पुत्र के साथ संस्कृति के विवाह से सुदास क्यों चिंतित था? सुदास चिंतित इसलिए था कि विश्पला ने शंबर युद्ध में शंबर की पराजय हेतु जो शंबर से प्रेम का नाटक किया था इन्द्रौत का जन्म उसके परिणामस्वरूप हुआ था। इन्द्रौत का पिता एक दस्यु एक कृष्णवर्णी था।

पुरोहित के नियमों के कारण आर्य माता एवं अनार्य पिता की संतान अनार्य माता एवं आर्य पिता की संतान से निकृष्ट एवं हीन मानी जाती थी।

मदयंती, सौदास के विवाह पर सुदास इतना चिंतित नहीं था क्योंकि सौदास की माता भले ही कृष्णवर्णी जुहिला हो किन्तु वो स्वयं उसका पिता था जो कि आर्य था। सुदास जानता था कि वशिष्ठ ये कभी स्वीकार नहीं करेंगे कि एक शुद्ध आर्य दुहिता एक अनार्य पुत्र से विवाह करे, भले ही उस अनार्य पुत्र की माता देव दुहिता ही क्यों न हो।

वशिष्ठ जैसे मुनि आर्यों की रक्त शुद्धता बनाये रखना चाहते थे किन्तु सुदास सबको समान दृष्टि से देखता था। उसकी दृष्टि में आर्य हो या अनार्य, सबको समान अधिकार प्राप्त होने चाहिये। अपने इसी विचार के कारण उसे संस्कृति एवं इन्द्रौत के प्रेम में कोई दोष दिखाई नहीं दिया। इसलिए सुदास ने संस्कृति एवं इन्द्रौत को प्रेम के पथ पर अग्रसर होने दिया।

कहते हैं कि प्रेम न तो छिपता है और न ही उसके चर्चे रोके जा सकते हैं। वशिष्ठ पुत्र शक्ति को जब संस्कृति एवं इन्द्रौत के प्रेम का पता चला तो वो जल-भुन उठा। यद्यपि शक्ति का विवाह अदृश्यंती से हो गया था किन्तु वो बाल्यावस्था से ही संस्कृति की ओर आकर्षित था। संस्कृति किसी और से प्रेम करती है ये जानकर शक्ति का उसके प्रति आकर्षण और बढ़ गया। और एक दिन एकांत में उसने सुदास से संस्कृति से विवाह की इच्छा जताई।

किन्तु शक्ति की पहले ही एक पत्नी थी इसलिए सुदास ने उससे कहा कि एक पत्नी की रहते दूसरा विवाह करना ठीक नहीं किन्तु जब शक्ति ने कहा कि सुदास ने भले ही एक विवाह सुदेवी से किया हो पर उसके प्रेम-प्रसंग तो कई आर्य एवं अनार्य कन्याओं से रहे हैं। साथ ही शक्ति ने ये भी तर्क रखा कि आपके पिता दिवोदास ने भी कई विवाह किये थे तो यदि वो इस विवाह करता है तो इसमें दोष क्या है?

शक्ति के तर्क से सुदास कुछ देर के लिए निरूत्तर सा हो गया किन्तु वह फिर संभलकर बोला, ''शक्ति विवाह का सबसे बड़ा आधार प्रेम है। विश्वास करो यदि संस्कृति तुमसे प्रेम करती तो मैं अवश्य तुम्हारा विवाह उससे कर देता।'' सुदास की बात सुनकर उस समय शक्ति मौन होकर वहां से चला गया किन्तु उसका हृदय संस्कृति को लेकर कुंठित होने लगा और वो साम, दाम, दण्ड, भेद किसी भी प्रकार संस्कृति को प्राप्त करने का मार्ग खोजने लगा।

इधर तृत्सुग्राम में शक्ति, संस्कृति की प्राप्ति के लिए कुचक्र रच रहा था उधर हरिश्चन्द्र के ग्राम में उसका पिता वशिष्ठ हरिश्चन्द्र के यज्ञ को निषेध कर रहा था।

***

''हरिशचन्द्र ये नरमेध पाप है, मैं तो क्या आर्यवर्त का कोई भी मुनि तुम्हारा ये यज्ञ सम्पन्न नहीं करवायेगा।'' मुनि वशिष्ठ के मुख पर रोष था।

''हे मुनिश्रेष्ठ यदि ये यज्ञ सम्पन्न न हुआ तो देवों का कोप हम पर टूट पड़ेगा। ये देव मेरे पुत्र रोहिताश्व के प्राण हर लेंगे। मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ आप मेरे परिवार पर आये संकट को टालने हेतु कृपया ये यज्ञ सम्पन्न करवाये।'' विनम्रतापूर्वक अपनी बात कहकर राजा हरिश्चन्द्र उनके सम्मुख करबद्ध एवं नतमुख खड़े थे।

राजा हरिश्चन्द्र के कंठ से शब्द टुकड़ों-टुकड़ों में निकल रहे थे। किन्तु वशिष्ठ पर हरिश्चन्द्र के कातर शब्द प्रभावहीन सिद्ध हुए और वे वैसे रोषपूर्ण तरीके से बोले, ''हे हरिश्चन्द्र! तुम्हारे परिवार पर आये संकट को टालने हेतु मैं आर्यों के विधि-विधान को नहीं बदल सकता। नरमेध यज्ञ आर्य विधान में निषेध है।'' तत्पश्चात मुनि वशिष्ठ ने वहां उपस्थित अन्य मुनियों को देखकर कहा, ''चलो सब चलें, यहां से हम ये पाप नहीं कर सकते।'' कहकर मुनि वशिष्ठ वहां से चल दिये। उनके पीछे अन्य मुनिजन भी चल दिये। हरिश्चन्द्र अश्रुपूरित नेत्रों से पुनः करबद्ध होकर वशिष्ठ के सम्मुख आये किन्तु वशिष्ठ उनके बगल से निकल गये। उन्हें यज्ञ यूप से जाता देखकर हरिश्चन्द्र आर्त स्वर में बोले, ''हे महामुनि, यदि आप यहां से चले गये तो हम पर आने वाला संकट कौन टालेगा?''

''मैं टालूंगा तुम्हारा ये संकट राजन्य!''

एक भारी-भरकम स्वर सुनकर उस ओर न केवल हरिश्चन्द्र अपितु वहां उपस्थित समस्त जनों के साथ वशिष्ठ ने भी देखा।

मुख पर अनंत शांति के साथ हाथ में काष्ठ का दण्ड लिये विश्वामित्र खड़े थे। विश्वामित्र को देखकर एवं उनकी वाणी सुनकर हरिश्चन्द्र के मुख पर प्रसन्नता आ गई किन्तु वशिष्ठ के मुख पर क्रोध बढ़ गया।

''विश्वामित्र ये यज्ञ आर्यों की रीति के विरूद्ध है।'' वशिष्ठ ने कहा।

''महामुनि वशिष्ठ किसी पर आये संकट को टालना कोई अनीति नही।'' विश्वामित्र शांति से बोले।

''किन्तु इस यज्ञ में एक जन की हवि दी जाने वाली है।'' वशिष्ठ ने हाथ का काष्ठ दंड भूमि पर पटक दिया।

''निश्चिंत रहे महामुनि मैं बिना किसी जन की हवि दिये हुए राजा हरिश्चन्द्र पर आया संकट टालूंगा।'' विश्वामित्र के मुख पर अब शांति के साथ विश्वास भी विराजमान था।

विश्वामित्र की बात सुनकर वशिष्ठ ने उन्हें रक्तिम नेत्रों से घूरा और फिर वहां से चले गये। उनके पीछे-पीछे उनके अनुगामी भी चले गये।

राजा हरिश्चन्द्र विश्वामित्र को प्रणाम करके कहा, ''अहोभाग्य जो आप यहां पधारे गाधिपुत्र। अब ये हरिश्चन्द्र अपने परिवार एवं ग्राम समेत आपकी शरण में है।''

''राजन्य वो तरूण कहां है जिसका जन्म नरमेध के लिये हुआ है?'' विश्वामित्र ने सीधा प्रश्न किया।

विश्वामित्र की बात सुनकर हरिश्चन्द्र ने कोने में खड़े एक तरूण को बुलाया। विश्वामित्र ने देखा तरूण की देह पर एक पीतवर्णी ऊनी द्रपि थी। उस पर दृष्टि डालते हुए विश्वामित्र ने पूछा, ''तुम्हारा नाम क्या है वत्स?''

''शुनः शेप'' तरूण के स्वर में भय था।

''अजीतगर्त के पुत्र हो?''

''जी''

''तुम्हारे पिता कहां है?''

''मैं यहां हूँ'' यूप के पीछे से निकल कर एक अधेड़ मुनि बोले।

''अपने पुत्र का नरमेध करवाते हुए लज्जा नहीं आती। क्या यही तुम्हारा आर्यत्व है जिसका दंभ वशिष्ठ एवं गौतम जैसे मुनि भरते हुए नहीं अघाते।''

''गौओं को पाना भी आर्यत्व है विश्वामित्र। और मैंने अपने पुत्र के बदले राजा हरिश्चन्द्र से पर्याप्त गौ प्राप्त की है।'' अजीतगर्त लापरवाही से बोला।

''ठीक है, तो फिर इस तरूण को यूप से बांध दो।'' विश्वामित्र ने अजीतगर्त को निर्देश दिया।

''नहीं'' अजीतगर्त हंसा।

''क्यों? गौ के बदले पुत्र का नरमेध करने का विचार बदल गया?''

''नहीं विश्वामित्र .. विचार नहीं बदला।''

''फिर?''

''यूप में बांधने के बदले गौ?'' अजीतगर्त यह कहकर निर्लज्जता से 'हो-हो' करके हंसा।

''पणि हम आर्यों को यूँ ही लुटेरा नहीं कहते।'' कहकर विश्वामित्र ने पहले अजीतगर्त एवं फिर हरिश्चन्द्र को देखा।

विश्वामित्र का आशय समझकर हरिश्चन्द्र बोले, ''अजीतगर्त गौ मिल जायेगी।''

''ठीक है, ठीक है!'' कहकर अजीतगर्त शुनशेप की ओर बढ़ा शुनशेप भयभीत होकर पीछे हटा। उसे भयभीत देखकर विश्वामित्र बोले, ''आज इस यज्ञ के बाद भी तुम जीवित रहोगे मेरे पुत्र बनकर।'' विश्वामित्र की बात सुनकर शुनशेप का भय जाता रहा। अजीतगर्त ने उसे यूप से बांध दिया। विश्वामित्र मन्त्र पढ़कर हवि देने लगे। साथ में उनके अनुगामी भी।

समय के साथ विश्वामित्र के सृजित मन्त्रों को सुनकर जन अचंभित होने लगे। विश्वामित्र के मन्त्रों के प्रभाव से वरूण देव वहां उपस्थित हुए।

''शांत विश्वामित्र शांत, मैं इस तरूण के प्राण छोड़ता हूँ किन्तु आप नये देव के सृजन का विचार त्याग दे।'' वरूण देव स्वयं शुनशेप को यूप से खोलने लगे।

''और हरिश्चन्द्र पुत्र रोहिताश्व के प्राण?'' विश्वामित्र ने वरूण पर दृष्टि डाली।

''वो भी।'' वरूण देव हंसे।

वरूण देव की बात सुनकर विश्वामित्र ने उनके समक्ष हाथ जोड़कर शीश झुकाया। तभी शुनशेप भागकर उनके पैरों पर गिरते हुए बोला, ''पिताजी!''

''पुत्र देवव्रत!'' विश्वामित्र उसे उठाकर कंठ से लगाते हुए बोले।

पिता-पुत्र को यूँ आलिंगनबद्ध देखकर उपस्थित जन समूह ने उद्घोष किया, ''गाधिपुत्र विश्वामित्र की जय!''

***

राजा हरिश्चन्द्र के यहां सफल नरमेध यज्ञ करवाने से विश्वामित्र पर लगा दशराजन युद्ध की पराजय का कलंक धुल गया। आर्य सुदास ने सुश्रवा को हरिश्चन्द्र ग्राम में भेजकर विश्वामित्र को आमन्त्रित किया।

विश्वामित्र एक अन्य मुनि के साथ तृत्सुग्राम पधारे। सुदास ने सुदेवी एवं अपने पुत्र-पुत्रियों के साथ पुर से बाहर निकलकर उनका स्वागत किया।

स्नान, ध्यान, अन्नग्रहण के उपरांत सुदास ने सभा में विश्वामित्र को उच्च स्थान देकर मंत्रणा शुरू की। इस मन्त्रणा में सुदास, विश्वामित्र, सौदास, इन्द्रौत, सुश्रवा, सुदेवी, संस्कृति, मदयंती के अतिरिक्त विश्वामित्र के साथ आये कृष्णवर्णी मुनि भी थे।

विश्वामित्र ने उन कृष्णवर्णी मुनि का परिचय करवाते हुए कहा कि यह मुनि शंडमार्क है और महान पणि राजन्य वृभु के पुरोहित रह चुके हैं। परिचय जान कर सुदास ने हाथ जोड़कर शंडमार्क को प्रणाम किया। शंडमार्क ने भी सुदास की प्रशंसा करते हुऐ कहा, ''राजन मैंने आपकी तरूण अवस्था में ही आपकी वीरता के दर्शन कर लिये थे जब आपने महान वृभु के विरूद्ध युद्ध में अपने रण कौशल का परिचय दिया था।''

विश्वामित्र ने पहले सुदास को सभी जनों चाहे वे आर्य हो या अनार्य उनसे समानता का व्यवहार करने का उपदेश दिया फिर पूछा, ''कहो सुदास! क्या कुछ समस्या है?.. तनिक व्यग्र दिखाई दे रहे हो?''

''विश्वरथ ..'' सुदास अभी भी विश्वामित्र को मित्रवत विश्वरथ ही कहता था। - ''तुम तो जानते ही हो कि अब हम प्रौढ़ हो रहे हैं इसलिए मैंने विचार किया कि आर्यवर्त के सप्त-सैंधव खण्ड का उत्तरदायित्व अब तरूणों को देना आरम्भ कर दिया जाये।

सुदास का विचार सुनकर विश्वामित्र बोले, ''प्रिय सुदास, ये तो अति उत्तम विचार है।'' मुनि ने तनिक रूक कर वहां उपस्थित तरूणों एवं तरूणियों पर एक दृष्टि डाल कर पुनः बोले, ''तो राजन आपने किस तरूण को कौन सा उत्तरदायित्व देने का विचार किया है?''

''हे मुनिश्रेष्ठ! मैंने सोचा है कि युवराज पद पर सौदास को सुशोभित किया जाये और मेरी कन्या संस्कृति का विवाह विश्पला एवं शंबर के पुत्र इन्द्रौत से करने के बाद इन्द्रौत को सेनापति का पद दिया जाये। और सोमक को तृत्सुग्राम की सुरक्षा का भार देने का विचार है।''

''स्वास्तु सुदास स्वास्तु!'' विश्वामित्र प्रसन्न होकर ''मेरी सहमति एवं अनुमति दोनों ही है, हे महान आर्य योद्धा सुदास।''

''मेरी एक और प्रार्थना है विश्वरथ।'' सुदास ने कहा।

''क्या सुदास?''

''यही कि आप पुनः तृत्सुपुर का पुरोहित पद स्वीकार करके इन तरूणों को मार्गदर्शन दे।''

विश्वामित्र अभी सुदास की बात का क्या उत्तर दे, विचार ही कर रहे थे कि शक्ति अपने आसन से उठकर क्रोधित मुद्रा में बोला, ''राजन सुदास! आपने अभी जितने भी प्रस्ताव रखे हैं उनमें न तो मेरी सहमति है और न ही अनुमति।''

''शांत शक्ति, शांत होकर अपने स्थान पर बैठ जाओ।'' सुदास ने कहा।

''आप मेरा अपमान इस विश्वामित्र के सामने कर रह रहे हैं सुदास, जो तुम पर दशराजन लेकर चढ़ आया था।'' शक्ति ने तर्जनी अंगुली से विश्वामित्र की ओर संकेत करके कहा।

''मैं कहता हूँ अपने स्थान पर बैठ जाओ शक्ति। यदि तुम मन्त्रणा कक्ष में उपस्थित हो तो प्रस्तुत प्रस्तावों पर तुम्हारी सहमति असहमति पूछी जायेगी। किन्तु स्मरण रहे मुझे तुमसे अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता नही।'' सुदास ने कठोर स्वर में शक्ति से कहा एवं फिर अपने स्वर को तनिक मधुर करते हुए विश्वामित्र से पूछा, ''कहो विश्वरथ! तुम्हें तृत्सुकुल का पुरोहित पद स्वीकार है?''

''सुदास मुझे लगता है शक्ति को किन प्रस्तावों पर सहमति एवं असहमति है पहले ये जान लेना चाहिये।'' सुदास से कहकर विश्वामित्र शक्ति के समीप आकर बोले, ''कहो शक्ति तुम्हें राजन सुदास के किन प्रस्तावों से सहमति है और किन प्रस्तावों से असहमति?''

''मैं सौदास के युवराज बनाये जाने का विरोध करता हूँ।'' शक्ति ने विश्वरथ की ओर उपेक्षित दृष्टि डालकर कहा।

''कारण जान सकता हूँ'' विश्वरथ शांत चित्त थे।

''क्योंकि उसकी माता असुर है।'' शक्ति ने एक दृष्टि सौदास पर डालकर आगे कहा, ''इस कारण वो किसी भी आर्य कुल का युवराज बनने के अयोग्य है।'' शक्ति की बात सुनकर सौदास की ओर नेत्रों की भाषा से शांत रहने का इशारा करके विश्वामित्र ने शक्ति से पूछा, ''अन्य प्रस्तावों पर क्या आपने विचार किया है शक्ति?''

''मैं इन्द्रौत एवं संस्कृति के विवाह का भी विरोध करता हूँ. एक असुर पिता का पुत्र एक आर्य कन्या से यौन सम्बन्ध बनाये ये समस्त आर्यों के लिए लज्जा का विषय होगा। और मैं राजा सुदास द्वारा आपको पुरोहित पद दिये जाने का भी विरोध करता हूँ।'' कहकर शक्ति कुछ क्षण मौन रहकर पुनः बोला, ''मैं

जानता हूँ कि विश्वरथ अब तुम जानना चाहोगे कि पुरोहित पद पर तुम्हारे स्थान पर कौन उपयुक्त है? तो सुनो, मेरे पिता महामुनि वशिष्ठ अभी भी तृत्सुकुल के घोषित पुरोहित हैं तो उनके पुत्र होने के नाते पुरोहित पद पर ये मेरा अधिकार है। एक बात और विश्वरथ, मैं संस्कृति के प्रेमपाश में हूं इसलिए मैं उससे विवाह करने का अधिकारी हूँ।''

''शक्ति..!'' सुदास के कंठ से निकला तभी विश्वामित्र ने उन्हें देखकर कहा, ''शांत सुदास शांत रहो।'' और फिर शक्ति से बोले, ''शक्ति सौदास की योग्यता पर जो तुम प्रश्न खड़े करते तो वे विचारणीय होते किन्तु तुमने उसकी माता के कुल के आधार पर उसे युवराज पद के अयोग्य माना। ये सौदास की नहीं तुम्हारी अयोग्यता दर्शाता है। पद जन्म के आधार पर नहीं अपितु योग्यता के आधार पर निश्चित होना चाहिये।'' बोलते-बोलते वह एक क्षण के लिए रूके फिर तनिक एक गहरी श्वांस लेकर विश्वामित्र पुनः बोले, ''शक्ति तुम संस्कृति के प्रेमपाश में हो मात्र इतने से ही तुम उससे विवाह के अधिकारी नहीं हो जाते। संस्कृति से विवाह के लिए आवश्यक है कि वो भी तुम्हारे प्रेम में हो। जबकि मैं जानता हूँ संस्कृति इन्द्रौत से प्रेम करती है। इन्द्रौत को भी पितृ पक्ष से कुलहीन बताकर उसे संस्कृति से विवाह के आयोग्य नहीं माना जा सकता क्योंकि बात-बात पर कुलों का विभेद करने से आर्यवर्त में न तो शांति स्थापित होगी और न ही लोगों का जीवन सुखमय होगा। अतः आर्य-अनार्य के बीच विवाह सम्बन्ध इस दिशा में सार्थक पहल होगी। और शक्ति रही बात मेरे पुरोहित बनने की तो मैं इसे अस्वीकार करता हूँ किन्तु चाहता हूँ इस पद पर कोई योग्य व्यक्ति बैठे और मैं उस पद के लिए शंडमार्क को उचित पाता हूँ।''

विश्वामित्र की बात सुनकर अपने आपे से बाहर होते हुए शक्ति बोला, ''रे धृष्ट विश्वरथ! तू आर्य पिता की सन्तान है या अनार्य पिता की। तेरी माँ ने किस अनार्य के साथ शय्या सहचरी की, जो तुझ सा पुत्र पैदा हुआ। विश्वरथ तू...'' शक्ति अपनी बात पूर्ण भी नहीं कर पाया कि सुदास अपने आसन से उठकर कठोर स्वर में बोला, ''बस मौन हो जाओ शक्ति, अन्यथा दण्ड भोगोगे।''

''सुदास! इस वशिष्ठ पुत्र को तू तो क्या, इन्द्र भी मौन नहीं कर सकते। जिस पुरोहित पद पर महामुनि वशिष्ठ से आर्य विराजते रहे हो वहां उस पद पर ये विश्वामित्र एक अनार्य शंडमार्क को बिठाना चाहता है। मैं इसे छोडूंगा नहीं।''

यह कहकर शक्ति विश्वामित्र की ओर लपका, किन्तु सुदास फुर्ती से उनके मध्य आकर बोला, ''शक्ति बहुत हुआ। मैं मुनि विश्वामित्र का अब और

अपमान बर्दाश्त नहीं करूंगा। तुम वशिष्ठ के पुत्र हो इसलिए मैं तुम्हें दण्डित नहीं करना चाहता। अतः तुम्हारे लिए यही अच्छा है कि तुम अभी इसी समय इस सभा से चले जाओ।''

आग्नेय नेत्रों से शक्ति ने पहले सुदास को देखा, फिर विश्वामित्र को देखकर वहां से प्रलयकारी चाल से निकल गया।

***

''विश्वरथ, मुझे लगता है कि एक कृष्णवर्णी को पीतकेशी कभी भी हृदय से अपना पुरोहित स्वीकार नहीं करेंगे।'' सुदास ने चिंतित स्वर में विश्वरथ से कहा। जो इस समय उसी के साथ उसके हर्म्य में बैठकर मंत्रणा कर रहे थे।

सुदास कि बात सुनकर विश्वामित्र बोले, ''सुदास गुरू अगस्त्य दक्षिण इसलिए गये ताकि वहां आर्यों एवं द्रविणों की संस्कृति को मिलाकर एक महान संस्कृति बना सके। मैं भी उत्तर से दक्षिण हर ओर आर्य-अनार्य संस्कृति को समान रखने का स्वप्न देखता हूँ। दक्षिण में एक ऐसे आर्य नायक की आवश्यकता है जो वहां अनार्यों के देव शिश्नदेव (लिंग) की स्थापना करके दोनों संस्कृति के मिश्रण से एक साझा संस्कृति का निर्माण करे। तुम भी प्रयास करो कि यहां एक साझा संस्कृति का विकास हो। इसलिए पुरोहित आर्य है या अनार्य इस विषय से बाहर निकलना होगा।''

''तुम्हारा कहना सत्य है विश्वरथ।'' सुदास अपने आसन से उठकर कक्ष में विचरते हुए बोला, ''दक्षिण में जो महान कार्य करना है उसके लिए किसको नायक के रूप में चुनना चाहते हो तुम?''

''कोशल नरेश दशरथ के पुत्र राम को।'' विश्वामित्र भी उठकर विचरते हुए बोले, ''किन्तु इससे पहले मुझे उनसे कुछ अन्य कार्य करवाने हैं।''

''अन्य कार्य..?''

''हाँ सुदास तुम भिज्ञ होगे। तुम्हारे पिता कि बहन अहिल्या, देव इन्द्र से प्रेम करती थी।''

''हाँ विश्वरथ, मुझे कभी किसी ने बताया था।''

''और उस प्रेम सम्बन्ध की कीमत अहिल्या अभी तक भुगत रही है। अहिल्या के पति गौतम को जब अहिल्या एवं इन्द्र के प्रेम सम्बन्धों का पता चला, तब क्रुद्ध होकर गौतम ने अहिल्या को एक पाषाण निर्मित कुटी में बन्दी बना दिया जहां वो पाषाणों सा जीवन व्यतीत करने को बाध्य है।''

''क.क्याऽ मुनि गौतम ने..''

''ब.च.चा.ओ..बचाओ!''

सुदास अभी अहिल्या के बारे में सुनकर अपनी बात शब्दों में कह भी नहीं पाया था कि उसके कानों में किसी नारी के कंठ का मार्मिक स्वर सुनाई पड़ा। स्वर की दिशा में सुदास भागा तो उसके पीछे-पीछे विश्वामित्र भी भागे। परन्तु सामने का दृश्य देखकर विश्वामित्र ठिठक गये एवं सुदास क्रोध से कांपने लगा।

शक्ति, संस्कृति से बलात्कार का प्रयास कर रहा था। उसने संस्कृति की देह से ऊनी द्रापि खींचकर एक ओर फेंक दी। संस्कृति अपने नग्न वक्षों को अपनी कोहनी मोड़कर छुपाते हुए शक्ति से बचने का प्रयास कर रही थी।

''दुष्ट शक्तिऽ..'' सुदास कंठ फाड़कर चीखा। शक्ति ने सहज होकर सुदास की ओर देखा। क्रोध से सुदास के नासिका फूल पिचक रही थी।

''सैनिकोंऽ..'' सुदास चिल्लाया। तुरन्त पांच छः सैनिक वहां आ गये। ''इस दुष्ट की अभी अग्नि में हवि दे दो।'' सुदास ने आज्ञा दी।

आदेश मिलते ही सैनिकों ने शक्ति को पकड़ लिया और बलपूर्वक उसे खींचते हुए ले जाने लगे। शक्ति चिल्लाया, ''मुझे छोड़ दो, क्षमा करो सुदास। विश्वामित्र तुम तो विश्वामित्र हो मेरी प्राण की रक्षा करो।''

शक्ति के आर्तनाद पर भी विश्वामित्र मौन रहे और सैनिक शक्ति को वहां से घसीट कर ले गये।

***

सुदास कदापि नहीं चाहता था कि शक्ति को अग्नि में स्वाहा कर दिया जाये। कुछ भी हो वो मुनि वशिष्ठ का पुत्र था, जिन्होंने सुदास का ऐन्द्राभिषेक किया था एवं दशराजन युद्ध में विजय के लिए परामर्श दिया था।

किन्तु शक्ति की धृष्टता अक्षम्य थी, उसने न सिर्फ विश्वामित्र का अपमान किया था अपितु उसने संस्कृति से बलात्कार का भी प्रयास किया था। अतः उसने शक्ति को मृत्युदण्ड दिया।

सुदास जानता था कि विश्वामित्र निःस्वार्थी है जबकि वशिष्ठ ने स्वार्थ वश सुदास की सहायता की ताकि वशिष्ठ को पुरोहताई के उचित लाभ मिलते रहे।

उस रात्रि जब शक्ति ने संस्कृति के साथ बलात्कार का प्रयास किया तो संस्कृति अत्यधिक व्यथित थी और उसकी व्यथा तब और बढ़ गई जब इन्द्रौत ने उससे विवाह करने से इन्कार कर दिया। वो एक ऐसी कन्या से विवाह नहीं करना

चाहता था, जिसकी देह का स्पर्श किसी अन्य पुरूष ने किया हो। सुदास चाह कर भी इन्द्रौत को समझा न पाया। उस समय विश्वामित्र ने संस्कृति से विवाह का निर्णय लेकर सुदास एवं संस्कृति के शोक को समाप्त किया।

संस्कृति से विवाह करके विश्वरथ सप्तनीक कोशल की ओर निकल गये। जाते समय उन्होंने सुदास से कहा संभवतः उनकी इस जन्म में ये अन्तिम भेंट है।

शक्ति की धृष्टता एवं इन्द्रौत के व्यवहार ने सुदास के हृदय पर आघात किया। ये हृदयाघात उस समय और बढ़ गया, जब मुनि वशिष्ठ ने शक्ति को निर्दोष मानते हुए उसके वध के लिए सुदास को दोषी मानकर क्रोधित होकर तृत्सुग्राम पुर से चले गये।

मुनि वशिष्ठ कुछ समय व्यतीत करने उपरांत तृत्सुपुर में पुनः आये किन्तु यहां शक्ति के वध हो जाने से अत्यन्त दुखी एवं क्रोधित हुए। सुदास ने उन्हें सत्य समझाने की चेष्टा की किन्तु मुनि के क्रोध के आगे वह असफल रहा।

क्रोधित मुनि वशिष्ठ कोशल की ओर चले गये, मन में ये विचार लिए कि वहां से दशरथ एवं उनके पुत्रों के नेतृत्व में सेना लाकर सुदास का विनाश कर देंगे।

पुत्र वध से व्यथित मुनि वशिष्ठ जब कोशल पहुँचे तो विश्वामित्र वहां पहले से उपस्थित थे। विश्वामित्र को देखते ही वशिष्ठ के हृदय में अपार क्रोध जागा। किन्तु उन्होंने उसे मुख पर प्रकट नहीं होने दिया। उनका पहला लक्ष्य सुदास को दण्डित करने का था। वे किसी भी मूल्य पर सुदास के स्तर को निम्न बना देना चाहते थे।

वशिष्ठ ने दशरथ से सुदास के विरूद्ध युद्ध करने की मांग की। वशिष्ठ तृत्सुओं के पुरोहित रहते हुए दशरथ के भी पुरोहित रहे थे। दशरथ उनका सम्मान भी करते थे। किन्तु दशरथ इस समय वशिष्ठ की मांग पूरी कर पाने में स्वयं को असमर्थ पा रहे थे।

सुदास का पिता दिवोदास उनके मित्र रहे थे। दिवोदास ने शंबर युद्ध में दशरथ के प्राण की रक्षा की थी। इस कारण दशरथ, सुदास के विरूद्ध युद्ध करने के लिए हृदय से सज्ज नहीं थे।

दूसरी ओर लंका का शक्तिशाली राजा रावण धीरे-धीरे कोशल की सीमाओं के समीप अपनी सैनिक चौकियां बना रहा था। उसने पंचवटी एवं

दण्डकारण्य में अपने सैनिक उपनिवेश स्थापित कर लिए थे और वो द्रुतगति से अपनी रक्ष संस्कृति के विस्तार के लिए कटिबद्ध था। उसके इन सैनिक उपनिवेशों की स्थापना से कोशल एवं मिथिला जैसे राज्यों पर संकट आ गया था।

जिस समय कोशल पहुँचकर वशिष्ठ ने दशरथ के सामने सुदास के विरूद्ध युद्ध का प्रस्ताव रखा। ठीक उसी समय विश्वामित्र ने दशरथ को रावण की महत्वकांक्षाओं से अवगत कराया।

विश्वामित्र ने दशरथ के सामने उनके पुत्र राम एवं मिथिला के राजा जनक की पुत्री सीता के विवाह का प्रस्ताव भी रखा। इस विवाह सम्बन्ध से कोशल की सैन्य शक्ति में वृद्धि होनी निश्चित थी जिसे रावण के विरूद्ध प्रयोग करने में आसानी होती।

भविष्य में विश्वामित्र की योजना वानर आदि द्रविण जातियों के गठबंधन से रावण के अभियान को रोकना था। इन वानर कबीलों में इस समय बालि-सुग्रीव नाम के दो वीर योद्धा रहते थे। ये दोनों स्वर्ग की एक अप्सरा एवं इन्द्र के बीच हुए यौन सम्बन्धों से जन्मे थे। जिन्हें इन्द्र के कहने पर अहिल्या ने पाला था।

अहिल्या अपने इन्द्र प्रेम के लिए दण्ड भोग रही थी। उसे उसके पति ने उसे पाषाण कुटी में बन्दी बनाकर रखा था। विश्वामित्र दशरथ पुत्र राम के द्वारा न केवल अहिल्या का उद्धार करवाना चाहते थे अपितु वे राम एवं अन्य वनवासी जातियों के गठजोड़ से रावण की बढ़ती शक्ति को रोकना चाहते थे।

दशरथ ने दोनों मुनियों के प्रस्तावों पर गहन विचार किया और पहले रावण की शक्ति को रोकने का निश्चय किया। दशरथ वैसे भी अपने मित्र दिवोदास के पुत्र सुदास के विरूद्ध युद्ध के लिए हृदय से सज्ज नहीं थे।

निराश वशिष्ठ कोशल से निकल अन्य राज्यों में सुदास के विरूद्ध सहायता मांगने की योजना बनाने लगे। उन्होंने तृत्सुपुर से शक्ति की पत्नी अदृश्यंती को भी आपने पास बुलवा लिया था, जो शक्ति के पुत्र पराशर को जन्म दे चुकी थी। शक्ति के वध के समय पराशर माँ के गर्भ में था।

***

परूष्णी के तट पर सुदास के हाथों पराजित होकर संवरण अपने ग्राम लौट गया किन्तु वशिष्ठ के उकसाने पर सुदास ने भेद के वध के लिए संवरण के ग्राम पर आक्रमण किया।

इस युद्ध में कृष्णवर्णी भेद मारा गया और संवरण भग्न हृदय लिए हिमालय की ओर पलायन कर गया। यद्यपि सुदास ने भेद के वध के पश्चात संवरण के ग्राम से अपना अधिकार त्याग दिया था किन्तु संवरण भय, लज्जा एवं शोक के कारण अपने ग्राम नहीं लौटा। वह हिमालय में एकांत में निवास करता रहा।

जहां पर्णकुटी बनाकर संवरण रह रहा था वहां एक दिन सूर्य देव की पुत्री ताप्ती विचरते हुए आयी। ताप्ती पर दृष्टि पड़ते ही संवरण के सुप्त हृदय में आशा की एक किरण सी चमकी और उसने ताप्ती से प्रणय निवेदन किया।

ताप्ती ने संवरण के प्रणय निवेदन को हंसकर ये कहते हुए मना कर दिया कि वह प्रणय निवेदन परिणय सूत्र में बंधने के पश्चात ही स्वीकार कर सकती है।

ये कहकर ताप्ती ने नेत्र बन्द कर लिये। इस समय रात्रि यौवन में थी। शीतल मंद समीर बह रहा थी। चन्द किरणें पर्वत प्रदेश में रजतकण बिखेर रही थी। वृक्षों से पुष्प पंखुडियां गिर कर भूमि को सुवासित कर रही थी। ताप्ती के लाल ओंठ सिहर रहे थे। उन्नत वक्ष उठ और गिर रहे थे। ऐसी लावण्यमयी कन्या को देखकर संवरण हृदय के आवेश में आकर उसे अपनी भुजाओं में भरते हुए कहा, ''देवी मैं तुमसे परिणय निवेदन करता हूँ''

''परन्तु मुझसे परिणय के लिए आपको मेरे पिता सूर्य से आज्ञा प्राप्त करनी होगी।'' ताप्ती लजाते अधरों से संवरण को भुजाओं में कसमसाती हुई बोली।

''देवी, पिता से आज्ञा परिणय के लिए मांगी जाती है प्रणय के लिए नहीं।'' कहकर संवरण ने ताप्ती की पीठ जोर सी भींची।

ताप्ती एक देव कन्या थी। अब तक किसी पुरूष स्पर्श से वंचित थी। वो अपने हृदय में पुरूष की कामना रखती थी। काम के वशीभूत होकर ही वो इस शीतल रात में अपनी कामाग्नि शांत करने हेतु विचार रही थी।

अब वो एक पुरूष की भुजाओं में थी। पुरूष स्पर्श ने उसकी कामाग्नि को और प्रज्वलित कर दिया। यह भूलकर कि अभी वो एक कुंवारी है एवं उसका परिणय नहीं हुआ है, वो प्रणय की मूक सहमति देते हुए संवरण की भुजाओं में बिखर गई।

***

ताप्ती, संवरण का हाथ पकड़कर पिता सूर्य देव के समीप लाकर बोली, ''पिताजी मैं इनसे प्रेम करती हूँ और परिणय करना चाहती हूँ''

सूर्य देव ने पहले इस विवाह से मना किया क्योंकि एक देव कन्या एक मृत्युलोक के पुरूष से विवाह करे ये उन्हें उचित नहीं लगा। किन्तु जब उन्हें ज्ञात हुआ कि उनकी कन्या ताप्ती ने संवरण के द्वारा गर्भधारण कर लिया है तो उन्होंने विवाह की सहमति दे दी।

विवाह के उपरांत सूर्यदेव नवविवाहित जोड़े को आशीष देते बोले, ''तुम्हारा जीवन सुखमय हो। तुम्हारे घर एवं ग्राम में खुशियां लौटे। जाओ संवरण अब तुम सप्तनीक अपने ग्राम लौटकर वहां अपने जनों के प्रति उत्तरदायित्व का निर्वाह करो। उचित समय पर तुम दोनों को एक पुत्र होगा जो अत्याधिक यश अर्जन करेगा।''

संवरण एवं ताप्ती ने सूर्यदेव को प्रणाम किया और फिर अपने ग्राम की ओर लौट चले। संवरण की वापसी से पुरूजनों ने खुशियां मनाई एवं उसी दिन इन्द्र एवं वरूण देव की कृपा से ग्राम में वर्षा हुई। बीते कई वर्षो से ग्राम में अकाल पड़ा हुआ था।

समय आने पर ताप्ती ने एक पुत्र को जन्म दिया। समस्त ग्राम में उत्साह मनाया गया। इस उत्सव में स्वयं सूर्य देव पधारे और उन्होंने ताप्ती के पुत्र को गोद में लेकर उसे 'कुरू' नाम से पुकारा।

***

इधर सुदास अपने जीवन में आये दुखद अवसरों को सोच-सोच कर अवसाद में था, उधर वशिष्ठ पुत्र वध से शोकाकुल एवं क्रोधित होकर नव निर्मित समस्त आर्यवर्त में सुदास को दण्डित करने हेतु सहायता की याचना करते विचरण कर रहे थे।

हर ओर से निराश हो चुके वशिष्ठ को संवरण की याद आई। प्राप्त सूचनाओं के आधार पर संवरण अपने पुर हस्तिनापुर में अबाध शासन कर रहा था। उस पर अब दशराजन युद्ध पराजय का कोई दुष्प्रभाव दृष्टिगत नहीं होता था। उसका तरूण पुत्र कुरू उसके राज्य संचालन में उसका परम सहायक था।

दशराजन युद्ध के पश्चात संवरण की दुर्दशा के लिए जितना सुदास उत्तरदायी था उतने ही वशिष्ठ भी। यद्यपि वशिष्ठ को शंका थी कि संवरण उनकी

सहायता नहीं करेगा किन्तु हर ओर से निराश वशिष्ठ के पास अन्य कोई मार्ग भी तो शेष नही था।

***

श्वेत द्रापि कंधे पर डाले महामुनि वशिष्ठ हस्तिनापुर पहुँचे। उनके साथ उनके पुत्र शक्ति का पुत्र तरूण पराशर भी था। दोनों ने अपने केशों पर कापर्दी बांध रखी थी।

जब प्रहरी ने सभा में आकर संवरण से कहा कि महामुनि वशिष्ठ अपने पौत्र पराशर के साथ पुर के द्वार पर है, एवं भेंट करना चाहते है तो संवरण ने उन्हें सम्मान सहित बुलवा भेजा।

वशिष्ठ को ये आशा तनिक कम थी कि संवरण उन्हें सम्मान देगा। किन्तु संभवतः संवरण के पास भी वशिष्ठ एवं सुदास के मध्य हुई कटुता की सूचना थी और संवरण भी कहीं न कहीं सुदास से प्रतिशोध लेने की इच्छा रखता था। अतः उसने महामुनि वशिष्ठ एवं उनके पौत्र पराशर का अपने पुत्र कुरू के साथ उचित स्वागत सत्कार किया।

उनके लिए धाना, करंभ, अयूप एवं पुरोडाश आदि की व्यवस्था की। जब महामुनि वशिष्ठ एवं पराशर विविध प्रकार के मांस एवं जौ का भोजन इत्यादि से मार्ग की थकान दूर करके स्वस्थ हुए तो संवरण अपने पुत्र कुरू के साथ उनके कक्ष में भेंट करने हेतु पहुँचा।

महामुनि वशिष्ठ मौन आसन पर बैठे थे एवं तरूण पराशर व्यग्रता से विचर रहा था। कक्ष में प्रवेश करके संवरण हाथ जोड़कर बोला, ''हे महामुनि! अतिथि सत्कार में कोई कमी तो नहीं रही।''

संवरण एवं कुरू को कक्ष में देखकर पराशर अपने स्थान पर मौन होकर खड़ा हो गया एवं वशिष्ठ नेत्र खोल कर आसन से उठते हुए बोले, ''नहीं-नहीं राजन, आपने तो अतिथिग्व का स्मरण करा दिया अपने अतिथ्य सत्कार से।''

''अतिथिग्व .. अतिथिग्व दिवोदास ..'' कहकर संवरण मौन हो गया।

''क्षमा करे राजन मैंने अकारण ही तुम्हारे घाव को कुरेद दिया।'' वशिष्ठ संवरण के समीप आकर बोले, ''और जबकि वो घाव मेरे कारण ही आपको मिला था। पर सत्य जानो राजन जिस उद्देश्य हेतु मैंने दशराजन युद्ध में सुदास की सहायता की थी वो उददेश्य अपूर्ण रह गया। न केवल अपूर्ण रह गया अपितु धारा के विपरीत दिशा में बह चली है।''

''धारा..विपरीत दिशा.? मैं कुछ समझा नहीं!'' तरूण कुरू वशिष्ठ की बात सुनकर वार्तालाप के बीच में भाग लेते हुए बोला।

''हाँ पुत्र, विपरीत दिशा में ही तो धारा बह रही है। और इस विपरीत दिशा में बहती धारा ने आर्यों के अस्तित्व पर संकट खड़ा कर दिया है।'' वशिष्ठ ने चिंतामग्न होकर कहा।

''आर्यों पर संकट! कैसा संकट महामुनि?'' कुरू ने प्रति प्रश्न किया।

''राजा सुदास विश्वामित्र के परामर्श से आर्य एवं अनार्यों में रक्त सम्बन्ध स्थापित कर रहा है। आर्य कन्यायें बलात अनार्यों से ब्याही जा रही है। अनार्य रक्त से जन्मे जन स्वयं को आर्य ही कहेंगे। यूँ आर्य रक्त से जन्मी संतान स्वयं को आर्य मानकर अनार्यों को दास बनाने का विरोध करेंगी। इससे हमें गृह एवं कृषि में कार्य के लिए दासों की कमी पड़ जायेगी। कृषि न होने से हम आर्यों के अस्तित्व पर संकट खड़ा हो जायेगा।'' यह कहकर महामुनि वशिष्ठ ने बारी-बारी से संवरण एवं कुरू की ओर देखा।

''किन्तु महामुनि वशिष्ठ'' कुरू पुनः प्रश्न करते हुए बोला, ''अनार्य किरात पराजय के बाद घनघोर वनों में जा चुके हैं इसलिए उनको दास बनाना कठिन है एवं अनार्य पणि विश्वामित्र की प्रेरणा से दक्षिण की ओर पलायन कर रहे हैं, जहां महामुनि अगस्त्य आर्य द्रविड़ संस्कृति के सम्मिश्रण से एक नई संस्कृति का निर्माण कर रहे हैं। हमारे लिए दास पाने की समस्या तो है ही। इससे सुदास के आर्य-अनार्य रक्त सम्मिश्रण से और भी समस्या उत्पन्न हो जायेगी। फिर हम आर्यों का भविष्य क्या होगा महामुनि?''

''तुम्हें आर्यों के भविष्य के बारे चितिंत देखकर अच्छा लगा वत्स कुरू'' मुनि वशिष्ठ ने कुरू के कंधे पर हाथ रखकर उसे बधाई दी। फिर कुछ देर मौन रहकर कक्ष में विचरण करते हुए बोले, ''इसके लिए हमें एक व्यवस्था का निर्माण करना होगा, जिससे जब तक ये सृष्टि रहे हम आर्यों के लिए दासों की कोई कमी न हो।''

''ऐसी कौन सी व्यवस्था होगी महामुनि?'' संवरण ने जिज्ञासा दिखाई।

''वर्ण व्यवस्था'' वशिष्ठ के स्थान पर पराशर उत्तर देते हुए प्रथम बार इस वार्ता में सम्मिलित हुआ।

''कैसी वर्ण व्यवस्था?'' कुरू ने और उत्सुकता दिखाई।

''जनों को चार वर्णों में विभक्त कर देने की व्यवस्था।'' पराशर वर्ण व्यवस्था की व्याख्या करते हुए बोला, ''सबसे ऊपर हम ब्राह्मण होंगे जो पूर्व में

भी थे। हम पूजा-पाठ, यज्ञ, हवन आदि कार्य करेंगे। दूसरा वर्ण तुम क्षत्रियों का होगा जो हमारे मार्गदर्शन में राज्य भोगोगे। तीसरा वर्ण वैश्य का होगा जो कृषि एवं वाणिज्य के कार्य करेंगे। और चौथा वर्ण शूद्र होगा। जिसे सम्पत्ति रखने का कोई अधिकार नहीं होगा और वो सदैव जीवन-पर्यन्त तीनों वर्णों की सेवा करेंगे।''

''तीन वर्ण तो ठीक है, ये अभी हम जनों में आ जायेंगे, किन्तु ये चौथा शूद्र वर्ण के जन कहां से आयेंगे, जो हमारे दास बनकर हमारी सेवा करेंगे। जबकि मैं पहले ही कह चुका हूँ कि अनार्य, किरात एवं पणि को दास बनाना कठिन होता जा रहा है।'' कुरू ने पराशर और वशिष्ठ की ओर देखते हुए जिज्ञासा दिखाई।

''ये शूद्र वर्ण हम आर्य जनों में से ही आयेगा।'' वशिष्ठ की बात सुनकर पहले संवरण एवं फिर कुरू ने आश्चर्य से एक दूसरे की ओर देखा और फिर दोनों ने एक साथ मुनि वशिष्ठ को।

अपने आश्चर्य पर नियंत्रण न रख पाते हुए अपने खुले मुख से संवरण ने पूछा, ''महामुनि वशिष्ठ क्या कहना चाहते है आप?''

''यही संवरण, यही कहना चाहता हूँ मैं!'' वशिष्ठ क्रोधित होकर बोले, ''जिसने हम आर्यों के रक्त को दूषित करने का प्रयास किया, जिसने मेरे पुत्र शक्ति का वध किया, मैं उसे और उसके वंशजों को शूद्र बनाकर दण्डित करूंगा। मेरा प्रतिशोध इतना भयंकर होगा कि ये प्रक्रिया युगों-युगों तक चलती रहेगी और सृष्टि के अन्त तक वे शूद्र वर्ण में ही रहकर हमारे दास बने रहेंगे। उन्हें अपनी दासता से कभी मुक्ति नहीं मिलेगी।''

''आपके कहने का अर्थ है महामुनि कि आप आर्य सुदास को शूद्र पद पर लाना चाहते हैं।'' कुरू ने वशिष्ठ से पूछा।

''तुमने सही आकलन किया कुरू! न सिर्फ सुदास अपितु उसके समस्त जनों एवं उसकी आने वाली संतति को भी। ये सब शूद्र बनकर हम ब्राह्मण एवं क्षत्रियों की सेवा करेंगे।''

''किन्तु सुदास एक योद्धा है, उसे पद दलित करना इतना सरल भी नहीं।'' संवरण संभवतः अब तक परूष्णी के तट पर सुदास के दिखाये गये शौर्य को भूला नहीं था।

''सुदास योद्धा था, अब नहीं।'' वशिष्ठ बोले, ''वो अब आयु के उतार पर है। थका हुआ है। अभी-अभी सूचना प्राप्त हुई है कि रानी सुदेवी की रोग से मृत्यु हो गई। सुदेवी के बिना सुदास और अस्वस्थ हो गया है। उसके अनार्य पुत्र सौदास एवं आर्य पुत्र सोमक सुदास एवं दिवोदास जैसे महान योद्धा नहीं है।

सौदास की पत्नी मदयंती जो मेरे एक सम्बन्धी की पुत्री है उसे मैं अपने वश में कर सकता हूँ। विश्पला एवं शंबर के पुत्र इन्द्रौत ने सुदास की पुत्री संस्कृति से विवाह को मना करने से सुदास एवं इन्द्रौत के मध्य वैमनस्य उत्पन्न हो गया है। विश्वामित्र, दशरथ एवं राम में व्यस्त होने के कारण सुदास की सहायता नहीं कर सकते और सबसे बड़ी बात कि सुदास के सबसे बड़े सहायक इन्द्र इस समय रावण पुत्र मेघनाद से पराजित होकर स्वयं निःसहाय भटक रहे हैं।''

''इसका अर्थ ये है कि हम सुदास को सरलता से पराजित करके अपने वंश को विधिवत विस्तार देख सकते हैं।'' तरूण कुरू अब अत्यधिक उत्साहित था।

''नहीं वत्स कुरू जितना सरल तुम समझ रहे हो, इतना है नहीं। तुम सुदास की चपलता से अनभिज्ञ हो इसलिए इतने उत्साहित हो।'' संवरण के मन का भय अभी भी यथावत था।

''तुम्हारा भय अपने स्थान पर ठीक है संवरण। सुदास को निर्बल समझना मूर्खता होगी। किन्तु मेरे पास एक योजना है।'' कहकर वशिष्ठ आसन पर बैठ गये।

''कैसी योजना?'' संवरण के स्थान पर उसके पुत्र कुरू ने पूछा।

''मैं एक याचक की भांति सुदास के समीप जाऊंगा।'' वशिष्ठ आसन पर बैठे नेत्र मूंदे गंभीरता से बोल रहे थे। ''जितना मैं सुदास के हृदय को जानता हूँ वो मेरी याचना स्वीकार करके मुझे पुर में सम्मान समेत रहने देगा। मैं वहां मदयंती को वश में करके उसे सुदास के विरूद्ध कर दूंगा और फिर मैं मदयंती के द्वारा एक निश्चित तिथि को सुदास एवं उनके वंशजों के भोजन में निष्क्रिय करने वाली औषधि मिलवा दूंगा।'' वशिष्ठ अपनी कुटिल योजना के बारे में बोलते जा रहे थे और पराशर, संवरण एवं कुरू ध्यान से उनकी ओर देख रहे थे। वशिष्ठ ने नेत्र खोलकर पराशर, संवरण, कुरू पर दृष्टि डाली एवं पुनः बोले, ''तुम तीनों तृत्सुपुर के बाहर उस तिथि की प्रतीक्षा करोगे। जब तृत्सुपुर निद्रामग्न होगा तो मैं मुख्यद्वार खुलवा दूंगा।''

वशिष्ठ की योजना सुनकर संवरण का भय जाता रहा और कुरू के मुख पर उत्साह जाग उठा। संवरण एवं कुरू की भाव भंगिमा देखकर पराशर एवं वशिष्ठ के होंठों पर मुस्कान नृत्य कर उठी .. एक कुटिल मुस्कान।

***

''आपके हृदय में शक्ति की मृत्यु का विषाद शेष न रहा महामुनि! आपका हृदय अत्यन्त महान है। और एक मैं हूँ जो ऐसे सहृदयी मुनि के समक्ष बैठकर वार्ता भी नहीं कर सकता।'' रूग्ण शय्या पर लेटे सुदास ने मुनि वशिष्ठ से कहकर उठने का प्रयास किया।

वशिष्ठ अपने आसन से उठकर सुदास को पुनः शय्या पर लिटाते हुए बोले, ''महान तो आप है राजन सुदास! जो आपने इतने मतभेदों के पश्चात भी अपने पुर में हर्म्य की व्यवस्था की। और मेरा मार्गदर्शन पुनः स्वीकार किया।'' वशिष्ठ ने आगे कहा, ''अभी तुम विश्राम करो सुदास, देखना तुम शीघ्र ही मेरी बनाई औषधियों से स्वस्थ हो जाओगे। मैंने मदयंती को समझा दिया है, वो व्यवस्था कर देगी।''

''मदयंती को क्यों कष्ट दे रहे हैं महामुनि। मेरी सेवा के लिए जुहिला यहां उपस्थित है। आप नहीं जानते कि सुदेवी की मृत्यु के पश्चात यदि जुहिला असुरग्राम से तृत्सुग्राम में रहने के लिए न आई होती तो आज इस बार यहां आप मुझे जीवित न पाते।''

सुदास के मुख से जुहिला का नाम सुनकर वशिष्ठ का हृदय कसैला हो गया किन्तु होंठों पर मुस्कान लाकर बोले, ''सुदास, प्रेम जीवन को प्राण देता है कदाचित जुहिला तुम्हें अत्यन्त प्रेम करती है। सो ठीक है, तुम विश्राम करो मैं अन्य कार्य देखता हूँ।''

''जी महामुनि ठीक है।'' कहकर सुदास ने नेत्र बन्द कर लिये और वशिष्ठ होंठों पर कुटिल मुस्कान लिए अपने हर्म्य की ओर निकल गये।

***

''अरे मदयंती! तुम यहां, कब से प्रतीक्षा कर रही थी मेरी?''

वशिष्ठ जब अपने हर्म्य में पहुंचे तो मदयंती एक गवाछ के पास खड़ी थी। वशिष्ठ को आया देखकर वह बोली, ''प्रणाम महामुनि, दासी ने कहा आप मिलना चाहते हैं, तो मैं आपसे मिलने आ गई फिर आपको यहां न पाकर जाना चाहती थी कि गवाक्ष के बाहर क्रीड़ा करते बालकों पर दृष्टि पड़ गई। सो ठहर कर देखने लगी।''

वशिष्ठ के हर्म्य का गवाक्ष पीछे की ओर खुलता था, जहां समतल भूमि में बालक क्रीड़ा करने आते थे। सुदास की दृष्टि समदर्शी थी। अतः वहां पीतकेशी एवं कृष्णवर्णी बालकों को समानता के साथ खेलने की अनुमति थी।

मदयंती की बात सुनकर वशिष्ठ भी गवाक्ष के समीप आ खड़े हो गये। बाहर बालक क्रीड़ा कर रहे थे। उनमें से कुछ मल्ल युद्ध का अभ्यास कर रहे थे। जब एक कृष्णवर्णी ने एक पीतकेशी बालक को दांव लगाकर चित कर दिया तो मदयंती के होंठों से स्वर्णतिरेक में निकला ''वाह!''

''देवी मदयंती मुझे लगा आप 'वाह' के स्थान पर 'आह' करेंगी।'' वशिष्ठ अपनी वाणी में अतिरिक्त कोमलता लाकर बोले।

''आह तो दुख का द्योतक है।'' मदयंती वशिष्ठ की बात का अर्थ न समझ कर बोली, ''जबकि उस बालक ने क्रीड़ा में जो दांव लगाया, उससे वो 'वाह' का अधिकारी था।''

''कृष्णवर्णियों के ऐसी ही दांव कभी 'आह' कहने का अवसर भी नहीं देंगे।'' वशिष्ठ गवाक्ष से हटकर आसन पर बैठते हुए बोले।

''आप तो सदैव स्पष्ट कहने में विश्वास रखते हैं, फिर आज ये अबूझ बातें क्यों महामुनि?'' मदयंती वशिष्ठ को सोम का पात्र देते हुए बोली।

''शीघ्र ही हम आर्यों के लिए ये सोम दुष्कर हो जायेगा।'' वशिष्ठ ने मदयंती से सोम पात्र ले लिया।

''और जबकि इन्द्र की कृपा से तृत्सुपुर की भूमि सोम लता से भरी पड़ी है।'' मदयंती भी अब अपने आसन पर बैठ चुकी थी।

''जबकि इन्द्र स्वंय रावण पुत्र से पराजित होकर अशक्त हो चुके हैं।''

''कृपया स्पष्ट कहे महामुनि, आपकी अबूझ बातें मेरा हृदय उद्वेलित कर रही है।''

''ठीक है, फिर मेरी बात ध्यान से सुनो देवी।'' वशिष्ठ सोम का घूंट लेकर बोले, ''शीघ्र ही कृष्णवर्णी इस तृत्सुपुर पर अधिकार स्थापित कर लेंगे और हम आर्यों को दास बना लेंगे। तुम शीघ्र ही जुहिला की दासी बनोगी। कृष्णवर्णियों ने पूरी योजना बना ली है।''

''नहीं महामुनि, आपको कुछ भ्रम हुआ है या संभवतः आपको स्मरण नहीं जुहिला मेरे पति सौदास की माता है।''

''देवी मदयंती अभी तुम पुत्रहीन हो इसलिए तृत्सुपुर में तुम्हारा कोई विशेष स्थान नहीं। जुहिला तृत्सुपुर पर अधिकार के बाद किसी कृष्णवर्णी को यहां का अधिकार सौंप देगी। उसके बाद हम आर्यों की दशा क्या होगी तुम कल्पना नहीं कर सकती। जबकि सुदास एवं सौदास सभी कृष्णवर्णियों से विशेष प्रेम करते हैं इसलिए वे संभवतः कृष्णवर्णियों को ऐसा करने से न रोके।''

''फिर कृष्णवर्णियों को रोकने का क्या उपाय है महामुनि?''

''देवी तुम्हारा पुत्रवती होना आवश्यक है जो हमारी योजना के पश्चात इस तृत्सुपुर का राजा बन सके।''

''किन्तु मेरे पति सौदास मेरे प्रति उदासीन है।'' कहकर मदयंती ने अपने नेत्र झुका लिए।

''तो तुम्हे नियोग से पुत्र प्राप्त करना होगा।''

''नियोग .. पर किसके साथ महामुनि?''

''यदि देवी चाहे तो उनके एवं आर्यों के कल्याण हेतु ये वशिष्ठ सज्ज है।''

महामुनि की बात सुनकर मदयंती ने अपने झुके नेत्र उठाकर वशिष्ठ की ओर देखा। वशिष्ठ के रक्तिम नेत्र देखकर मदयंती के नेत्रों में भी लाली आ गई।

***

''राजन तृत्सुपुर के समीप संवरण का अपनी सेना के साथ आना चिंताजनक है।'' जुहिला पात्र में औषधि का घोल बनाते हुए बोली।

''इसमें चिंतित होने की कोई बात नहीं जुहिला। वे उन लोगों से महामुनि वशिष्ठ भेंट को गये है। शीघ्र ही हमें उनकी मंशा का पता चल जायेगा।'' सुदास ने जुहिला के हाथ से औषधि लेकर उसका पान किया। औषधि की कड़वाहट से सुदास के मस्तक पर सलवटें आ गई।

''किन्तु मुनि पुत्र पराशर भी उनके साथ हैं।'' जुहिला ने शंका भरे स्वर में कहा।

''तुम व्यर्थ ही चिंतित हो जुहिला, अब मैं भी स्वस्थ्य हूँ। इस समय मदयंती के गर्भधारण करने का उत्सव मनाना है। तुम उसकी तैयारियां करो।''

कहकर सुदास अपने कक्ष से निकल गये और जुहिला यह सोचते बैठी रही कि - 'देव करे सब ठीक हो।'

न जाने क्यों उसे कहीं कुछ ठीक नहीं लग रहा था। न जाने क्यों उसे किसी षड्यंत्र की गंध आ रही थी। न जाने क्यों उसे मदयंती के गर्भधारण से प्रसन्नता नहीं हो रही रही थी। न जाने क्यों उसे मदयंती का व्यवहार परिवर्तित लगा रहा था।

किसी आशंका से जुहिला ने भयभीत होकर नेत्र बन्द किये और उसके होंठों ने ये शब्द बुदबुदाये, ''हे शिश्नदेव रक्षा करना।''

***

तृत्सुपुर में छोटा सा आनन्द उत्सव है। मदयंती ने गर्भधारण किया है। वशिष्ठ ने स्वयं अपने होने वाले पुत्र के कल्याण के लिए यज्ञ किया है। इस यज्ञ में सम्मिलित होकर पराशर, कुरू एवं संवरण पुनः तृत्सुपुर के बाहर अपनी सेना के समीप लौट गये। कल सविता उदय के साथ वे अपने ग्राम की ओर निकल जायेंगे। जहां तरूण पराशर उनके लिए यज्ञ करेंगे। महामुनि वशिष्ठ के प्रयास से आज सुदास की संवरण से भेंट हुई। दोनों में कटुता कम हुई। सुदास ने कुरू को आशीर्वाद भी दिया।

उत्सव के पश्चात सुदास अपने हर्म्य में जाने से पूर्व वशिष्ठ से मिलकर उनको धन्यवाद देने गया। महामुनि को बस इसी अवसर की तलाश थी। सुदास के आते ही उन्होंने उसे सोम का पात्र देते हुए बोले, ''लो राजन, ये सोम पियो, ये विशेष है। स्वयं इन्द्र भी इसके लिए लालयित रहते हैं। इसे विशेष विधि द्वारा मैंने मदयंती के हाथों स्वयं बनवाया है।''

''जी अवश्य महामुनि'' कहकर सुदास ने सोम पान किया और फिर मुनि को प्रणाम कर अपने कक्ष की ओर चला गया। महामुनि भी तीव्रता से अपने कक्ष की ओर बढ़े।

''मदयंती वशिष्ठ के कक्ष में प्रतीक्षारत थी। वशिष्ठ को देखते ही बोली, ''कहां रह गये थे महामुनि! मुझे शीघ्र ही अपने कक्ष में पहुँचना है। सौदास वहां मेरी प्रतीक्षा कर रहा होगा।''

''बस सुदास से मिलकर आ रहा हूँ'' वशिष्ठ ने विजयी भाव से कहा।

''इसका अर्थ, योजना पूर्ण होने में संदेह नहीं है।'' मदयंती मुस्कराई।

''हाँ, रात्रि के दूसरे पहर पराशर असुर ग्राम पर आक्रमण करके अपने राक्षसमेध यज्ञ का आरम्भ करेगा और हम तृत्सुपुर के द्वार खोलकर संवरण एवं कुरू के द्वारा इन असुर प्रेमियों का अन्त करेंगे।''

''ठीक है, फिर मैं जाती हूँ'' मदयंती जाने को उद्यत हुई।

''अरे हाँ, वो निष्क्रिय करने वाली औषधि सौदास एवं सोमक को भी दे दी। जो मैंने सोमरस के साथ सुदास को दी है।''

''हाँ, न केवल सौदास एवं सोमक अपितु समस्त तृत्सु योद्धाओं के उदर में वो औषधि पहुंच गई है।'' कहकर मदयंती वहां से जाने लगी गई और उसे जाते हुए देखकर वशिष्ठ मुस्कराकर बोले, ''स्वास्ति देवी, तुम्हारा कल्याण हो।''

***

समस्त तृत्सुजन निंद्रा का आनन्द ले रहे थे। केवल तीन लोगों को छोड़कर - मुनि वशिष्ठ कभी-कभी गवाक्ष से बाहर चन्द्र की गति देखते हुए अपने कक्ष में व्यग्रता से टहल रहे थे।

मदयंती निंद्रा मग्न सौदास के समीप लेटी थी किन्तु उसके नेत्र गवाक्ष से बाहर चन्द्र की गति पर स्थिर है।

जुहिला से न जाने क्यों नींद रूठी थी, ये बात जुहिला समझ नहीं पा रही थी। जब लाख प्रयासों के पश्चात भी उसे नींद न आई तो वो सोपान पर चढ़कर अपने कक्ष की अटारी पे आ गई।

इधर जुहिला अटारी पर आई, उधर चन्द्र की गति देखकर मदयंती सौदास पर दृष्टि डालकर धीरे से उठी और अपने कक्ष से बाहर आ गई। कक्ष से बाहर आते ही उसे महामुनि वशिष्ठ मिल गये। हाथ में परशु लिये मदयंती ने पूछा, ''समय हो गया?''

''हाँ तुम जाकर द्वार खोलो। आज वशिष्ठ के प्रतिशोध का आरम्भ होगा।'' कहकर वशिष्ठ तीव्र गति से वहां से निकले और मदयंती द्वार की ओर बढ़ी।

ठण्डे पवन में टहलते हुए जुहिला की दृष्टि दूर असुरग्राम की ओर उठी तो वहां उसे अग्नि की लपटों के साथ कोलाहल सुनाई पड़ा। जुहिला ने ध्यान से देखने एवं सुनने का प्रयास किया तो उसे भागते-चीखते-चिल्लाते असुरों की आवाज सुनाई दी। जुहिला समझ गई कि कुरू सेना ने असुरग्राम पर आक्रमण कर दिया है। घबराकर जुहिला सुदास को सचेत करने के लिए नीचे भागी। तभी उसे तृत्सुग्राम में भी कोलाहल सुनाई पड़ा।

जुहिला ने अभी उतरने के लिए सोपान पर अपना पहला पैर रखा ही था कि उसके कानों में वशिष्ठ का कठोर स्वर सुनाई पड़ा, ''काट डालो सभी तृत्सुओं को, दास बना लो उनकी स्त्री एवं बालकों को। और सुदास! आज तुझे शक्ति वध का उचित दण्ड मिलेगा।''

वशिष्ठ की स्वर सुनकर जुहिला ने अपना बढ़ा पैर वापस खींच लिया। उसकी शंका सत्य सिद्ध हो गई। वह तुरंत अपने कक्ष की दिशा में भागी। जुहिला के कक्ष से एक गुप्त मार्ग तृत्सुग्राम से सीधा बाहर जाता था। कभी सुदास ने ये मार्ग बनवाया था, शासन व्यवस्था पर गुप्त नियंत्रण रखने के लिए। दैवयोग से आज सुदास उसी कक्ष में था। जुहिला जानती थी वशिष्ठ सुदास को उसके कक्ष में ढूंढ रहे होंगे। वह चुपके से अपने कक्ष में पहुंची और सुदास को धीरे से जगाने

की कोशिश की। पर वह तो औषधि के प्रभाव से मूर्छित अवस्था में था। यह देखकर जुहिला का हृदय जोर से धड़कने लगा कि अब क्या होगा? फिर भी उसने अपने आपको तत्काल ही संभाल लिया और साहस के साथ सुदास के मूर्छित शरीर को वहां से निकालने का प्रयास करने लगी।

उसने कभी सौदास को सिखाने के लिए उसके बाल्यावस्था में एक लकड़ी की गाड़ी बनाई थी, उसमें छोटे-छोटे चक्र थे। औषधि के प्रभाव से निष्क्रिय सुदास को उस पर लिटाकर गाड़ी खींचते हुए जुहिला गुप्तमार्ग की ओर बढ़ी, तभी उसे सौदास का स्मरण हुआ, परन्तु उसने तुरन्त ही एक कठोर निर्णय लिया। कि वह अपने पुत्र का बलिदान करके सर्वप्रथम उस व्यक्ति के प्राण की रक्षा करेगी जो समानता एवं सबके बराबर अधिकार की कामना करता हो।

***

''समस्त तृत्सुपुर में ढूंढ लिया, किन्तु सुदास कहीं भी नहीं मिला।'' नेत्र बन्द किये वशिष्ठ के समक्ष पहुंचकर कुरू ने कहा।

''और वो दुष्ट कृष्णवर्णी स्त्री जुहिला?'' वशिष्ठ के नेत्र थोड़े और सिकुड़ गये।

''वो भी नहीं?'' कुरू ने संक्षिप्त उत्तर दिया।

''यदि सुदास जीवित रह गया तो ..?'' संवरण का भय फिर से जाग्रत हो उठा।

संवरण की बात सुनकर वशिष्ठ ने रक्तिम नेत्र खोलकर कहा, ''चिंतित मत होईये संवरण। यदि वो जीवित भी रहा तो औषधि के प्रभाव से कभी भी शय्या से न उठ सकेगा।'' कहकर वशिष्ठ ने कुरू की ओर देखकर पूछा, ''पराशर के राक्षसमेध यज्ञ की कोई सूचना?''

''कृष्णवर्णियों को ढूंढ़-ढूंढ़ कर उनका वध किया जा रहा है।'' कुरू ने कहा। उसकी बात सुनकर वशिष्ठ बोले, 'अति उत्तम! और मुनि नारायण की कोई सूचना?''

''वे पधार चुके है, आपसे भेंट की प्रतीक्षा कर रहे हैं।'' कुरू की बात सुनकर वशिष्ठ उठते हुए बोले, ''उत्तम, शीघ्र ही सभा बुलाये, हम उनसे वहां मिलेंगे। और हाँ, बन्दी सुदास जनों को भी वहां उपस्थित किया जाये।''

***

सभा में वशिष्ठ उच्च स्थान पर विराजमान थे। उनके दाईं ओर संवरण एवं पराशर। बाईं ओर कुरू एवं नारायण मुनि विराजे हैं।'' उनके सामने अन्य कुलीन ब्राह्मण एवं क्षत्रिय, अरून्धती एवं मदयंती आदि स्त्रियां भी उचित स्थानों पर बैठी है।

कल रात्रि हुए अचानक आक्रमण में तृत्सुओं का पूर्ण विनाश हो गया है। देह निष्क्रिय करने वाली औषधि के सेवन से वे आक्रमण का प्रतिकार करने में अक्षम रहे। और संवरण कुरू के सैनिकों ने उनका नृशंसतापूर्वक नाश कर दिया। तृत्सु स्त्रियों को अभी भी ढूंढ़-ढूंढ़ कर बलात्कार करके उन्हें दासी बनाया जा रहा है। तरूणों का वध किया जा रहा है। शिशु दास बनाये जा रहे हैं। औषधि के प्रभाव से निष्क्रिय सौदास एवं सोमक आदि सुदास के पुत्र बन्दी बनाकर सभा में उपस्थित किये गये हैं। जबकि सुदास को जुहिला गुप्त मार्ग से किसी अनजान दिशा में ले गई।

वशिष्ठ ने एक क्रूर दृष्टि बन्दियों पर डालकर कहना आरम्भ किया, ''तो इन्द्र एवं वरूण की कृपा से मेरे पुत्र शक्ति के वध के प्रतिशोध अब जाकर आरम्भ हुआ।''

''आरम्भ! किन्तु महामुनि प्रतिशोध तो पूर्ण हो चुका है, सुदास वंशी या तो मर चुके हैं या बन्दी बना लिये गये हैं।'' सभा में उपस्थित एक जन ने प्रश्न किया।

आसन से उठकर वशिष्ठ, सौदास एवं सोमक के समीप आकर उन पर एक कटु दृष्टि डालकर बोले, ''इन दुष्टों से युगों-युगों तक प्रतिशोध लिया जायेगा। इन्हें शूद्र बनाकर, इन्हें दास बनाकर। मुनि नारायण एक 'पुरूष सूक्त' की रचना करेंगे, जिसके पश्चात इन्हें शूद्र वर्ण में डाल दिया जायेगा। जिसका कार्य बाकी तीनों वर्ण की सेवा करना होगा। इनका और इनकी पीढ़ियों का उपनयन संस्कार निषेध करके इन्हें शिक्षा से वंचित कर दिया जायेगा। शिक्षा के अभाव में इनके पास दास बनने के अतिरिक्त कोई मार्ग शेष न रहेगा। अन्य आर्यजन इसका विरोध न करे इसलिए मदयंती से उत्पन्न होने वाले मैं अपने पुत्र को पांचाल का राजा बनाऊँगा एवं कुरू को बाकी राज्य दूंगा। कालान्तर में ये दोनों राज्य कुरू पांचाल नाम से जाने जायेंगे। और ये सुदासवंशी, सृष्टि के अन्त तक दास बनाये जाते रहेंगे। अब मुनि नारायण तुम्हें संक्षेप में 'पुरूष सूक्त' की व्याख्या बतायेंगे।''

आज्ञा पाकर नारायण मुनि पुरूष सूक्त की व्याख्या करते हुए बोले, ''एक 'विराट पुरूष' जिसके चार सिर, हजार आँखें एवं हजार पैर है। वह चारों ओर भूमि को ढांक कर दस अंगुल में अवस्थित होता है। यही भूत एवम् भावी है। ये अमृत्व का स्वामी है, जो अन्न से अतिरोहण करता है। पुरूष रूपी हवि से देवों ने जिस यज्ञ को पसारा है। उस यज्ञ का भी बसन्त था, ईंधन ग्रीष्म, हवि शरद थी। उससे ही अश्व एवं मुख में दोनों ओर दंत वाले प्राणी जन्में। गौ, अज-अवि उससे उत्पन्न हुए। उसके मुख से ब्राह्मण, दोनों बाहों से क्षत्रिय, जांघों से वैश्य और पैरों से शूद्र जन्मे।''

''ये किस कपोल कल्पित देव की बात कर रहे हो जिसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। जन तुम्हारे बनाये इस काल्पनिक देव एवं इससे सभी जनों की उत्पत्ति को कभी नहीं मानेंगे।'' सौदास, नारायण के पुरूष सूक्त की व्याख्या सुनकर बंधनों में कसमसाते हुए बोला।

''अवश्य मानेंगे।'' वशिष्ठ बोले, ''हम पीढ़ी दर पीढ़ी तुम्हारे वंशजों का उपनयन संस्कार नहीं होने देंगे। इससे तुम यज्ञोपवीत धारण न कर सकोगे। यज्ञोपवीत के अभाव में तुम सब वेद अध्ययन से वंचित हो जाओगे। इससे तुम्हारी सामाजिक प्रतिष्ठा भंग हो जायेगी। ये प्रक्रिया सदैव चलती रहेगी और तुम्हारे वंशज सृष्टि के अंत तक शूद्र बनकर हमारे दास रहेंगे। अभी विद्रोह न हो इसलिए मैं मदयंती से उत्पन्न अपने पुत्र को राजा बना दूंगा। तुम और तुम्हारे वंशज युगों-युगों तक अभिशप्त होकर शूद्र ही रहोगे।''

''दुष्ट मदयंती तू भी इस षड्यंत्र भी सम्मिलित थी।'' सौदास विवशता से चीखा।

''मुनि वशिष्ठ यह अन्याय है।'' सोमक बंधनों में कसमसाया।

''सैनिकों ले जाओ इन चीखने वाले प्राणियों को यहां से। और दास बनना स्वीकार न करे तो वध कर देना।'' यह कहकर वशिष्ठ ने सभा विसर्जन का संकेत करके हाथ के संकेत से बन्दी तृत्सुजनों के वध की आज्ञा दे दी।

***

''देवी समीप के वन में एक आश्रम में भगवती रहती है। संभवतः उनकी कृपा दृष्टि से आपके रूग्ण स्वामी को स्वास्थ्य लाभ मिल जायेगा।'' ग्रामजन एक रूग्ण एवं अशक्त पीतकेशी एवं एक कृष्णवर्णी प्रौढ़ स्त्री पर अपनी दृष्टि डालते हुए बोला।

''मैं कल भोर में ही भगवती के दर्शन हेतु जाऊँगी। क्या मेरे स्वामी को वहां तक जाने हेतु एक वृषभ गाड़ी की व्यवस्था हो जायेगी।'' कृष्णवर्णी प्रौढ़ स्त्री ने निवेदन भरे स्वर में कहा।

''आप चिंता न करें। कल प्रातः मैं स्वयं ही लेकर आ जाऊँगा। अब मैं चलता हूँ।'' कहकर वो ग्रामजन वहां से जाने को हुआ फिर कुछ सोचकर मुड़ते हुए बोला, ''देवी आप कृष्णवर्णी और आपकी स्वामी पीतकेशी?''

ग्रामजन का प्रश्न सुनकर वो कृष्णवर्णी स्त्री के मुख पर भय छा गया। जब से तृत्सुपुर में सुदास का शासन समाप्त हुआ है तब से समस्त आयवर्त में आर्य-अनार्य का विवाह निषेध हो गया है। यदि कोई ऐसा करता है तो उन्हें मृत्युदण्ड दिया जाता है।

ग्रामजन के प्रश्न का उत्तर देते हुए स्त्री बोली, ''ये हमारे स्वामी तब बने थे जब सुदास आर्यवर्त के राजा थे। अब ये प्राणांत तक हमारे स्वामी रहेंगे फिर ये प्राणांत भले ही वशिष्ठ एवं कुरू के सैनिकों द्वारा ही क्यों न हो।''

''न न देई!'' ग्रामजन स्त्री को देवी के स्थान पर देई कहकर सम्बोधित करते हुए बोला, ''आप इस ग्राम में अभी सुरक्षित है, क्योंकि हम पणि है और सुदास के बाद कुरू एवं वशिष्ठ की आज्ञाओं का मैं ही नहीं अपितु सभी जन विरोध करते हैं। किन्तु देई हमने जिस भगवती के बारे में बताया वो पीतकेशी है। संभवतः वहां आप दोनों का जाना अहितकर हो।''

''मुझे लगता है जो स्त्री भगवती पद प्राप्त कर लेती है, वो इन बातों से ऊपर उठ जाती है। अतः हित हो या अहित, हम अपने स्वामी के स्वास्थ्य लाभ के लिए उनके समीप अवश्य जायेंगे।''

''जैसी आपकी इच्छा देई'' कहकर वो पणि होंठों में बुदबुदाया ''हे शिश्नदेव! तू पुनः उस महान राजा सुदास का राज्य स्थापित कर ..'' कहते हुए वो वहां से चला गया।

उस ग्रामजन को जाते देखकर उस स्त्री के नेत्रों से अश्रु ढलके और उसके होंठों से पीड़ा के स्वर निकले, ''हे सुदास के चाहने वाले, यहां इस रूग्ण शय्या पर सबका भला चाहने वाला सुदास ही तो है, जिसके वंशजों को पुरोहितों के षड्यंत्रों ने प्रतिष्ठा विहीन बना दिया है और जो कुटिल चालों एवं विषाक्त औषधियों के प्रभाव से पिछले पन्द्रह वर्षों से शय्या पे अडोल अवस्था में लेटा है।''

***

भगवती, सविता उदय की प्रथम किरण के साथ अपनी पर्ण कुटी से बाहर निकली और उदय होते सविता के सामने हाथ जोड़कर नेत्र मूंदकर के खड़ी हो गई।

उनकी देह पर कंधों से लेकर पांव तक एक पीली ऊनी द्रापि है एवं केशों को बांधते हुए कापर्दी। कंठ में ताजे पुष्पों का हार है। वो आयु में प्रौढ़ है किन्तु मुख पर अपूर्व तेज है।

हाथ जोड़ते नेत्र मूदें भगवती होंठों में बुदबुदा रही है -

''हे देव सविता आप तो जानते हैं मेरे हृदय में भगवती कहलाने की कोई इच्छा नहीं है। मैं तो उसके मिलने और उसके बिछुड़ने से लेकर अब तक उसके प्रेम में हूँ और उसके प्रेम को जीते हुए यमलोक सिधरना चाहती हूँ। बस देव एक बार मेरी ये इच्छा पूरी कर दो मुझे उसका मुख दिखा दो जिनके मुख ने मुझे प्रेम सिखाया, प्रेम की परिभाषा बताई।''

''भगवती जलपान सज्ज है, चलकर ग्रहण कर लीजिये।'' सेविका ने सविता के सामने खड़ी मौन भगवती से कहा।

''आ.हाँ..'' कहकर भगवती पर्ण कुटी की ओर मुड़ी पर तभी वृषभ के रंभाने एवं गाड़ी के चक्रों के चरमराने की ध्वनि उनके कानों मे पड़ी। भगवती ने देखा आश्रम के द्वार पर एक वृषभ गाड़ी आकर खड़ी थी। गाड़ी हांकने वाले के अतिरिक्त उसमें एक कृष्णवर्णी स्त्री थी एवं उसके साथ कोई मटमैली द्रापि में लिपटा और रूग्ण अवस्था में लेटा हुआ एक पीतकेशी प्रतीत हो रहा था।

''कौन है वे?'' भगवती ने सेविका से पूछा। और सेविका ''जी पता करती हूँ भगवती।'' कहकर वृषभ गाड़ी की ओर बढ़ गई।

सेविका वृषभ गाड़ी के समीप जाकर उस पर बैठी स्त्री से बात करके वापस भगवती के समीप आकर बोली, ''कोई रूग्ण है, स्वास्थ्य लाभ की आशा से भगवती का आशीर्वाद चाहता है।''

''हे देव! मैं अपने प्रेम की प्रतीक्षा में हूँ और तू मुझे भगवती बनाये रखना चाहता है!'' मन ही मन में इन बातों को कहकर वह सेविका से बोली, ''ठीक है, उन्हें अतिथियों के लिए नियत पर्णकुटी में ले जाकर उनके जलपान की व्यवस्था करो। मैं कुछ समय पश्चात उनसे वहीं आकर भेंट करती हूँ।''

जब भगवती अतिथियों के लिए नियत पर्णकुटी के समीप पहुँची तो रूग्ण व्यक्ति के पास आर्य स्त्री सिर झुकाये मौन बैठी थी। वो अपने विचारों में इतनी तल्लीन थी कि उसे भगवती के पदचापों की आहट भी सुनाई न दी।

''किन विचारों में खोई हो देई?'' स्वर सुनकर उस कृष्णवर्णी स्त्री ने हड़बड़ाकर नेत्र उठाये तो सामने भगवती खड़ी थी।

''जी कुछ नहीं .. भगवती आपने मुझे देई कहा?'' वह संभलकर उठते हुए बोली।

''हाँ, क्योंकि देह एवं मुख से तुम किरात लगती हो और किरातों में तो 'देई' का सम्बोधन सम्मान का सूचक है।'' भगवती के रक्तिम अधरों पर स्निग्ध मुस्कान थी।

''आप पीतकेशी होकर एक कृष्णवर्णी को सम्मान दे रही है, जबकि सुदास के पश्चात अब ये सम्मान की बात तो केवल स्वप्न की बात रह गई है।''

''सु.दास!'' सुदास नाम सुनकर उसका नाम धीरे से होंठों से दोहराकर भगवती की देह कांप गई। उन्हें यूँ निर्बल देख कृष्णवर्णी स्त्री बोली, ''क्या हुआ भगवती?''

''कुछ नहीं!'' भगवती संभलकर बोली, ''क्या रूग्णजन तुम्हारे पति है?''

''हाँ'' स्त्री ने संक्षिप्त में बताया।

''कब से रूग्ण है?'' कहकर भगवती ने पर्ण कुटी में प्रवेश किया।

''पन्द्रह वर्षों से'' कहकर उनके पीछे-पीछे वह स्त्री भी भीतर आ गई, जहां पीतकेशी सिर से पांव तक द्रापि में लिपटा हुआ लेटा था। भगवती उसके समीप बैठकर कृष्णवर्णी स्त्री से बोली, ''तनिक इनका मुख खोलो।''

स्त्री ने मुख खोला और ... मुख खुलते ही भगवती के खुले नेत्र और खुल गये। होंठ थरथराने लगे। उसने कांपते हाथ की अंगुलियों से पीतकेशी का मुख छुआ। स्पर्श से पीतकेशी की देह थरथराई। उसके नेत्र खुल गये। वह अपने पास भगवती को बैठा देखकर आश्चर्य से टूटते शब्दों में बोला, ''अविका!''

''सुदास..!'' भगवती के होंठ भी कांपे। कृष्णवर्णी स्त्री कभी सुदास तो कभी भगवती को आश्चर्य से देख रही थी। उसे यूँ आश्चर्यचकित देखकर अविका ने उससे पूछा, ''तुम जुहिला हो देई?''

''हाँ किन्तु आप मुझे कैसे जानती है?'' कृष्णवर्णी अर्थात जुहिला के मुख पर आश्चर्य के भाव थे।

''जिसने भगवती पद प्राप्त कर लिया हो उससे कुछ छिप सकता है क्या?'' सुदास ने मद्धिम स्वर में कहा। अविका को समीप पाकर उसकी रूग्ण देह में शक्ति का संचार हो गया।

''सुदास कम से कम तुम मुझे भगवती न कहो।'' अविका ने उसका हाथ पकड़ा।

''नहीं कहूँगा।'' कहकर सुदास कुछ क्षण के लिए मौन हो गया। फिर थोड़ा विचार करके बोला, ''हमारा भाग्य देखो! मैं जब पहली बार तुमसे मिला था। तब भी मैं अशक्त था और आज भी अशक्त एवं रूग्ण हूँ।''

''देव कल्याण करेंगे सुदास।'' भगवती अविका ने सुदास का हाथ पकड़कर कहा।

''कौन देव, देवी अविका? वो इन्द्र जो मेघनाद से पराजित होकर स्वयं निःसहाय है, या फिर वो वरूण जो स्वंय को वशिष्ठ का पिता मानकर उसके अन्याय को रोकने में असमर्थ है।''

''नहीं सुदास, शिश्नदेव कल्याण करेंगे।''

''अविका तुम आर्य होकर एक अनार्य देव से कल्याण कि कामना कर रही हो!''

''हाँ, क्योंकि तुम्हारे साथ अन्याय करने वाले से शिश्नदेव ने न्याय किया है।''

''कैसा न्याय? क्या शिश्नदेव को हमारा ध्यान है?'' अविका की बात पर जुहिला के प्रश्न पर सुदास बोला, ''देवी अविका ये जुहिला है, मेरे हतभाग्य पुत्र सौदास की माता।''

''जानती हूँ सुदास, और मैं इनकी ऋणी भी हूँ कि इनके कारण मुझे मृत्यु से पूर्व आपके दर्शन हुए।'' अविका ने कहा।

''शिश्नदेव ने क्या न्याय किया?'' जुहिला मानो कोई अन्य बात सुनना ही न चाहती हो सिवाय इसके कि सुदास जैसे कृपालु राजा से अन्याय करने वाले वशिष्ठ को शिश्नदेव ने क्या दण्ड दिया?

''शिश्नदेव ने, शिव के रूप में सती से विवाह किया था।'' अविका की बात पूरी होते ही जुहिला बोली, ''हाँ जानती हूँ भगवती। पर ये बताओ शिश्नदेव ने वशिष्ठ को क्या दण्ड दिया?'' जुहिला की उत्सुकता देखकर अविका बोली, ''धैर्य रखो सब बताती हूँ।''

जुहिला ने मौन होकर सिर हिलाकर अपनी सहमति दी। सुदास ने नेत्र के संकेत से जुहिला को अविका की बात धैर्य से सुनने को कहा।

''शिश्नदेव की पत्नी सती एक आर्य की पुत्री थी और वे शिश्नदेव से प्रेम करती थी और वह शिश्नदेव से विवाह करना चाहती थी। किन्तु कोई प्रतिष्ठित आर्य कन्या, अनार्य देव से विवाह करे ये आर्यों एवं देवों को स्वीकार नहीं था। किन्तु फिर भी सती ने शिश्नदेव से विवाह किया।''

''सती को नमन।'' अविका की ओर देखकर जुहिला बोली।

''नहीं जुहिला'' अविका आगे बोली, ''आर्य इस विवाह से प्रसन्न नहीं थे इसीलिए एक उत्सव के बहाने उन्होंने सती को अपने ग्राम में बुलाया। शिश्नदेव किसी कार्य में व्यस्त थे इसलिए जा न सके। वहां आर्यों एवं देवों ने सती को बलात अग्नि के सामने उसका वध कर दिया।''

''ओह, अपने स्वजनों से इतनी क्रूरता।'' जुहिला अपना माथा पकड़कर बोली।

''आज स्वयं के आर्य होने पर लाज आ रही है, इससे तो वशिष्ठ के बनाये हम शूद्र ठीक।'' सुदास ने अपने नेत्र और होंठों को भींचते हुए कहा।

''तुम्हें शूद्र बनाने वाले वशिष्ठ भी वहां उपस्थित थे। शिश्नदेव की पत्नी सती की एक बहन उर्जा से उनका विवाह हुआ था इसलिए वे भी वहां आमंत्रित थे।'' अविका ने आगे की बात बताई।

''इसका अर्थ ये है कि वशिष्ठ हर अन्याय में सम्मिलित होते जा रहे हैं!'' जुहिला मद्धिम स्वर में बोली।

''हाँ, किन्तु ये उनका अन्तिम अन्याय था।'' अविका ने कहा।

''अर्थात'' जुहिला ने जिज्ञासावश पूछा।

''अर्थात..अपनी प्रिय पत्नी सती के वध की सूचना पाकर शिश्नदेव क्रोधित होकर उत्सव स्थल पर पहुँचे और उन्होंने वहां उत्सव भंग करके सती के वध में सम्मिलित हर एक व्यक्ति का वध कर दिया।'' अविका ने कहा।

''अ.अर्थात वशिष्ठ भी..?'' जुहिला के नेत्र चमके।

''हाँ..'' जुहिला के नेत्रों की चमक को बढ़ते हुए देखकर अविका ने कहा, ''शिश्नदेव ने वशिष्ठ का भी वध कर दिया।''

जुहिला का मुख प्रसन्नता से खुला रह गया। वह कुछ कह न सकी।

सुदास धीमे से बोला, ''जब शंबर युद्ध में मैंने अनार्यों के साथ छल किया और देव मन्यमान का वध किया, तो उसने मरते समय मुझसे कहा था कि सुदास जिन आर्यों के लिए तू अनार्यों से छल कर रहा है वही आर्य एक दिन तुझे पद दलित करेंगे और अनार्यों के देव तेरा प्रतिशोध पूर्ण करेंगे। आज देवक मन्यमान की बात सत्य हुई।'' कहकर सुदास मौन हो गया।

''आपके लिए एक और शुभ सूचना है..'' भगवती अविका ने सुदास का सिर सहलाकर कहा।

''क्या?'' सुदास का स्वर अत्यन्त क्षीण था।

''विश्वामित्र ने कोशल के राम द्वारा अहिल्या का उद्धार कर दिया है। अब वे पाषाण कुटी से स्वतंत्र है। शीघ्र ही राम दक्षिण में रामेश्वर के नाम से शिश्नदेव का यज्ञ करके उन्हें अनार्यों के समान आर्यों में पूजित बना देंगे।''

''क्या? आर्य शिश्नदेव का पूजन करेंगे?'' जुहिला आश्चर्यचकित थी।

''हाँ अवश्य .. उनके पास चौथा वर्ण शूद्र बनाये रखने के लिए ये करना ही होगा।'' अविका की बात सुनकर सुदास ने कहा, ''इसका अर्थ वशिष्ठ का कथन सत्य था कि मेरे वंशज एवं जन सृष्टि के अंत तक शूद्र रहेंगे और मैं हतभाग्य इस परिपाटी का **'पहला शूद्र'** हूँ'' कहते-कहते सुदास का कंठ रूंध गया एवं स्वर और क्षीण हो गया।

सुदास की बात सुनकर जुहिला एवं अविका दोनों मौन हो गई। उन्हें मौन पाकर सुदास पुनः क्षीण स्वर में बोला, ''अविका तुमने तो भगवती पद प्राप्त कर लिया है। क्या महान दिवोदास का कुल एवं जन की यही नियति है कि वे सदैव अन्याय करने वालों के दास बने रहेंगे?''

''नहीं सुदास'' अविका गंभीर स्वर में बोली, ''अब से कोई छः शती एवं उसके दो शती के अन्तर में दो महानायक जन्म लेंगे। उनमें से एक राजसी वैभव छोड़कर एक दिन अनोमा नदी को पार करके अपनी तलवार से अपने केस काट कर मुनि बनेगा। वो महानायक अपने ज्ञान के प्रवाह से शूद्रों को शुद्ध करके बुद्ध कहलायेगा।'' अविका की बात सुनकर सुदास मौन रहा किन्तु उसके मुख पर तनिक चमक बढ़ गई थी। कुछ क्षण पश्चात जुहिला ने पूछा, ''हे भगवती! और दूसरा महानायक?''

''दूसरा महानायक ..'' अविका का स्वर मानो इस समय अंतरिक्ष से आ रहा था - ''वो महानायक बुद्ध के दिखाये मार्ग पर चलकर शूद्रों को सबके समान लाकर उनका शोक हरेगा और अशोक कहलायेगा।''

''वशिष्ठ के वध एवं अहिल्या के उद्धार से हृदय को जो शांति मिली थी, वो तुम्हारे इस कथन से पूर्ण हुई अविका। अब मैं शांति से प्राण त्याग सकूंगा।'' सुदास ने हिचकी ली।

''नहीं सुदास, मैं अभी औषधि लाती हूँ'' अविका ने उठने का उपक्रम किया।

''नहीं अविका!'' सुदास ने शक्ति लगाकर अविका का हाथ पकड़ते हुए कहा, ''मैं जानता हूँ कि जब तक बुद्ध एवं अशोक जैसे महानायक पैदा नहीं होते तब तक हम शूद्रों को अथाह कष्ट उठाने हैं। और मैं 'पहला शूद्र' होने के नाते शूद्रों के ये कष्ट देख न सकूंगा .. अविका, जुहिला मुझे विदा दो।'' कहकर सुदास ने फिर से एक हिचकी ली। वह उसकी अन्तिम हिचकी थी।

जुहिला जड़वत और अविका मौन रह गई।

कुछ क्षण बीतने के पश्चात जुहिला ने सिसकारियां लेकर कहा, ''सुदास!'' ठीक उसी समय अविका ने जुहिला के कंधे पर हाथ रखकर कहा, ''नहीं जुहिला! विलाप मत करों क्योंकि अब शूद्रों पर अकारण ही इतने अत्याचार होंगे कि विलाप की देवी भी कांप उठेगी। इसलिए हम जैसो को इन अत्याचारों का प्रतिकार करने वाले महानायकों के आगमन तक यथा शक्ति शूद्रों के दुख हरने होंगे।''

अविका की बात सुनकर जुहिला के होंठों से निकला, ''देवी! एक महानायक का ऐसा अन्त..?'' और फिर वो अविका से लिपट गई। अविका ने भी सिसकती जुहिला को अश्रु भरे नेत्रों से अपने देह में भींच लिया।

***

सुधीर मौर्य : 152